फ़ैसले

मनहर चौहान



धुंधला...धुंधला...!

आँखें खोलते ही भीमा को सब धुंधला दिखाई दिया। क्यों? वह समझ न पाया। धुंधलापन दूर करने के लिए उसने आँखें झपकाईं। धुंधलापन ज्यों-का-त्यों बना रहा। तब उसने अपने सिर को एक झटका-सा दिया।

अगले ही क्षण सिर की एक-एक रग जैसे ऐंठ गई।

जो धुंधला दीख रहा था, वह दीखना ही बन्द हो जाने लगा। अन्धकार...!

भीमा को पता न चला—कब उसने आँखें मूंद लीं।

भीमा को यह भी पता न चला कि उसने दूसरी बार कब आँखें खोलीं।

इस बार चीज़ें काफ़ी साफ़ दिखाई दीं। भीमा ने गौर किया—चारों तरफ स्याह दीवारें...दरवाज़ों की जगह...सूना कमरा...!

कहाँ है भीमा? यहाँ पहुँचा कैसे?

कुछ याद न आया। भीमा को आश्चर्य हुआ—याद क्यों नहीं आ रहा?

अनायास हाथ उठाकर वह अपने चेहरे को छूने लगा। अरे—ये पट्टियाँ क्यों बंधी हैं? और फिर...वेदना के मारे अचानक ही कसमसा उठा।

और, वह युवक! कितना शक्तिशाली था वह युवक, जिसने भीमा को टक्कर देनी चाही थी। नाम के अनुरूप ही, भीमा एक बलिष्ठ व्यक्ति था।

सकी तुलना में वह युवक छछूंदर से ज़्यादा कुछ नहीं था।

लेकिन उसी छछूंदर ने भीमा की वह गत बनाई थी कि...।

पीड़ा और अविश्वास से भीमा का अंग-अंग एक बार फिर सिहर गया।

बॉक्सिंग!

भीमा और उस छछूंदर के बीच बॉक्सिंग हुई थी। कितने-कितने लोग आए थे बॉक्सिंग का वह समारोह देखने। उतने-उतने लोगों की मौजूदगी में भीमा हार गया था...कितनी क़रारी हार...अखाड़े में भीमा बेहोश हो गया था...।

उस छरहरे युवक में ऐसी अद्भुत स्फूर्ति थी कि भीमा चकाचौंध हो गया था। कई बार तो यहाँ तक लग आया था, जैसे उस युवक के दो नहीं, दस हाथ हैं। दसों हाथों से वह भीमा के मोटे चेहरे पर दनादन वार कर रहा है...खून...भीमा का चेहरा सन गया था...ऐसा नहीं कि खून अकेले भीमा का ही निकला हो। उस युवक को भी भीमा ने खून से सान दिया था, लेकिन—

बेहोश कौन हुआ? भीमा कि वह छछूंदर?

आँखें खोलने के साथ सब धुंधला-धुंधला क्यों नज़र आया था—भीमा समझ गया...भीमा की बेहोशी पहली बार दूर हुई है...अखाड़े में बेहोश होकर गिरने के बाद भीमा ने पहली बार आँखें खोलीं...अस्पताल में! सूना, चकाचक सफ़ेद कमरा! दवाओं की गन्ध...डरावनी खामोशी...।

भीमा ने गहरी साँस ली। खूब गहरी साँस।

अपना तमाम चेहरा उसने एक बार फिर छूकर देखा। पट्टियाँ-ही-पट्टियाँ।

जो दरवाज़ा आँखों के सामने ही था, वह खुलने लगा। एक नर्स प्रवेश कर रही थी। सौम्य, मधुर नर्स।

भीमा ने कराहट-भरे स्वर में कहा, "सिस्टर...!"

भीमा ने न पुकारा होता, तब भी वह उसी की ओर बढ़ रही थी मुस्करा रही थी वह। बोली, "तो...आप होश में आ गए...नहीं, नहं उठिए नहीं, लेटे रहिए...अभी आप काफ़ी कमज़ोर हैं।"

कमज़ोर !

भीमा बरबस मुस्करा दिया। भीमा जैसे पहलवान आदमी के लिए 'कमज़ोर' शब्द पहली बार इस्तेमाल किया था किसी ने।

लेकिन क्या सचमुच भीमा को अपनी रग-रग में कमज़ोरी महसूस नहीं हो रही थी ? उस युवक ने भीमा के केवल चेहरे को नहीं, तमाम शरीर को पीसकर रख दिया था।

"सब कहाँ हैं ?" भीमा ने जब यह पूछा, उसे अपनी आवाज़ भी उसी तरह कमज़ोर महसूस हुई, जैसे कि तमाम शरीर।

"सब माने...?"

"मेरे साथी—मेरा मैनेजर, मेरा शिष्य...।" भीमा ने स्पष्ट किया।

"वे अभी-अभी गए हैं। आप तब होश में नहीं थे। आधे घंटे में फिर लौटेंगे, ऐसा कह गए हैं।" नर्स बोली।

भीमा चुप रहा। पूछना चाहता था, 'मैं कुल कितना समय बेहोश रहा ?'—किन्तु पूछा न गया। यदि नर्स ने बताया कि वह बहुत ही ज़्यादा समय तक बेहोश रहा, तो भीमा का दिल टूट जाएगा।

भीमा को यही मान कर चलना चाहिए कि वह मुश्किल से दो मिनट बेहोश रहा।

वह जानता था, केवल दो मिनट में उसे अस्पताल लाकर पलंग पर सुलाया नहीं जा सकता, न उसके सिर पर इतनी पट्टियाँ ही बाँधी जा सकती हैं...।

किन्तु भीमा को यही मानकर चलना चाहिए कि वह मुश्किल से...।

भीमा के होंठों पर फिर से मुस्कान आने लगी— अपने-आपसे झूठ बोलना भी कई बार कितना तसल्ली-भरा होता है !

"सिस्टर...!" आखिर न रहा गया, तो पूछ ही लिया उसने, "मुझे छुट्टी कब मिलेगी ?"

नर्स फिर मन्द-मन्द मुस्कराई, "अभी से छुट्टी की सोचने लगे ? अभी तो आप होश में ही आए हैं।"

"फिर भी...?"

"मैं डॉक्टर को भेजती हूँ। वही बता सकेंगे कि आपको यहाँ

की इजाज़त कब दी जा सकेगी।"

"ओके, सिस्टर...!"

भीमा का तापमान लेने के बाद नर्स चली गई। तब—डॉक्टर ने प्रवेश किया। भीमा ने वही सवाल उससे भी पूछा। जो जवाब मिला, वह बहुत निराशाजनक नहीं था। भीमा को 'घर' जाने की अनुमति तीसरे दिन मिल जाएगी।

घर !

डॉक्टर के मुंह से यह शब्द कितनी सहजता से प्रकट हुआ ! लेकिन—कहां है भीमा का घर ?

भीमा तो शहर-शहर भटकता है। अपने मैनेजर और प्रशिक्षक के साथ। केवल शहर-शहर ही क्यों ? विदेशों तक की खाक छानी है भीमा ने। भीमा जैसे लोगों का कहीं कोई ठौर नहीं हुआ करता...।

लेकिन—

कहीं तो होगा न घर ? नाते-रिश्तेदार ? सगे-सम्बन्धी ? हां। यदि यों सोचें, तो भीमा का भी है एक घर।

भीमा ने उस घर को छोड़ दिया—ताकि उसे आबाद रख सके।

भीमा के चले जाने पर ही वह घर आबाद हो सकता था—हुआ था।

मिर्जापुर...यही था वह शहर, जिसे भीमा अपना शहर कह सके।

था या है ?

शहर तो अब भी है...लेकिन क्या वह भीमा का है ? नहीं। है नहीं—था। किसी ज़माने में था, जब भीमा ने उस शहर की मिट्टी को अपने अंग-अंग में सानते हुए पहलवानी शुरू की थी।

लेकिन जब से भीमा ने पहलवानी को धन्धे के रूप में अपनाया, मिर्जापुर को छोड़ ही दिया उसने। केवल अपनी बहनों की शादियों के समय गया है वहां। गया भी इस प्रकार है कि कम-से-कम लोगों को पता चले—भीमा आया है।

"शुक्रिया, डॉक्टर...!" भीमा ने कहा, "वैसे, यदि आप दूसरे दिन... याने, कल ही जाने की इजाजत दे सकते, तो...।"

"जाने के लिए इतने उत्सुक क्यों हैं आप ?"

"कैसे बताऊँ ? जीवन में कभी बीमार नहीं पड़ा। ऐसा अवसर आया ही नहीं कि बिस्तरे के अलावा कहीं भी लेटूँ। नींद लेने के लिए लेटूँ, वह दीगर बात है, लेकिन...आँखें खोलकर, जागते-जागते लेटना...कल्पना नहीं कर सकता, मेरे लिए यह कितना मुश्किल है !" भीमा बोला।

डॉक्टर ने मुस्कराकर सिर हिलाया, "समझ गया, आपकी समस्या मैं समझ गया।"

"तो ? क्या मैं चंगा हूँ...?"

"कल फिर से जाँच करूँगा। उसके बाद ही कह सकूँगा कि...अभी आप लेटे रहिए। आराम से।" डॉक्टर ने कहा।

विदा लेने से पहले डॉक्टर ने भीमा की दोनों आँखों में टार्च की रोशनी डालकर कुछ निरीक्षण किया। फिर भाँति-भाँति के रंगों का एक कार्ड निकाला और एक-एक रंग की ओर संकेत करते हुए पूछा, "बताइए, यह कौन-सा रंग है ? और यह ? ठीक। और यह ? ओके। थैंक्यू।"

डॉक्टर चला गया और भीमा सोचने लगा, 'आँखों की जाँच का क्या मतलब ?'

अपने कमरे से बाहर भीमा ने खुसर-फुसर होने का आभास पाया। अगले क्षण दरवाजा फिर खुला और चम्पकलाल बंसल दिखाई दिया।

चम्पक। भीमा का मैनेजर। विभिन्न दंगलों में भीमा का स्थान निश्चित करने और उन दंगलों की आय में भीमा का हिस्सा कितना हो, इसका हिसाब रखने वाला—पैसों की वसूली करने वाला ठोस व्यक्ति।

दरवाजे पर चम्पक ठिठककर खड़ा रह गया। भीमा पर उसकी नजर ऐसे स्थिर होने लगी, मानो वह भीमा को नहीं, किसी और को देख रहा हो।

निगाह मिलते ही भीमा ने मुस्कराना चाहा।

तब जैसे जबरन मुस्करा रहा हो, इस तरह चम्पक भी मुस्कराया और दरवाजा छोड़कर आगे आया।

चम्पक ने ज्यों ही दरवाजा छोड़ा, वहीं एक और व्यक्ति प्रकट हुआ। वह व्यक्ति भी दरवाजे पर दो पल रुका। देखता रहा भीमा की ओर। उसकी आँखों में भीमा के लिए आत्मीयता और करुणा काँप रही थी। दो

पल रुकने के बाद, हौले-हौले वह भी आगे आया और भीमा के नज़दीक खड़ा हो गया, चम्पक की बग़ल में।

यह व्यक्ति था—देशराज। भीमा का प्रशिक्षक।

चम्पक था छरहरे बदन का नाटा व्यक्ति। देशराज ठीक उल्टा था। ऊँचा-पूरा, अलमस्त, पहलवानों जैसा।

पहलवानों को प्रशिक्षित करने वाला व्यक्ति स्वयं भी पहलवानों जैसा हो, यह आवश्यक तो नहीं, किन्तु देशराज पहलवानों जैसा ही था। मोटापे के कारण जब वह चलता, तो ऐसा लगता, जैसे समुद्र में कोई जहाज़ डोल रहा हो।

अपने प्रशिक्षक से निगाह मिलते ही भीमा ने गहरी शर्म महसूस की। प्रशिक्षक ! गुरु ! देशराज का सिखाया हुआ विख्यात पहलवान भीमा हार गया था...।

किन्तु देशराज की आँखों में जो स्नेह, करुणा और आत्मीयता थी, उस से भीमा की शर्म कम होने लगी। वह बुदबुदाया, "देशराजजी...माफ़ कीजिएगा, मैं...मैंने पूरी कोशिश की, लेकिन..।"

"कोई बात नहीं। हर पहलवान, ज़िन्दगी में, कभी-न-कभी, करारी मात ज़रूर खाता है। तो क्या !" देशराज मुसकराया।

"लेकिन...मुझे अभी भी यक़ीन नहीं हो रहा कि उस पिद्दी-से आदमी में इतनी ताक़त कैसे समाई हुई थी।" भीमा बोला, "उसने मुझे, यों कहिए कि...भौंचक ही कर दिया।"

देशराज बोला कुछ नहीं। मुस्कराया भर।

चम्पक अभी तक चुप खड़ा था। भीमा ने उसकी ओर देखा, "तुम भी मेरे कारण शर्मिन्दगी...।"

"नहीं, यार !" चम्पक ने कहा, "कमाल की बात करते हो। इस शर्मिन्दगी जैसा क्या है ? दुनिया का कोई मैनेजर ऐसा नहीं, जिसका पहलवान कभी न हारा हो।"

"तो भी...।"

"छोड़ो ! यह बताओ, अब कैसे हो ?"

"ठीक हूँ। काफ़ी ठीक।" भीमा बोला।

इस पर चम्पक और देशराज एक-दूसरे की तरफ़ ऐसे देखने लगे, गोया भीमा ने जो कहा था, वह सच नहीं था। भीमा ने उनकी ऐसी प्रतिक्रिया की आशा नहीं रखी थी। उनकी ओर वह आश्चर्य से देखने लगा।

चम्पक और देशराज ने उसके आश्चर्य को पहचाना। उनके होंठों पर जैसे कोई बात आते-आते रह जा रही थी।

भीमा ने पूछा भी, "क्यों? क्या बात है?"

"कुछ नहीं।" देशराज ने होले से कहा।

"कुछ भी नहीं, यार!" चम्पक ने जोरों से मुस्कराकर कहा। उसकी मुस्कान नक़ली थी, यह भीमा क्षण-मात्र में समझ गया।

भीमा आशंकित होने लगा।

२

काबू में न आने वाली कुमारिका—कुन्दन!

अपनी खूबसूरती, सादगी, स्नेहशीलता और दिलेरी के लिए सारे ब्लॉक में प्रसिद्ध कुमारिका—कुन्दन!

जब वह घर से निकली, बुरी तरह खीझी हुई थी। जिस चर्चा से वह बेहद-बेहद चिढ़ने लगी है, वही चर्चा विधवा माँ ने आज फिर छेड़ी। कुन्दन तब नौकरी पर जाने की तैयारी में थी। सुनते ही चेहरा तमतमा आया उसका। माँ के प्रति गहरा स्नेह और सम्मान होने के बावजूद उसने कड़वाहट के साथ कहा, "मैं एक बार 'ना' कर चुकी हूँ या नहीं? फिर क्यों बार-बार उसी बात को.. ?"

"हम तो तुम्हारे भले के लिए कह रहे हैं।" माँ ने उत्तर दिया। यह वाक्य माँ न जाने कितनी बार कुन्दन के कानों में उँड़ेल चुकी है...!

कुन्दन ने भी ऐसा वाक्य कहा, जिसे वह न जाने कितनी बार माँ के कानों में उँड़ेल चुकी थी, "बच्ची नहीं हूँ। अपना भला-बुरा आप तय कर सकती हूँ।"

भिन्ना कर माँ सामने से हट गई थी। हटते-हटते बुदबुदाई थी वह,

"नौकरी क्या करने लगी, पर निकल आए हैं।"

'ये पर ही मेरी रक्षा कर रहे हैं।' कुन्दन ने मन-ही-मन कहा था, 'नौकरी न कर रही होती, तो कब की उस बूढ़े के गले में बाँध दी गई होती। जैसे मेरे कोई अरमान ही नहीं। वह जमाना लद चुका, जब घर की लड़की गऊ की तरह हुआ करती थी, जिसे जब जिस खूंटी से चाहा, बाँध कर छुट्टी पा ली।'

कुन्दन से लगभग दोगुनी उम्र का एक विधुर है। माँ चाहती है, कुन्दन उसके साथ शादी कर ले। कारण—विधुर महोदय अत्यन्त धनी हैं।

सैकड़ों सालों से, हर दूसरे-तीसरे घर में, दोहराई जाने वाली कहानी!

किन्तु कुन्दन ने क्या इसीलिए एम० ए० किया कि वह इसी घिसी-पिटी कहानी की पात्र बनकर रह जाए? सवाल ही नहीं।

कुन्दन यदि माँ के प्रस्ताव का विरोध करती है, तो इसमें कोई अजूबा नहीं है। इसी तरह, माँ जिस जमाने की है, उसे देखते हुए—माँ यदि ऐसा प्रस्ताव बार-बार रखती है, तो इसमें भी कोई अजूबा नहीं। इसीलिए कुन्दन और उसकी माँ को एक-दूसरी पर खीझना नहीं चाहिए।

लेकिन वे खीझती हैं।

कुन्दन बस की क्यू में खड़ी हो गई। दिल्ली की बसों की तरह बम्बई की बसें असुविधाजनक नहीं। यात्रियों की अधिकांश भीड़ बिजली की ट्रेनें खींच ले जाती हैं। बसों में इसीलिए बहुत रश नहीं हुआ करता। ट्रेन की भीड़ में भिचने से बेहतर कुन्दन को यही लगता है कि बस से यात्रा करे। बस-यात्रा थोड़ी महंगी जरूर पड़ती है, किन्तु सुविधा को देखते हुए अखरता नहीं।

बस आई। क्यू आगे चली। कुन्दन को जगह मिल गई। सीट पर बैठकर उसने आज का अखबार खोल लिया। खीझ के कारण, घर पर उसने अखबार खोलकर देखा भी नहीं था।

पहले पृष्ठ पर कई महत्त्वपूर्ण समाचार छपे थे। उनके बीच छपे इस समाचार ने भी बरबस उसका ध्यान आकर्षित कर लिया—

सुप्रसिद्ध पहलवान भीमा एक नए पहलवान से बुरी तरह पराजित...!

कुन्दन पढ़ने लगी।

३

डॉक्टर ने 'घर' जाने की अनुमति अगले दिन नहीं दी। अगले-से-अगले दिन भी नहीं। भीमा को छुट्टी देने के अपने 'वचन' को डॉक्टर ने बड़ी ढिठाई के साथ मुस्कराकर तोड़ दिया।

घर यानी गेस्ट-हाउस।

दादर के एक मध्यम श्रेणी के गेस्ट-हाउस में भीमा ठहरा करता—जब भी वह बम्बई में होता। तीन पलंगों का एक अच्छा-सा कमरा वे किराए पर लिया करते। भीमा, चम्पकलाल और देशराज।

कुश्ती के क्षेत्र में नए-नए दांव-पेंचों का आविष्कार करना देशराज के लिए कोई कठिन काम नहीं था। भीमा को वह नवीनतम दांव-पेंचों से लैस रखा करता। इसीलिए—जहां-जहां भीमा, वहां-वहां देशराज।

चम्पक भी—जैसा कि आसानी से समझा जा सकता है—भीमा के साथ परछाईं बना घूमा करता। भीमा का आर्थिक व्यवस्थापक जो था!

सच पूछें, भीमा की तमाम प्रसिद्धि का श्रेय चम्पकलाल को ही जाता था। उसी ने भीमा की योग्यताओं को पहचान कर, उसके लिए एक ऐसा बाजार तैयार किया था, जिसकी जड़ें अब विदेशों तक में फैल चुकी थीं।

विदेशों में आयोजित दगलों का भी वातावरण, भीमा की मौजूदगी में, एक अजब ही रोमांच से भीग जाता।

अस्पताल से छुट्टी मिलते ही भीमा दादर के उसी गेस्ट-हाउस के अपने कमरे में पहुँच गया। उसकी पट्टियां खुल चुकी थीं, कमजोरी विशेष नहीं थी, किन्तु डॉक्टर ने अधिक चलने-फिरने की मनाही की थी। भीमा बिस्तर में लेट गया। चम्पक और देशराज दो स्टूल खींचकर उसके नजदीक बैठे।

इधर-उधर की कुछेक बातों के बाद चम्पक बोला, "भीमा! बहुत गम्भीर समस्या हम तीनों के सामने है।"

"क्या ?" भीमा ने पूछा।

"डॉक्टर ने 'बॉक्सिंग-कमीशन' को जो रिपोर्ट दी है, उसके अनुसार...।" चम्पक हिचककर रुक गया। वाक्य कैसे पूरा किया जाए, उसकी समझ से परे था।

"डॉक्टर की रिपोर्ट ? किसके बारे में ?" भीमा ने पूछा।

"स्वयं तुम्हारे बारे में।"

"रिपोर्ट यही है न कि अब मैं पूर्णतया स्वस्थ हो गया हूं ? उस नौजवान पहलवान से दूसरी टक्कर लेकर, उसे चारों खाने चितकर देने के लिए मैं अत्यन्त लालायित हूं।" कहते हुए भीमा ने देशराज की ओर इस प्रकार देखा, मानो उसकी अनुमति मांग रहा हो।

देशराज मुस्कराया भी नहीं। चुपचाप उसने निगाह झुका ली।

उस दुखद सच्चाई को भीमा के सामने रखने का जिम्मा चम्पक ने निवाहा। उसने कहा, "विश्वास करोगे ? डॉक्टर के अनुसार—अब तुम कभी भी दंगल के मैदान में नहीं उतर सकोगे।"

भीमा हँसने लगा, "अच्छा मज़ाक है।"

"मजाक नहीं, दोस्त, यह सच्चाई है।" चम्पक ज़ोर देकर बोला, "सचमुच अब तुम्हें 'बॉक्सिंग-कमीशन' की ओर से दंगल में उतरने की इजाज़त नहीं मिलेगी।"

भीमा का हास्य डूब गया। एकदम अविश्वास से वह चम्पक की आंखों में निहारता रह गया। कुछ कहने के लिए उसने मुंह खोला, किन्तु आवाज़ फूटी ही नहीं। भीमा ने देशराज की तरफ़ देखा—मानो कह रहा हो कि ऐसा फूहड़ मजाक करने के लिए क्यों न चम्पकलाल को कोई कड़ी सज़ा दी जाए।

किन्तु निगाह मिलते ही देशराज ने दूसरी बार पलकें झुका लीं। देशराज के लटके हुए चेहरे ने भीमा के सामने स्पष्ट कर दिया कि जो कहा जा रहा था, उसमें मजाक का कोई अंश नहीं था।

"डॉक्टर पागल है।" भीमा सहसा बिफर गया, "मैं बॉक्सिंग छोड़ दूं ? पिछले सत्रह सालों से जो काम मैं करता आया हूं, उसी को छोड़ दूं ? आख़िर क्यों ?"

"क्योंकि...अभी जो अन्तिम लड़ाई तुमने लड़ी, उसमे...।"

"बोलो, बोलो।"

"उसमे तुम्हारे दिमाग पर गहरा आघात पहुँचा है।"

"मगर मेरी पट्टियाँ खुल चुकी है।"

"यह आघात अन्दरूनी है। पट्टियाँ खुलने के साथ उसका कोई सरोकार नही।"

"याने ?" भीमा की आवाज कुछ थर्रा गई।

"दिमाग मे, प्रत्येक संवेदन के लिए, अलग-अलग कमरे-से बने होते हैं। देखने के संवेदन का जो कमरा है, उसी पर तुम्हे चोट पहुँची है। डॉक्टर की रिपोर्ट के अनुसार, यदि तुमने फिर से दगल मे उतरने का साहस किया, तो यह चोट और भी गहरी हो जाएगी। अभी तुम अन्धे हो जाने से बाल-बाल बचे हो, लेकिन यदि फिर से लड़ने के लिए उतरोगे, तो बिलकुल अन्धे हो जाओगे।"

"यह झूठ है।" भीमा की मुट्ठियाँ भिच गई।

"डॉक्टर 'बॉक्सिंग-कमीशन' के सामने झूठ नही बोल सकता।"

"लेकिन...।"

"अब किसी भी 'लेकिन' की गुंजाइश नहीं है, मेरे दोस्त!"

"लेकिन चम्पक, फिर मैं क्या करूँगा ?" भीमा का स्वर तप आया था।

चम्पक का स्वर बुझा हुआ था, "यही सवाल मेरे सामने भी है।"

खामोशी छा गई।

देशराज बोला तो कुछ नही, किन्तु वही सवाल उसके सामने भी मुँह बाकर आ खड़ा हुआ है, यह बात उसकी आँखों के निरीह-भाव मे साफ़-साफ पढ़ी जा सकती थी।

चम्पक ने भीमा को प्रतिष्ठा दिलाने के पीछे अपनी पूँजी पानी की तरह बहाई थी। भीमा के प्रचार के इश्तहार, पत्रकारो को खुश करने के लिए महँगी पार्टियाँ, विशेष प्रतिष्ठा दिलाने वाले दगलों के संचालकों को घूस, सरकारी अनुदान पाने के लिए सम्बद्ध अधिकारियो को घूस...खर्चे के मोरचे एक नही, अनेक थे। स्वय भीमा के पास, शुरू मे, कानी कौड़ी नही

थी। भीमा का जबर्दस्त खर्च...भीमा ने चम्पक से कई हज़ार रुपए बतौर कर्ज के ले रखे थे—अपनी सबसे छोटी बहन की शादी के लिए...वह तमाम बोझ चम्पक पर ही तो आया था। और...देशराज...देशराज की खोज किस ने की? भीमा के लिए देशराज को नियुक्त किसने किया? विदेशों की सैर के समय देशराज को भी साथ किसने रखा?

जहाँ तक आर्थिक नुक़सान का प्रश्न था—चम्पक ही सबसे ज़्यादा लुटा हुआ दिखाई पड़ रहा था।

गणित के सवाल की तरह, यह तमाम जोड़-घटाना, भीमा के मस्तिष्क में क्षण-मात्र में, सनसनाकर रह गया।

यह सोचना भूल होगी कि देशराज किसी नए पहलवान को ढूंढ़ लेगा। यह भी सम्भव नहीं कि चम्पक को कोई और पहलवान मिल जाएगा।

मिलने को तो एक नहीं, अनेक पहलवान मिल सकते हैं, किन्तु—भीमा जैसा पहलवान? प्रतिष्ठा और धन दिलाने वाला पहलवान? ऐसा पहलवान, जिस पर जनता जान छिड़कने लगी हो?

मनुष्य की उम्र कोई बहुत लम्बी नहीं। देशराज और चम्पक उम्र के उस दौर को पार कर चुके हैं. जब वे किसी नए पहलवान की तलाश करें, उसे प्रशिक्षण दें, उसे नए सिरे से पूरी प्रतिष्ठा दिलाएँ। उन्होंने भीमा की तलाश की, प्रशिक्षण दिया, प्रतिष्ठा दिलाई। अब उनका सारा खेल भीमा पर ही आधारित है।

भीमा हार गया, यह कोई शर्मिन्दगी नहीं। हर पहलवान, कभी-न-कभी हारता ही है। प्रतिष्ठा, कुछ दिनों के लिए, नीचे गिरती है—किन्तु वही पहलवान जब फिर से जीतता है, तो प्रतिष्ठा वापस मिल जाती है। पिछली हार को भूल कर लोग नई जीत को ही अपने मन में बसा लेते हैं। पहलवान पर वे नए सिरे से जान छिड़कने लगते हैं।

हार का मतलब यह नहीं कि खेल हमेशा के लिए खत्म हो गया।

किन्तु डॉक्टर ने जो रिपोर्ट दी है, उसके अनुसार तो...

भीमा का सिर घूम गया सोचकर।

चम्पक क्या करेगा? भीमा से अपनी रक़म की वसूली कैसे कर सकेगा वह? और देशराज? इस भारी-भरकम व्यक्ति के दुर्बल हो जाने में ज़्यादा

दिनों की देर नहीं।

"चम्पक...अब क्या होगा?" भीमा ने बुदबुदाकर पूछा। केवल चम्पक से ही नहीं, इसी सवाल को मानो वह सारी दुनिया से पूछ रहा था।

और दुनिया का कोई व्यक्ति, तावड़तोड़, कोई जवाब नहीं दे सकता था।

"हमें कुछ करना होगा..." आखिर देशराज ने मौन भंग किया, "हाथ-पर-हाथ धरकर बैठने का क्या अर्थ? तुरन्त कुछ सोचना होगा। समस्या हम तीनों की है। तीनों का दिमाग लगना चाहिए।"

किन्तु तीनों में से किसी का दिमाग काम नहीं कर रहा था।

"पता नहीं, मैं कैसे उतनी चोट खा गया...!" भीमा ऐसे बुदबुदाया, मानो उससे कोई अपराध हो गया हो।

देशराज ने सान्त्वना दी, "इसे दुर्घटना ही कहा जाएगा—और दुर्घटनाओं पर किस का बस होता है?"

तीनों दोस्त चुप हो गए। उनकी पक्की दोस्ती में दरारें पड़ने का खतरा पैदा हो गया था। यह खतरा उन्हें बड़े वीभत्स ढंग से डरा रहा था।

चुप्पी के बीच, चम्पक सहसा उठ पड़ा। कमरे का दरवाजा खोलकर वह बाहर निकलने लगा। भीमा और देशराज में से किसी ने न पूछा कि चम्पक कहाँ जा रहा था, क्यों जा रहा था...?

केवल चम्पक ही जानता था—अब उसे कहाँ जाना होगा।

४

क्षमा-याचना...चम्पक को अब क्षमा-याचना करनी होगी—ली हू के सामने।

ली हू से पहला परिचय कब हुआ, चम्पक को ठीक से याद नहीं। चम्पक और ली हू अपने-अपने क्षेत्रों के गुरु थे—और गुरुओं का मेल अनायास हो जाया करता है, भले ही वे अलग-अलग क्षेत्रों में दखल रख

चम्पक यदि पहलवानी के क्षेत्र का गुरु था, तो ली हू था सद

का कुख्यात गुरु। वह एक चीनी आदमी था—इतना गोरा कि एक बार तो यही लगे, इसे ल्यूकोडर्मा का रोग तो नहीं ! चीनियों की आँखें सँकरी होती ही हैं, तिस पर ली हू की आँखें तो और भी ज्यादा सँकरी थीं। यही लगता कि भौंहों के नीचे एक-एक लकीर खिंची हुई है...किन्तु वे दो लकीरें भयंकर थीं। सट्टे के क्षेत्र का गुरु यदि भयंकर आँखों वाला न हो, तो उसका काम कैसे चले ? ली हू का कद, जैसा कि अनुमान लगाया जा सकता है, नाटा था। वह एकदम गंजे सिर वाला आदमी था। उसकी आवाज़ औरतों जैसी पतली थी, किन्तु वही आवाज़ बम्बई के अनेक कुख्यात गुण्डों के दल का सफलतापूर्वक संचालन करती थी।

दंगल में भीमा हार गया, उससे केवल एक दिन पहले, एक रेस्तोरां में, ली हू और चम्पक की मुलाक़ात हुई थी।

बातों-बातों में ली हू ने कहा था, "चम्पक, तुम्हारा पहलवान इस बार हार जाएगा—देखना।"

"असम्भव।" चम्पक पूरे आत्म-विश्वास के साथ बोला था।

"दुनिया में कुछ भी असम्भव नहीं है।"

"यह वाक्य तो नेपोलियन का है। तुम हो चीनी। चीनियों के मुँह से मैं केवल माओ के वाक्य सुनने की आशा रखता हूँ।" चम्पक ने व्यंग्य कर दिया था ली हू पर।

ली हू व्यंग्य को हँसकर टाल गया था, "चाहे जो कहो, तुम्हारा पहलवान इस बार जरूर हारेगा।"

"उसकी टक्कर एक पिद्दी पहलवान से होने वाली है।" चम्पक का उत्तर था, "यदि तगड़े पहलवान से होने वाली होती, तब भी मैं यही कहता कि भीमा हारने वाला नहीं।"

"लेकिन मत भूलो कि भीमा की उम्र अब काफी ज़्यादा है। वह केवल देखने में ही मोटा-ताज़ा है। उसकी टक्कर एक नौजवान से होनी है। नौजवान उसका भुरकस निकाल देगा।"

"भीमा अभी बूढ़ा तो नहीं हुआ।" चम्पक ने दाँत पीसे थे।

"गुस्सा क्यों होते हो, प्यारे !" ली हू मुस्कराया था, "चाहो तो शर्त बद लो।"

"मैं सट्टा नहीं खेलता। धन्यवाद।"

"यह सट्टा थोड़े ही है। यह केवल शर्त है। मैं सट्टे के क्षेत्र में न होता, तब भी ऐसी शर्त तो किसी के भी साथ बदी जा सकती थी।" ली हू ने दलील दी थी और चम्पक ने हामी भर दी थी।

"अच्छा, ठीक है..." कहा था चम्पक ने, "यदि मेरा पहलवान हारा, तो मैं तुम्हें पाँच हजार रुपये गिन दूँगा। ठीक विपरीत, यदि भीमा न हारा, तो—"

"तो मैं तुम्हें पाँच हजार दूँगा।"

"मंजूर।"

"चम्पक, यदि चाहो, तो इस शर्त में हम थोड़ा संशोधन भी कर सकते हैं।"

"क्या ?" चम्पक की आँखें ली हू पर ठहर गई थीं। ली हू मुस्कराया था—जैसे चम्पक को मूर्ख बना रहा हो। बोला था, "ऐसा है, तुम शर्त ऐसी न बदो कि भीमा हारेगा या जीतेगा। शर्त इस तरह रखो कि भीमा ज्यादा-से-ज्यादा कितने राउंड हारेगा, क्योंकि...हारना तो उसका निश्चित ही है।"

चम्पक को यह बात बड़ी अपमानजनक लगी थी, किन्तु ली हू के स्वर में जो दृढ़ता थी, उसने चम्पक को हिला दिया था। जिस पिद्दी पहलवान से भीमा भिड़ने वाला था, उसका पूरा इतिहास चम्पक को मालूम नहीं था। शायद ली हू को मालूम है। तभी तो वह इतने विश्वास के साथ शर्त बदना चाहता है। चम्पक तो केवल उस पहलवान की काठी देखकर ही अन्दाजा लगा रहा है कि उसमें कितनी औकात होगी।

लेकिन क्या, कभी-कभी, देखने में कमजोर लोगों में भी इतनी ताकत नहीं हुआ करती कि...?

आँखें सिकोड़कर चम्पक ने ली हू की ओर देखा था। ली हू फिर से व्यंग्य-बुझी मुस्कान मुस्करा दिया था।

अन्त में शर्त इस प्रकार रही थी—

चम्पक ने कहा था, 'भीमा हद-से-हद चार राउंड हारेगा।' और ली हू ने कहा था, 'कम-से-कम छः राउंड हारेगा।'

और भीमा ?

वह पूरे सात राउंड हारा !

याने—चम्पक को ली हू के चरणों पर पाँच हज़ार रुपये रख देने होंगे। कब तक ? शर्त बदते समय मियाद तय कर लेना किसी के ध्यान में नहीं रहा था। अब, चम्पक को जाकर ली हू से क्षमा-याचना करनी होगी, क्योंकि वह तावड़तोड़ पाँच हज़ार का इन्तज़ाम नहीं कर सकता था। क्षमा-याचना किए बग़ैर ली हू मियाद देने वाला नहीं।

कितनी मियाद देगा वह ? सात दिन ? दस दिन ? एक मास ?

किन्तु उससे भी बड़ा प्रश्न था—मियाद वह देगा भी या नहीं ?

यदि उसने मियाद देने से इन्कार कर दिया ? चम्पक को कुछ सूझा नहीं कि उस सूरत में उसे क्या करना होगा...कि वह क्या कर पाएगा... चम्पक के पास, बैंक में मुश्किल से पाँच सौ रुपये होंगे।

सियान...बम्बई की खूबसूरत उपनगरी ! उसमें ली हू की एक छोटी-सी कोठी थी। ऊँची-ऊँची अटटालिकाओं के बीच बैठी हुई कोठी, जो उन अट्टालिकाओं को जैसे हमेशा चिढ़ाती रहती। चम्पक ज्यों-ज्यों उस कोठी के नज़दीक पहुँचा, अपने पैरों में उसे कमज़ोरी का एहसास बढ़ता महसूस हुआ।

"हैलो, चम्पक !" औरतों जैसी बारीक आवाज़ ने चम्पक को बुरी तरह चौंका दिया। क्षण-मात्र में समझ गया वह—ली हू की आवाज़। उसने फ़ौरन पलटकर देखा। कोठी आने से पहले ही, बीच-सड़क पर ही, ली हू से आमना-सामना हो गया था।

सड़क-किनारे के एक लैम्प-पोस्ट के नीचे खड़ा था ली हू। सिर के ऊपर जलती ट्यूब-लाइट के कारण ली हू का गंजा सिर चमक रहा था। लकीरों जैसी उसकी दो आँखें चम्पक पर उसी तरह ठहरी हुई थीं, जैसे कीड़े पर छिपकली की आँखें ठहर जाती हैं। अपनी झुरझुरी पर क़ाबू रखता हुआ चम्पक आगे बढ़ा, ताकि ली हू के नज़दीक पहुँच सके। ली हू मुस्करा रहा था। चम्पक ने भी मुस्कराना चाहा, किन्तु सफल न हो सका। उसने सहसा ध्यान दिया—ली हू अकेला नहीं है। दो अलमस्त गुंडे भी खड़े हैं उसके अगल-बगल। दोनों के हाथ छाती पर मुड़े हुए हैं। दोनों के जैकेट लाल रंग

के है। खतरनाक चटख लाल रंग!

"मैं आप ही से मिलने जा रहा था।" ली हू को हमेशा 'तुम' कहकर पुकारने वाला चम्पक इस बार 'तुम' न कह सका। चम्पक की आवाज़ धीमी थी।

"मुझे यही आशा थी।" ली हू हँसा। वह बिलकुल शुद्ध हिन्दी बोल सकता था। गुजराती और मराठी भाषाएँ भी वह बहुत अच्छी तरह जानता था। अपने खतरनाक आदेशों को वह हिन्दी, गुजराती, मराठी, अंग्रेज़ी और चीनी, किसी भी भाषा में गुँजा सकता था।

"मैं...मैं आपसे यह पूछना चाहता था कि...?" चम्पक हकला गया।

ली हू इस प्रकार बोला, गोया उसने चम्पक की आवाज़ सुनी ही न हो, "तुम्हारा पहलवान हार गया, चम्पक! भविष्यवाणी मेरी सही निकली, तुम्हारी नहीं।"

"हाँ।" चम्पक की निगाहें झुक गई।

"तो? लेकर आये हो न पाँच हज़ार रुपये? नकद?" ली हू ने सीधे मुद्दे पर आते हुए कहा।

गहरी साँस लेकर चम्पक ने निगाह उठाई, "मैं इसी सिलसिले में आपसे मिलना चाहता था।"

"ठीक है। मुलाकात हो गई है। निकालो।" ली हू ने हाथ फैला दिया। उसके गोरे हाथ में हिमालय जैसी दृढ़ता थी।

चम्पक की आवाज़ काँप गई, "मैं ..कुछ मियाद चाहता था।"

"मियाद?" ली हू ने अट्टहास किया, "इतने सालों में तुम बीमा की कमाई में से अपना हिस्सा निकाल-निकालकर बैंकों में जमा करते रहे हो। हमेशा विदेशों के सैर-सपाटे भी करते हो। तुम्हारे साथ तो पाँच लाख की शर्त बदनी चाहिए थी। मैं चूक गया। सिर्फ़ पाँच हज़ार के भुगतान के लिए मियाद? हा, हा, हा ..!"

"मेरे पास बैंक में मुश्किल से पाँच सौ होंगे।" चम्पक ने सचाई सामने रखी।

"विश्वास कौन करेगा?"

"मैं जानता हूँ, यह बात सहसा विश्वास करने लायक नहीं, किन्तु

सचाई यही है। धन की कमी तो मुझे कभी नहीं रही, लेकिन...कुछेक पारिवारिक कारणों से...धन कभी मेरे हाथ में टिक नहीं पाया। इसीलिए, क्षमा-याचना के साथ, थोड़ी मियाद चाहता हूँ।"

"एक दिन की ? डेढ़ दिन की ?" ली हू का स्वर मजाक का था।

"जी नहीं, इतने समय में भला क्या हो सकता है ? मुझे कम-से-कम दो मास की मियाद चाहिए...यदि आप दे सकें, तो बड़ी कृपा होगी।"

"साफ-साफ यों कहो न टालना चाहते हो।"

"नहीं, ली हू साहब, आपके हाथ कितने लम्बे हैं, क्या मैं नहीं जानता ? दुनिया के किसी कोने में मैं आपसे छिपा नहीं रह सकता। छिपने का कोई इरादा भी नहीं है।" चम्पक बोला, "लेकिन आप मियाद दें, चाहे न दें—रुपयों का इन्तजाम तो मैं दो मास से पहले कदापि नहीं कर सकूँगा। मेरी आय का साधन टूट चुका है। अखबार में आपने पढ़ा ही होगा कि...भीमा आइंदा कभी दंगल में नहीं उतर सकेगा। भीमा, मैं और देशराज, तीनों के सामने रोज़ी-रोटी का सवाल है। ऐसी हालत में, पाँच हजार की रकम मैं अचानक कैसे निकालूं ?"

"दो मास तो नहीं, लेकिन दो हफ्तों की मियाद मैं जरूर दे सकता हूँ।" कुछ सोचकर ली हू ने कहा।

"लेकिन पन्द्रह दिनों में तो...कुछ भी न हो सकेगा।"

"यों सोचें, तब तो दो मास में भी कुछ नहीं होगा। मैं जरूरत से ज्यादा ढील नहीं देना चाहता।" ली हू ने ठंडे स्वर में उत्तर लौटाया, "मियाद आज रात के बारह बजे शुरू होगी और ठीक पन्द्रहवें दिन की रात बारह बजे खत्म हो जाएगी।"

"यदि मैं मियाद खत्म होते-होते भी इन्तजाम न कर पाया, तो ?" चम्पक ने आशंकित होकर पूछा।

ली हू ने अपने दोनों गुण्डे साथियों की तरफ देखते हुए कहा, "चम्पक साहब को जरा झाँकी दिखाओ कि मियाद खत्म होने के बाद क्या किया जाएगा।"

फिर जो हुआ, बिजली की गति से हुआ। चम्पक क्षण-भर पहले फुट-पाथ पर खड़ा, ली हू से बातें कर रहा था— और अगले ही क्षण वह, उसी

फ़ुटपाथ पर, चारों खाने चित्त गिर चुका था। दोनों गुंडों ने उसके जबड़े पर एक-एक मुक्का मारा। जबर्दस्त शक्ति के सबूत कुल दो मुक्के।

और चम्पक एकदम चित्त होकर गिरा।

भिन्नाते सिर को सम्भालता-सहलाता हुआ, चम्पक जब उठा, तो वहाँ न ली हू था, न उसके दोनों गुंडे।

थी केवल लैम्प-पोस्ट की उदास रोशनी।

आते-जाते लोगों ने यह नन्ही-सी मुक्केबाज़ी देखी थी। दूर-दूर वे रुक जाने लगे थे, किन्तु नजदीक कोई नहीं आ रहा था। कौन गुंडों के लफड़े में पड़े! ऐसी है बम्बई की महानगरी! कोई किसी का नहीं...।

चम्पक बेहद शर्मिन्दगी से सिर झुकाकर चलने लगा—ली हू की कोठी से दूर।

ली हू के शब्द उसके कानों में जोरों से सनसना उठे थे—सिर्फ़ पन्द्रह दिन...।

५

कमरे से चम्पक के चले जाने के बाद भीमा ने देशराज से कहा था, "डाक्टर ने ज्यादा चलने-फिरने की मनाही की है, लेकिन बिस्तर से बिलकुल न उठने के लिए तो नहीं कहा है न।"

"तो?"

"बन्द कमरे में मेरा दम घुटने लगा है। चलो बाहर। कहीं भी।" और भीमा उठ पड़ा था।

देशराज और भीमा सड़क पर निकल आये। बिना किसी उद्देश्य के इधर-उधर टहलते रहे। बसों में बैठे। ट्रेनों में घुसे। पैदल भटके। वे खामोश थे। लगता था, उनकी तमाम दुनिया खामोश हो जाने वाली है।

रात की रोशनियों में, जगह-जगह, इश्तहार चिपके हुए देखे जा सकते थे। इश्तहार, जो भीमा को अजेय पहलवान के रूप में घोषित कर रहे थे। भीमा अविश्वास से एक इश्तहार के नजदीक आकर खड़ा हुआ। पढ़ने

लगा...।

देशराज ने भीमा के कन्धे पर हाथ रखकर दबाया, "भूल जाओ, भीमा।"

दुःख और आतंक की उसाँस के साथ भीमा उस इश्तहार से परे हट गया। सहसा उसके क़दमों में बहुत तेज़ी आ गई—ऐसी तेज़ी कि देशराज को टोकना पड़ा, "इतना तेज क्यों चल रहे हो ? मैं बार-बार पिछड़ रहा हूँ, देखते नहीं ?"

भीमा ने सावधानी के साथ अपने क़दमों को धीमा कर लिया। वह और देशराज साथ-साथ चलने लगे।

"भीमा साहब !" सहसा पीछे से किसी ने पुकारा।

भीमा और देशराज रुककर पीछे देखने लगे।

सामने राजन खड़ा था। उसके चेहरे पर मुसकान थी। भीमा और देशराज के लटके हुए चेहरे देखकर वह मुस्कान डूबने लगी। राजन ने दोनों से हाथ मिलाया, फिर भीमा के चेहरे पर आँखें ठहराते हुए पूछा, 'अब कैसे हैं ?"

"क्यों ? मुझे क्या हुआ है ?" भीमा ने अकड़कर पूछा।

"जिस दिन आप अस्पताल में भरती हुए, मैं आपको देखने के लिए वहाँ गया था।" राजन बोला, "डाक्टरों ने बताया कि आप बेहोश हैं, लिहाज़ा बिना मिले ही लौटना पड़ा।"

भीमा चुप रहा। राजन के साथ उसका परिचय विशेष गहरा नहीं था। भीमा ऐसी आशा कदापि नहीं रख सकता था कि उसकी मिजाजपुरसी के लिए राजन अस्पताल आएगा—जबकि वह आया था।

क्यों ?

अवश्य वह किसी स्वार्थ के कारण आया होगा...महानगरों में, बिना स्वार्थ के, कौन कहीं आता-जाता है ?

लेकिन भीमा के साथ राजन का भला कौन-सा स्वार्थ जुड़ा हो सकता है ?

भीमा सहसा समझ न पाया। उलझन में मुस्करा भी न सका।

देशराज ने कहा, "आपने अस्पताल तक जाने की तकलीफ़ उठाई,

राजन जी, इसके लिए बहुत-बहुत..."

"अजी नहीं, इसमें तकलीफ कैसी ?" राजन बोला, "अभी आप लोग क्या किसी खास काम से कहीं जा रहे हैं ?"

"नहीं। क्यों ?" देशराज ने कहा।

"क्या मैं आप दोनों को चाय पर आमन्त्रित कर सकता हूँ ?" राजन ने ज्यों ही यह पूछा, भीमा और देशराज दोनों समझ गए कि राजन ने अस्पताल तक जाने की तकलीफ यों ही नहीं उठाई थी। जरूर इसके पीछे कोई राज था, जो अब खुलने वाला था।

भीमा और देशराज ने एक-दूसरे की ओर गहरी निगाह से देखा, फिर सहमति में सिर हिला दिया।

राजन बोला, "लेकिन...आप दोनों का स्वागत मैं किसी महँगे होटल में नहीं कर सकूँगा। अपन तो हमेशा मुफलिसी में ही रहते हैं। दूसरों का भला करना ही अपना काम है और—आज की दुनिया में—दूसरों का भला चाहने वाले हमेशा तकलीफें सहते हैं।"

"कहीं भी बैठ जाएँगे। अरे, किसी रेलवे-स्टेशन में, खड़े-खड़े भी चाय पी जा सकती है। बातें करने के लिए बहाना ही तो चाहिए।" देशराज ने उल्लास के साथ कहा। न जाने क्यों, उसे आशा की हल्की किरण-सी दिखाई दे रही थी। अवश्य राजन कोई व्यावसायिक प्रस्ताव रखेगा। भीमा की दंगलों से विदायगी के बाद देशराज, भीमा और चम्पक, तीनों को व्यावसायिक प्रस्तावों की ही प्रतीक्षा थी।

पता नहीं, चम्पक इस वक्त कहाँ भटक रहा है। राजन का प्रस्ताव जब उसके सामने रखा जाएगा, अवश्य उसे राहत मिलेगी।

किन्तु अभी से इतनी दूर तक क्यों सोचा जाए ? देशराज ने अपने शेखचिल्लीपन को तुरन्त पहचान लिया। पता नहीं, राजन का प्रस्ताव क्या हो। उस प्रस्ताव को, पता नहीं, स्वीकार किया भी जा सके या नहीं।

राजन कह रहा था, "खड़े-खड़े तो नहीं, कहीं बैठ कर ही तसल्ली से चाय पीएँगे।"

एक सस्ते डिपार्टमेंटल-स्टोर का दरवाजा सामने ही था। वहाँ दैनिक जरूरतों की चीजें मिलती थीं—और चाय भी। तीनों ने वहाँ प्रवेश

एक-एक कुर्सी खींची। बैठे। कुर्सियाँ नाजुक थीं। स्टोर का मालिक भीमा की तरफ आशंका से देखने लगा। उतना जबर्दस्त आदमी यदि उतनी नाजुक कुर्सी में बैठा, तो कुर्सी कहीं टें न बोल जाए ! मालिक की शंकालु निगाह देशराज पर भी टिक गई, क्योंकि देशराज का बदन भी कोई कम भारी नहीं था।

किन्तु सौभाग्य से उन नाजुक कुर्सियों में मजबूती की कमी नहीं थी। भीमा और देशराज का वज़न उन्होंने सम्भाल ही लिया। स्टोर के मालिक की उलझन भीमा और देशराज से छिपी नहीं रही थी। मन-ही-मन वे मुस्करा दिए।

राजन ने तीनों के लिए चाय का आदेश दे दिया था। बैरा के चले जाने के बाद वह भीमा की ओर झुका। अपना वही सवाल उसने दोहराया, "अब कैसे हैं ? बिलकुल ठीक हैं न ?"

"हाँ, हाँ।" भीमा ने किसी तरह कहा।

"अख़बारों में पढ़ने को मिला कि अब आप...कभी भी..."

"फिलहाल तो डाक्टर का यही कहना है कि मैं दंगलों में भाग न लूँ, लेकिन...मुमकिन है, कुछ दिनों में डाक्टरों को अपनी राय बदलनी पड़े।" भीमा ने कहा। कहते समय ही वह जानता था, उसके शब्दों में कोई वज़न नहीं। डाक्टरों ने जो फैसला दिया है, वह अन्तिम ही है। उसके अन्तिम होने की बात डाक्टरों ने विशेष ज़ोर दे कर घोषित की है।

राजन ने कहा, "मुझे बहुत ही दुख है कि आपको वैसी अन्दरूनी चोट पहुँची। भगवान सबका भला करे, लेकिन...अब आगे की आपने क्या सोची है ?"

"क्यों न हम सीधे मुद्दे पर ही आएँ ?" भीमा ने सहसा कहा, "मुझे लगता है, आपकी ओर से कोई सुझाव है...?"

राजन ज़रा झेंपकर मुस्कराने लगा, "जी हाँ...ऐसी ही बात है।"

"कहिए।"

"आपने सूबासिंह जी का नाम सुना होगा।"

भीमा मुस्कराया, "आपने भी कमाल की बात कही, राजन जी ! सूबासिंह जी का नाम तो आज देश का बच्चा-बच्चा जानता है।"

मुबारसिंह कुछ वर्ष पहले का एक नामी पहलवान था। देश-विदेश में उसने बड़ा आतंक फैलाया था, दंगलों में अनेक पुरस्कार जीते थे उसने। फिर...उसके जीवन का एक नया ही दौर शुरू हुआ। उसने पहलवानी छोड़ दी। एक बम्बइया फिल्म-निर्माता ने उसे अपनी फिल्म में उप-नायक का रोल दिया—डाकू का रोल। वह फिल्म बॉक्स-आफिस पर कमाल की हिट साबित हुई। मुबारसिंह अभिनेता के रूप में स्थापित हो गया। नए-नए अनुबन्धों के साथ, फिल्म-निर्माताओं ने मुबारसिंह के दरवाजे पर लाइन लगा दी। बम्बई के फिल्म-जगत में सब इसी तरह होता है—भेड़ियाधसान! उस फिल्म-जगत ने मुबारसिंह को रातों-रात अपना लिया।

स्वयं मुबारसिंह ने कल्पना तक नहीं की थी कि भयानक दंगलों से हट कर वह फिल्मी-अभिनेता का मुलायम जीवन शुरू कर सकेगा, जिस में हमेशा सुर, सुरा, सुन्दरी से घिरा रहेगा वह...।

बात सपने जैसी थी...

लेकिन वह सच थी।

तरक्की की हालत यह कि अब मुबारसिंह ने अपनी फिल्म स्वयं ही बनाना और निर्देशित करना शुरू कर दिया था।

मुबारसिंह की फिल्में राजकपूर की फिल्मों की तरह तो नहीं चलती थीं, लेकिन राजकपूर की फिल्मों की तरह पिटती भी नहीं थीं। उसकी फिल्में हमेशा एक निश्चित कमाई किया करतीं—सुरक्षित कमाई। इसीलिए, उसकी फिल्मों में पैसा लगाने वालों की कमी नहीं थी।

मुबारसिंह का नाम सचमुच देश का बच्चा-बच्चा जानता था।

भीमा और मुबारसिंह का आमना-सामना कभी नहीं हुआ था।

राजन ने गम्भीरता से कहना जारी रखा, "मेरा प्रस्ताव मुबारसिंह जी का ही प्रस्ताव है। वैसे, उनके सामने अभी मैंने बात छेड़ी तो नहीं है, लेकिन जब भी छेड़ूँगा, वह 'हाँ' कह देंगे। मेरे प्रस्तावों को उन्होंने आज तक अस्वीकार नहीं किया है।"

"आप फिर से भूमिका में उलझने लगे। मुद्दे पर आइए न।"

लेकिन राजन मुद्दे पर आता, इससे पहले बैरे ने आकर चाय के तीन कप रखे और आध-पौन मिनट तक वे तीनों, बिना एक-दूसरे से

गर्म चाय की चुस्कियाँ लेने में मगन हो गए।

मौन राजन की आवाज से ही टूटा, "मुद्दा यह है कि...भीमा जी, क्या आप सूबासिंह जी के 'डबल' के रूप में काम करना पसन्द करेंगे ?"

"डबल ?" भीमा सहसा समझ न पाया।

"जी हाँ। फिल्मों में सारा काम हीरो-हीरोइनें नहीं किया करते।" राजन ने स्पष्ट किया, "आप की काठी, यदि पीछे से देखा जाए, तो... बिलकुल सूबासिंह जी से मिलती-जुलती है। याने, जिस शॉट में सूबासिंह जी को पीछे से दिखाया जाना होगा, उसमें उनकी बजाए आप को दिखा दिया जाएगा। इसी प्रकार, मार-धाड़ के दृश्यों में भी, आम तौर पर, 'डबल' से ही काम लिया जाता है।"

"ओह, लेकिन फिल्मों में काम करना...मुझे इसका कोई अनुभव नहीं।" भीमा ने संकोच से कहा।

"यह सब तो डायरेक्टर सम्भाल लेगा। डायरेक्टर होता किस लिए है ?" राजन ने सिगरेट निकाली और भीमा की तरफ़ बढ़ा दी।

"धन्यवाद...मैं नहीं पीता।" भीमा औपचारिकता से मुस्कराया। देशराज ने भी सिगरेट न ली। राजन ने वही सिगरेट स्वयं सुलगा ली और कहा, "अभी तो हमें केवल यह तय करना है कि 'डबल' का काम—जो क़तई मुश्किल नहीं है—आप स्वीकार कर सकेंगे या नहीं।"

"हमेशा का काम है ?" भीमा ने जानना चाहा।

"हाँ, यह काम हमेशा निकलता रहेगा।"

"और...पैसा ? पैसा कितना मिलेगा ?"

"यह अभी से नहीं कहा जा सकता। यह तो आप का काम देखकर... और ज़रूरत के मुताबिक़...।"

भीमा ने देशराज की ओर देखा, जैसे सलाह लेना चाहता हो।

देशराज उलझन में था। उसके दिमाग़ में मोटा हिसाब यही था कि फिल्मों में काम करने पर अच्छा ही पैसा मिल जाएगा। कोई निश्चित आँकड़ा सामने न होने पर भी, इतना तो मानकर चला ही जा सकता है कि पैसा बुरा नहीं मिलेगा। उसने भीमा की ओर से हामी भर दी, "ठीक है, सूबासिंह जी का 'डबल' बनने में भीमा को कोई एतराज़ नहीं। आप सूबा-

सिंह जी से तय कर लीजिए। फिर...पैसा कितना मिलेगा, यह भी बता दीजिए। काम हो जाएगा।"

जब देशराज ने हामी भर दी, तो भीमा कैसे इन्कार कर सकता था!

चाय का बिल राजन ने ही दिया। भीमा और देशराज से विदा लेने से पहले उसने उस गेस्ट-हाउस का फोन-नम्बर नोट कर लिया, जहाँ भीमा ने कमरा किराए पर लिया हुआ था। "मैं स्वयं सम्पर्क करूँगा।" राजन ने उल्लसित मुस्कान के साथ कहा।

राजन चला गया।

भीमा अब भी जरा अनिश्चय में था। बोला, "देशराज जी, यह आदमी ...राजन.. खुद तो यह हमेशा फटेहाल रहता है। हमें यह क्या दिला सकेगा?"

"देखते हैं, क्या होता है।" देशराज ने उत्तर दिया, "फिल्म इंडस्ट्री अद्भुत है। यहाँ कौन किसे कब कितना दिला सकता है, फरिश्ते भी नहीं जान सकते। आखिर हम लोगों को कोई-न-कोई नया काम ढूँढना है ही। शायद यही काम रास आ जाए।"

६

भीमा और देशराज जब गेस्ट-हाउस वापस आए, तो रात के साढ़े दस बजने को थे। कमरे में उन्होंने चम्पक को मौजूद पाया। चम्पक का चेहरा इतना बुझा हुआ था कि बिना पूछे ही वे समझ गए—जरूर कोई उलझन है।

"कहाँ चले गए थे?" देशराज का स्वर।

"यों ही...जरा घूमने।" चम्पक ने उत्तर लौटाया। असलियत वह अपने साथियों को बता नहीं सकता था। वह जानता था, उसके साथी चिन्तित हैं। उन्हें वह और ज्यादा चिन्तित नहीं करना चाहता था।

"हम लोग भी जरा घूमने चले गए थे। हमारी मुलाकात [illegible] से हुई।"

"अच्छा। फिर ?"

"उसने एक प्रस्ताव रखा है।" देशराज ने कहा, फिर प्रस्ताव की रूप-रेखा चम्पक के सामने रख दी।

चम्पक उछल पड़ा, "अद्भुत !"

चम्पक की सारी उदासी ऐसे छँट गई, जैसे सूर्य निकलने पर कोहरा। भीमा और देशराज, दोनों ही के लिए उसका उस तरह उछल पड़ना आशा के विपरीत था।

"क्यों ?" भीमा ने पूछा।

"अद्भुत आइडिया। आश्चर्य ! यह आइडिया मेरे दिमाग में पहले क्यों न आया ?" चम्पक ने कहा। उसने हँसना शुरू कर दिया।

"तो क्या...'डबल' का काम करने में...बहुत ज्यादा पैसे मिलेंगे ?" भीमा ने आशाओं के साथ चम्पक की तरफ देखा।

चम्पक ने भीमा को ज़ोर से धौल जमाई, " 'डबल' ? आखिर क्यों तुम किसी के 'डबल' बनो ?"

"क्या मतलब ?"

"उस राजन के बच्चे से कहना, 'डबल' किसी भड़वे को बनाए ! हमारा भीमा तो सिंगल ही बनेगा।"

"पहेलियाँ क्यों बुझाते हो ?"

"सोचो, भीमा ! सूबासिंह यदि फिल्मी-अभिनेता बन सकता है, तो तुम क्यों नहीं बन सकते ?"

"मैं ? अभिनेता ?" भीमा आँखें झपकाने लगा।

"तुम में और सूबासिंह में अन्तर क्या है ? वह पहलवान। तुम पहलवान। ढीशुंग-ढीशुंग वाला काम अगर सूबा कर सकता है, तो तुम क्यों नहीं ?"

भीमा ने ज़ोर से ठहाका लगाया, "सपने देखने के मामले में तुम्हारा जवाब नहीं, चम्पक !"

"ऊँची बातें हमेशा सपनों जैसी लगती हैं—जब तक कि उन्हें साकार न कर लिया जाए।" चम्पक ने दार्शनिकों की तरह कहा।

"लेकिन हर ऊँची बात साकार नहीं हो सकती।"

"लेकिन मुझे बताओ—जो मैं कह रहा हूँ, उसमे अजूबा क्या है ?" चम्पक के स्वर में चुनौती थी।

भीमा और देशराज, किसी से, चम्पक को जवाब देते न बना।

इससे चम्पक और भी उत्साहित हो गया, "पहलवान का मतलब बेडौल, बोड़म आदमी नहीं हुआ करता। सूबासिंह भी जब अखाड़े में उतरता था, तो मुटल्ला और ढीलमढाला लगता था। आज उसे कोई कहता है मोटा ? ढीलमढाला ? आज सब उसे अभिनेता कहते हैं। पहलवान भी आखिर एक मर्द होता है। केवल मर्द नहीं—जबर्दस्त, ऊँचा पूरा मर्द। ऐसा मर्द कि देखते ही सुन्दरियों की जान निकल जाए।"

"रहने भी दो, यार! आकाश से उतरो। धरती पर आओ।" भीमा हँसा, "मेस बन्द होने वाला है। हम लोगों को पेटपूजा करने की सोचनी चाहिए।"

"क्यों नहीं ?"

तीनों उठे और मेस में चले गए।

बैरे ने—रोज़ की परम्परा के अनुसार—भीमा और देशराज के सामने इतना भोजन रख दिया, जितना कम-से-कम पाँच आदमी खाते।

यह पहला मौका था—जीवन में पहला मौका—जब भीमा और देशराज, दोनों को सहसा लग आया कि उनकी खुराक बहुत ज्यादा है। एक-एक आदमी अनेक आदमियों जितना भोजन करे! महँगाई के इस ज़माने में इसे तबाही न कहा जाए, तो क्या कहा जाए ?

भीमा के ठाठ तो और निराले थे। पौष्टिक भोजन, उसके लिए, अलग से तैयार किया जाता। दूध-मलाई छनती। मेवे खाए जाते। मालिशों के दौर चलते।

गेस्ट-हाउस वाले भीमा की ज़रूरतों का पूरा ध्यान रखते थे। सबसे तगड़ा बिल भीमा का ही हुआ करता।

लेकिन अब ?

देशराज ने बैरे को बुलाकर, शान्त और गम्भीर स्वर में आदेश दिया, "आज रख दिया, सो रख दिया—कल से उतना ही रखना

माँगें। समझे ? हम कोई राक्षस नहीं हैं, जो इतना खा जा

आदमी।"

बेचारा बैरा देशराज की ओर आँखें झपकाता देखता रह गया।

बैरे के चले जाने पर चम्पक बोला, "देशराज जी, आज पता चला, आप कितने मनहूस हैं! बैरे को डाँटने का क्या मतलब? इसके अलावा... किसने कहा कि हम लोगों के खर्चे कम होने वाले हैं? हमारे ठाठ वैसे ही रहेंगे, जैसे हुआ करते थे—जैसे होने चाहिए। हमारा भीमा फिल्म-अभिनेता बनने वाला है।"

भीमा ने एकदम नाराज होकर आँखें तरेरीं, "अब यह बात फिर न दोहराना, वरना...दंगल हो जाएगा। डॉक्टर ने मुझे किसी पहलवान से भिड़ने की मनाही की है, तुम जैसे मच्छर से नहीं।"

चम्पक चुप तो हो गया, किन्तु रह-रहकर उसके होंठों पर मुस्कान उभरने लगती। वह एक स्वप्नजीवी व्यक्ति था। भीमा से पहली मुलाक़ात होने पर चम्पक ने उसे एक अत्यन्त प्रसिद्ध पहलवान बना देने का सपना देखा था। क्या वह सपना साकार न हुआ? फिर क्यों दूसरे सपने साकार नहीं हो सकते?

रात भर चम्पक को ठीक से नींद न आई।

सुबह जब उठा, तो उस वक्त भी दिमाग़ पर जैसे नशा छाया हुआ था।

"भीमा?" उसने कहा, "ज़रा अपना सबसे शानदार सूट तो निकालो।"

"क्यों?"

"पहनो। मैं तुम्हें देखना चाहता हूँ।"

"पागल हो! क्या कभी उस सूट में मुझे देखा नहीं है?"

"देखा है, मगर आज मेरी नजर कुछ और होगी।" चम्पक ने दृढ़ता से कहा, "आज से मैं एक पहलवान का 'प्रमोटर' नहीं, बल्कि एक भावी अभिनेता का सनसनीखेज 'प्रमोटर' हूँ। मेरी नई जिन्दगी शुरू हो रही है। मेरे साथ—हम सबकी। हमारी टोली कभी नहीं टूटेगी, भीमा! हम तीनों—मैं, तुम, देशराज—हमेशा साथ रहेंगे। मैं 'प्रमोटर' बनूँगा। देशराज को कोई और ज़िम्मेदारी सौंपी जाएगी।"

"सचमुच तुम्हारा दिमाग़ खराब...।"

"खराब सही ! निकालो सूट। पहनो।"

चम्पक के स्वर में ऐसी बच्चों जैसी जिद थी कि भीमा समझ गया, यदि उसने बात न मानी, तो चम्पक को दुख होगा। उसने सूट निकाला, पहना। चम्पक ने उसे आगे से देखा, पीछे से देखा। इस कोण से देखा, उस कोण से देखा। उसकी आँखों में गहरा सन्तोष तैरने लगा। बोला, "सच कहता हूँ, भीमा, किसी हीरो से कम नहीं जँचते। अभी तो स्टूडियो के मेक-अप-मैन का हाथ नहीं लगा है। वह तुम्हें ऐसा बढ़िया सँवार देगा कि खुद अपने को नहीं पहचान सकोगे।"

"ठीक है, ठीक है, अब उतारूँ कोट-पतलून ?"

"इसे कोट-पतलून नहीं, सूट कहो सूट !"

देशराज बोला, "भई, चम्पक, भीमा को हीरो बनाने के बाद एक नज़र मुझ पर भी डालना। देखने में मैं भी किसी से कम नहीं।"

"तुम्हें जोकर का रोल दिला दूँगा। पक्का वचन।"

और चम्पक ने ठहाका लगा दिया। भीमा और देशराज ने अनायास उस ठहाके में साथ दिया।

भीमा और देशराज का हास्य तो शीघ्र ही डूब गया, लेकिन चम्पक की आँखों का सपना और ज्यादा सनसनाने लगा था। उसके होंठों पर मुस्कान उभरती जाती...।

नहाने के लिए चम्पक जब बाथरूम में घुसा, तो सहसा ली हू का चेहरा उसकी आँखों के सामने उभर आया। औरतों जैसी बारीक किन्तु बेहद खतरनाक ली हू की आवाज़ उसके कानों पर घन की तरह वार करने लगी...पन्द्रह दिन...सिर्फ पन्द्रह दिन...।

पाँच हजार का इन्तज़ाम...।

चम्पक स्वप्नजीवी ज़रूर था, किन्तु बेवकूफ नहीं। भीमा को यदि सचमुच अभिनेता बनाया जा सकता हो, तब भी—यह केवल पन्द्रह दिनों में सम्भव नहीं था। भीमा यदि अभिनय का व्यवसाय शुरू कर पाता है, तब भी—हर व्यवसाय की तरह—इसके जमने में समय लगेगा।

जबकि ली हू किसी सूरत में मियाद बढ़ाने वाला नहीं।

चम्पक को किसी से उधार लेना होगा। किस से ? भीमा के पास ?

हीं है। भीमा ने तो स्वयं चम्पक से कर्ज लिया हुआ है, जिसकी वापसी
का अब तो विलकुल कोई अता-पता नहीं। रही वात देशराज की। देशराज
ने आज तक कभी वचत नहीं की। भीमा के प्रशिक्षक के रूप में उसकी एक
वँधी-वँधाई आय थी, जिसे वह वँधे-वँधाए ढंग से खर्च कर दिया करता।
किसी भी पारिवारिक चिन्ता का वोझ देशराज पर नहीं। वचत यदि वह
करता, तो स्वयं अपने लिए—लेकिन वह उन इन्सानों में नहीं था, जो स्वयं
अपने लिए वचत कर सकते हैं।

तव ?

नहाते-नहाते चम्पक याद करने लगा—अपने दोस्तों, परिचितों के
नाम, रिश्तेदारों के नाम...रिश्तेदार वम्वई में कोई नहीं। समय इतना
नहीं है कि उन शहरों तक जाकर लौटा जा सके, जहां रिश्तेदार हैं...क्योंकि
जाकर, एकदम तावड़तोड़ इतने रुपयों का इन्तजाम वे कर सकें, इसकी
गुंजाइश कम है। इन्तजाम करने में उन्हें समय लगेगा। वे हीलाहवाला भी
कर सकते हैं। आजकल की रिश्तेदारियां ऐसी ही होती हैं। याने रिश्तेदारों
के चक्कर लगाने का न तो समय है, न कोई अर्थ। रह जाते हैं केवल वे
दोस्त और परिचित, जो वम्वई में हैं।

परिचितों को सूची में नहीं रखा जा सकता। महँगाई के ज़माने ने सव
के दिल छोटे कर दिए हैं। केवल जो वहुत अन्तरंग मित्र हैं उन्हीं से कुछ
आशा रखी जा सकती है।

चम्पक जव नहाकर वाथरूम से निकला, तो उसकी रंगत उड़ी हु
थी। देखकर यही लगे, जैसे वह विना नहाए ही निकल आया !

७

"नमस्कार !" पुरुष-स्वर। इतना अपरिचित कि कुन्दन को लग
नहीं, वह स्वर उसे ही सम्वोधित कर रहा है। अगल-वगल इतने कर्म
वैठे हैं। उन्हीं में से किसी का कोई परिचित मिलने आया होगा, क
होगा नमस्ते।

कुन्दन ने सिर न उठाया। अपनी फाइल में डूबी रही। कितना अधिक काम होता है इस दफ्तर में ! ज्यों-ज्यों महँगाई बढ़ रही है, बेकारी का राक्षस और भी ज्यादा मुँह फाड़ रहा है। काम-दिलाऊ दफ्तर में यदि फाइलों की संख्या अनेक गुनी हो जाए, तो क्या आश्चर्य ?

काम-दिलाऊ दफ्तर में कुन्दन पिछले पाँच वर्षों से नौकरी पर थी। तरक्की करती-करती वह खासे अच्छे पद पर पहुँच गयी थी।

कुन्दन के पड़ोसी और रिश्तेदार, चुपके-चुपके व्यंग्य किया करते, "काम-दिलाऊ दफ्तर ही पति-दिलाऊ दफ्तर साबित होगा। जब तक नहीं होगा, कुन्दन शादी करने वाली नहीं।"

किन्तु आज तक कभी न सुना गया कि साथ काम करते किसी युवक के साथ कुन्दन की ज्यादा छनने लगी हो। बस, अपने काम से मतलब।

"कुन्दन जी, मैं आप ही को नमस्कार कर रहा हूँ।"

कुन्दन ने ज्यों ही नज़र उठाई, एकदम सन्नाटे में आ गई वह। सपने में भी न सोचा था, उस व्यक्ति से इस तरह आमना-सामना होगा, जिसे कि वह सामने खड़ा देख रही थी।

वही विधुर, जिसके साथ कुन्दन शादी कर ले, ऐसी ज़िद माँ के मन में बसी हुई है ! ओह, वही सामने खड़ा था। कुन्दन को—शिष्टाचार की खातिर—ज़रा मुस्कराना चाहिए। कुन्दन आधुनिक लड़की है। उसे यों सकपका नहीं जाना चाहिए।

लेकिन कुन्दन का चेहरा—पल भर को—ऐसा हो गया, जैसे उसके बदन का तमाम खून अचानक सोख लिया गया हो।

लेकिन फिर—झेंप और अकुलाहट के कारण—उसका चेहरा लाल पड़ने लगा। जब उसने नमस्कार का उत्तर देते हुए हाथ जोड़े, तो 'नमस्कार' शब्द ने उसके गले में मानो बार-बार फँस जाना चाहा।

"बैठ जाऊँ ?" आगन्तुक ने कुन्दन के सामने रखी एक कुर्सी की ओर स्वयं ही संकेत किया, फिर कुन्दन की 'हाँ' या 'ना' की परवाह न करते हुए, झट-से उस कुर्सी पर अधिकार कर लिया।

"ओह, क्षमा कीजिएगा..." कुन्दन ने ज़रा बदलती हुई आवाज़ में कहा और फाइल बन्द कर दी, "मैं एकाएक आपको देखकर ऐसी चौंकी कि

बैठने के लिए कहना भी याद न रहा। न जाने आपने क्या सोचा हो...?"

"मैंने कुछ भी नहीं सोचा।" आगन्तुक गहराई से मुस्कराया, "आपने मुझे...पहचान तो लिया न ?"

"जी हां। मां ने आपका फोटो दिखाया था।"

"नाम भी बताया होगा ?"

"हां, सुरेश जी और...खैर छोड़िए...।"

"मैंने भी आपको फोटो के आधार पर ही पहचाना। यहां किसी से पूछने की ज़रूरत न पड़ी। अन्दर आने के साथ, आपकी मेज़, सामने ही दिखाई दी।"

कुन्दन चुप रही। सुरेश जी क्यों आये हैं, समझना मुश्किल नहीं था। मिन्नत करने ? ललचाने ? कुन्दन ने यदि सुरेश जी की अर्द्धांगिनी बनना स्वीकार कर लिया, तो उसकी पांचों उँगलियां किस तरह घी में होंगी—यही समझाने ?

कुन्दन के लिए यह सब बेहद बौखलाहट-भरा होगा, किन्तु...शायद छुटकारा नहीं था। 'शायद' क्यों ? छुटकारा था ही नहीं। वह बैठी-बिठाई पकड़ी गई है। अब उन घटिया संवादों का मुक़ाबला करना ही होगा।

मगर—यह मुक़ाबला आखिर कहां हो ? क्या यहीं बैठें-बैठे ? इतने-इतने कर्मचारियों की मौजूदगी में ?

नहीं।

उठ कर कहीं और चले जाना चाहिए। किसी को भनक भी नहीं मिलनी चाहिए कि सुरेश जी किस प्रकार के रिश्ते के लिए आतुर हैं...साथ काम करते लोग चिढ़ा-चिढ़ाकर कुन्दन को नाक में दम कर देंगे।

"बहुत व्यस्त हैं ?" सुरेश जी पूछ रहे थे।

कुन्दन ने इस वाक्य का सहारा तुरन्त ले लिया, "नहीं, नहीं, आइए... चाय पसन्द करेंगे या कॉफी ?" और वह इस प्रकार उठ पड़ी, गोया सुरेश जी को इन्कार करने का कोई अवसर न देना चाहती हो।

सुरेश जी भी उठे।

दोनों अगल-बग़ल चलते रहे। दोनों की ऊँचाई में विशेष अन्तर नहीं था। सुरेश जी एकाध इंच से ज्यादा ऊँचे नहीं थे कुन्दन की तुलना में...

लेकिन...कुन्दन को, मन-ही-मन यों आपसी ऊँचाइयों की तुलना करने की जरूरत क्या है ?

कुन्दन ऐसी सहजता का दिखावा कर रही थी, गोया किसी 'आफिशियल' कार्य से कोई मिलने आया है, जिसे वह कैंटीन में ले जा रही है। ऐसे मिलने वालों की संख्या खासी बड़ी थी। सुरेश जी को वह उसी संख्या के बीच गुमा देना चाहती थी।

सौभाग्य से कैंटीन सूना मिल गया। एक कोने में वे आमने-सामने बैठे। संवाद शुरू किस तरह किए जाएँ, यह बात किसी समस्या का रूप न लेने पाई। सुरेश जी ने ही शुरू किया, 'नया ट्रैक्टर खरीदना था। इस बहाने दिल्ली चला आया। सोचा नहीं था कि आपसे भी मिलने का अवसर निकालूँगा, किन्तु ..किसी तरह अवसर निकल ही गया। कइयों से आपके आधुनिक विचारों के बारे में सुन रखा था। इसी लिए तसल्ली-सी थी कि यदि अचानक मैं सामने आ गया, तो आप बुरा नहीं मानेंगी।"

"लेकिन..." कुन्दन जरूरत से ज्यादा नम्र भी नहीं बनना चाहती थी, "आपने सुना तो यह भी होगा कि मैं...कि मेरा क्या फैसला है...?"

"क्यों नहीं ? आपका फैसला मैं जानता हूँ। दरअसल...खास इसी वजह से भी, आपसे मिलने के लिए उत्सुक था।"

कुन्दन कुछ न बोली। सुरेश जी जिस उत्साह से बातें कर रहे थे, उस से वह समझ चुकी थी कि सुरेश जी पूरी तैयारी के साथ आए हैं। बातों का सिलसिला रुक जाए, असहनीय मौन छा जाने लगे—ऐसा सुरेश जी कभी न होने देंगे। रुके हुए सिलसिले को शुरू किस प्रकार किया जाए, इसके अनेक तरीके उन्होंने याद कर रखे होंगे।

मौन छा जाने लगता, किन्तु सचमुच सुरेश जी के ही कारण ऐसा न होने पाया। वह मुस्कान के साथ बोले, "कबीर ने कहा है, 'निन्दक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय'। मैं आपके मुँह से अपनी निन्दा सुनने आया हूँ।" इसके साथ ही यदि उन्होंने अपनी मुस्कान गहरी न कर दी होती, तो कुन्दन वास्तव में अकुला जाती।

किन्तु सुरेश जी सौजन्य भाव से, गहन-गहन, मुस्करा रहे थे।

'ओह, नो, प्लीज..." कुन्दन तपाक से बोली, "ऐसा न सोचिए। मैं

आज तक कभी किसी के सामने आपकी निन्दा में एक शब्द नहीं कहा है।"

"कहा होता, तो बेहतर रहता, क्योंकि तब मैं जान तो सकता कि... कि...आखिर वह आधार क्या है, जिससे आप मुझे...मेरा मतलब है...।" उतने उन्मुक्त दीखते सुरेश जी भी, सहसा असहज हो गए। वाक्य पूरा करने में उन्हें अत्यन्त संकोच हो रहा था।

"मैं आपका मतलब समझ गई।" कुन्दन ने तुरन्त कहा, ताकि उन्हें असहज स्थिति से छुटकारा दिला सके।

सुरेश जी मुस्कराए—मुस्कान, जो अभी-अभी डूबने लगी थी—बोले, "मैं बहुत स्पष्टवादी व्यक्ति हूँ। देहात का हूँ न। लट्ठमार।"

"मुझे स्पष्टवादिता अच्छी लगती है।" कुन्दन बोली।

"मेरा सौभाग्य...!"

उसी समय चाय आ गई। दोनों ने चुस्कियाँ लीं।

सुरेश जी का स्वर—"मैंने इस पर काफी सोचा है। यदि अनुमति हो, तो अपना विश्लेषण सामने रखूँ।"

"जी?" कुन्दन ने ऐसी बात की आशा नहीं रखी थी। उसने पलकें झपकाईं।

"मैंने काफी सोचा है कि आप...आखिर क्यों इन्कार कर रही हैं।"

"मैं भी जानना चाहूँगी।" कुन्दन को कहना पड़ा, "वास्तव में, अपने इंकार का सही-सही कारण मेरे सामने भी स्पष्ट नहीं। एक हिचक-सी है। बस। देखूँ, आप क्या सोचते हैं?"

"ऐसा है, पहला कारण तो यही हो सकता है कि मैं...विधुर हूँ, किन्तु—आपकी आधुनिकता को देखते हुए—मैं नहीं सोचता कि... क्योंकि—मेरी उम्र कोई उतनी नहीं है कि आप इसे ध्यान में रखें।"

कुन्दन ने साहस के साथ स्वीकार किया, "दरअसल...माँ मुझे हमेशा कहती रहीं कि आपकी उम्र 'कोई उतनी' नहीं है, लेकिन...'कोई उतनी' का क्या मतलब मैं लगाती? माँ ने उम्र का आँकड़ा भी मेरे सामने रखा, लेकिन मेरे मन में अविश्वास बैठ चुका था। यह आइडिया ही, दरअसल, मुझे पचता नहीं है कि मैं किसी विधुर से शादी करूँ।"

"हाँ, लेकिन यदि मैं विधुर हूँ, तो यह मेरा अपराध नहीं है। वैसे तो...

चेहरे आदि से उम्र का सही अन्दाजा नहीं लगता, किन्तु...फिर भी...जैसा कि आप स्वयं देख सकती हैं, हमारी उम्र में इतना बड़ा फर्क नहीं कि...।"

कुन्दन चुप रही। सुरेश जी का संकेत वह समझ गई थी। स्वयं कुन्दन की उम्र भी—एक कुंआरी लड़की के लिए—कोई कम नहीं कही जा सकती...।

"बहरहाल..." सुरेश जी ने जारी रखा, "दूसरा कारण, जो मेरी समझ में आता है, यह है कि आप बम्बई जैसा शहर छोड़ना नहीं चाहती। मैं देहात में रहता हूँ, खेती-बाड़ी करता हूँ। आपको मेरे साथ देहात में ही रहना होगा।"

"नहीं, मेरे मन में ऐसी कोई हिचक नहीं।" कुन्दन बोली, "मुझे मालूम है, शहर के मशीनी जीवन से गाँव का सरल जीवन कहीं बेहतर है।"

"मुमकिन है, एक हिचक यह हो कि आपको नौकरी छोड़नी पड़ेगी, लेकिन नौकरी तो गाँव में भी की जा सकती है। गाँव की चुनौतियाँ शहरी चुनौतियों से किसी प्रकार कम नहीं। समय कैसे कटे, यह समस्या आपके सामने न होगी। गाँव में तनख्वाह जरूर कम मिलेगी, किन्तु—चूंकि मुझे ऐसी कोई आर्थिक तकलीफ नहीं—नौकरी आप धनोपार्जन के लिए नहीं, बल्कि जीवन में कोई सार्थकता ढूंढने के लिए करेंगी। इसलिए, यदि आप सोचती हैं कि गाँव में मन कैसे बहलेगा, तो ..यह आशंका निर्मूल ही है।"

कुन्दन चुप रही।

सुरेश जी ने कुछ क्षण इन्तजार किया कि शायद कुन्दन कुछ कहे। उसे चुप ही देखकर उन्हीं ने आगे चलाया, "मेरी कोई सन्तान नहीं। किसी बच्चे की जिम्मेदारी भी आप पर नहीं आने वाली...।"

"प्लीज़..." कुन्दन एकदम अकुला गई, "हमारी बातचीत को बातचीत तक ही रहना चाहिए। यदि इसे बहस का रूप मिल गया, तो...।"

"माफ कीजिएगा..." सुरेश जी ने तुरन्त ही अपने स्वर में उभरते आ रहे आक्रोश-जैसे भाव को वश में कर लिया, "दरअसल...खैर, छोड़िए...।"

दो पल का मौन। फिर—

चूंकि ऐसा लग नहीं रहा था कि बातचीत समाप्त हो गई और चूंकि कुन्दन कुछ बोल नहीं रही थी, सुरेश जी ने ही शुरू किया, "विस्तार को

छोड़कर. अब मैं आख़िरी नुक्ते पर आता हूँ।"

"जी...!"

"वास्तव में, यह आख़िरी नुक्ता ही मेरा विश्लेषण है। शेष सारी बातें तो आम बातें थीं..." सुरेश जी ने चाय का अपना कप ख़ाली कर नीचे रख दिया, "आख़िरी नुक्ता यह कि आपकी हिचक का कारण कोई ऐसी दीवार भी हो सकती है, जो केवल आपके मन में है।"

"यदि आप दार्शनिक शैली न अपनाएँ, तो...मुझे सुविधा रहेगी।" कुन्दन बोली। उसने स्वयं को, मन-ही-मन, दूसरी बार याद दिलाया कि ज़रूरत से ज़्यादा नम्र भी उसे नहीं होना है। हर तरह से उसकी स्थिति सुरेश जी से ऊँची है। सुरेश जी उसके सामने—अभी—याचक बनकर आए हैं।

"सीधे, सरल शब्दों पर ही मैं आ रहा था। ऐसा है, कुन्दन जी... सौभाग्य कहिए या दुर्भाग्य...मैं धनवान हूँ और...मेरा धन ही आपकी हिचक का कारण हो सकता है। मैं दहेज नहीं लूँगा—इसका अर्थ आपने शायद यह लगाया हो कि मैं आपको—क्षमा कीजिएगा—शायद आपने सोचा हो कि मैं आपको ख़रीदना चाहता हूँ, जबकि वास्तविकता यह है कि यदि मैं ग़रीब होता, तब भी...दहेज लेने से इन्कार कर देता। मैं सैद्धान्तिक धरातल पर इस प्रथा के ख़िलाफ़ हूँ। जब तक यह प्रथा ज़िन्दा है, भारतीय नारी कभी पुरुष की बराबरी में न आ सकेगी।"

यह सारी बात सुरेश जी एक साँस में, जल्दी-जल्दी कह गए, मानो उस बात को वह शीघ्रातिशीघ्र 'व्यतीत' की श्रेणी में पहुँचा देने को आतुर हों। कुन्दन को फिर से अकुलाहट होने लगी थी, किन्तु सुरेश जी को चुप कराने की स्थिति में वह नहीं थी।

"मैं यही कहूँगा कि धन बुरी चीज़ नहीं है। धन यानी शक्ति, क्षमता—और बिना क्षमता के आप कुछ नहीं कर सकते। हर व्यक्ति महात्मा गांधी नहीं हो सकता, जिसके पास धन के नाम पर लाठी और लंगोटी ही थी।"

"सुरेश जी...प्लीज़...मुझे आपके धन के प्रति कोई असहजता नहीं है। मैं नहीं जानती, आपने ऐसा सोच कैसे लिया।"

"फिर बताइए, आपके इन्कार का आधार क्या है?"

"अब तक तो मैं आपकी उम्र को लेकर हिचक रही थी, लेकिन अब...।"

सुरेश जी की आँखें चमक उठीं।

कुन्दन ने उस चमक का अर्थ समझा और तुरन्त कहा, "लेकिन अब भी मेरे मन में जो हिचक है, उसका कारण क्या है, मैं कहना नहीं बता सकती। मैं स्वयं समझने की कोशिश करूँगी।"

"मेरा आपसे मिलना सार्थक रहा।" सुरेश जी बोले, हालाँकि उनकी आँखों की चमक कम हो चुकी थी। उसकी जगह सावधानी का सूचक एक पैनापन आ गया था।

"लेकिन एक सवाल मैं जरूर पूछना चाहूँगी।" कुन्दन से न रहा गया।

"क्या ?"

"क्या इस दुनिया में केवल मैं ही हूँ, जिसे आप...?" कुन्दन ने वाक्य अधूरा रहने दिया।

"न जाने क्यों, घर से चलते वक्त ही मुझे मालूम था, आप यह जरूर पूछेंगी। जवाब मैं सोचकर नहीं आया हूँ। जवाब पहले से ही...यों कहिए ...पहले से ही मौजूद है। वह यह कि...मेरे सामने एक नहीं, अनेक प्रस्ताव आ चुके हैं। मुश्किल यह है कि वे सभी प्रस्ताव, या कहिए कि अधिकांश प्रस्ताव, योग्य कन्याओं के होते हुए भी, मन में कहीं मुझे यह खटका है कि उनके लिए सबसे बड़ा आकर्षण मेरा धन है। ठीक है, धन बुरी चीज नहीं, किन्तु धन को ही सबसे बड़ा आकर्षण नहीं बनना चाहिए। आपका मामला उल्टा है। आप न केवल मेरे धन को, स्वयं मुझे भी नकारती रही हैं—या कहूँ कि...इस वक्त भी नकार रही हैं।"

कुन्दन सुनती रही।

कुन्दन स्वयं को सावधान कर रही थी, 'होशियार, यह व्यक्ति तुझे अपने प्रभाव में लेना चाहता है, कुन्दन ! यह तुझे मक्खन लगा रहा है। बच कर...।'

और कुन्दन का चेहरा एकदम निर्विकार था।

सुरेश जी का स्वर जारी रहा, "इसीलिए—आपका इन्कार मेरे लिए एक चुनौती है। मैं...ऐसा न सोचिएगा कि मैं...आपके इन्कार को पलटने की चेष्टा में हूँ। न। ऐसा नहीं है। यदि आपका इन्कार बरकरार

हता है, तो भी मुझे दुःख नहीं। जो अनेक प्रस्ताव मेरे सामने हैं, उन्हीं में
किसी को स्वीकार कर लूंगा। किन्तु...जानती हूँ, अभी आपसे मिलने
का मूल कारण क्या है? आप शौक से इन्कार करिए, किन्तु इन्कार का ठोस
कारण भी बताना होगा। बस। मुझे और कुछ नहीं कहना।"

और सुरेश जी झटके के साथ उठ पड़े।

८

"धन के नाम पर हमारे पास जो-कुछ भी है, वह तेज़ी से शून्य की ओर बढ़ रहा है, भीमा।" चम्पक ने चिन्तातुर स्वर में कहा।

भीमा चुप रहा। देशराज भी। कहने के लिए उनके पास था ही क्या?

उन तीनों के बीच सर्वाधिक बातूनी था चम्पक। सुख या दुःख की हर घड़ी में, सबसे ज्यादा वही बोला करता। अपनी इस परम्परा को वह आज भी निभा रहा था। दोनों साथियों को चुप देखकर उसी ने आगे चलाया, "क्या करें? कैसे करें?"

"तोते की तरह बार-बार एक ही वाक्य न दोहराओ।" भीमा चिढ़ गया।

"लेकिन, भीमा, यक़ीन जानो, चाहे ज़मीन-आसमान एक करना पड़े, मैं तुम्हें अभिनेता बनाकर छोड़ूंगा।"

भीमा और देशराज का साथ छोड़कर, चम्पक, सारा-सारा दिन जो गायब हो जाता था, उसका कारण भीमा और देशराज ने यही समझा था कि वह विभिन्न फिल्म-निर्माताओं के घरों और दफ्तरों के चक्कर काटने लगा है।

वास्तविकता यह थी कि चम्पक के अधिकांश चक्कर उन दोस्तों के ठिकानों पर ही लगे थे, जिनसे उसने कुछ रक़म उधार पाने की आशा रखी थी।

कुछेक चक्कर उसने फिल्मी हस्तियों के यहां भी लगाये थे, किन्तु—सभी तरफ निराशा।

फिल्मी हस्तियों ने साफ जवाब दिया, "इण्डस्ट्री के पास एक 'पहलवान अभिनेता' है—सूबासिंह। एक बहुत है। दूसरे की गुंजाइश यहाँ से निकालें ?"

और दोस्तों के यहाँ ?

अधिकांश ठिकानों पर चम्पक को जवाब मिला, "यार... दो दिन पहले आते। एक रकम अलग रखी थी। किसी को परसों ही दे दी। सॉरी !"

कुछेक जगह जवाब मिला, "नहीं, यार, जेब बिलकुल खाली है। तुम्हीं कुछ इन्तज़ाम कर दो।"

कुछेक जगह दोस्तों से मुलाकात ही न हो सकी। कुछ दोस्त शहर से बाहर थे, कुछ अपने ठिकाने से गायब। चम्पक उड़ता पंछी था। कभी इस शहर में, कभी उस शहर में। उसके दोस्त, इसीलिए, अनेक शहरों में बिखरे पड़े थे—किन्तु उनमें से कितनों को 'अंतरंग' माना जाए, चम्पक ने पहली बार पहचाना। अन्य शहरों की ईश्वर जाने, किन्तु बम्बई में तो 'अन्तरंग' की श्रेणी पाने वाले लगभग न के बराबर साबित हुए।

'अब तो कोई चमत्कार ही मेरी जेब गर्म कर सकता है।' सप्ताह के अन्त में चम्पक ने सोचा।

राजन का फोन आया था—'डबल' बनने का प्रस्ताव...।

फोन चम्पक ने उठाया था—और उसने राजन को किस बुरी तरह झिड़क दिया था। "भंगी का काम एक राजा से कराना चाहते हो ?" कहा था चम्पक ने,"अपने सूबासिंह को खबर कर देना—भीमा को तो उसकी टक्कर का अभिनेता बनाया जाएगा। सूबासिंह है किस ख़याल में ?"

चम्पक यदि राजन को न झिड़कता, तब भी स्थिति में कौन-सा फर्क पड़ जाता ? भीमा और देशराज के सामने चम्पक ने स्पष्ट किया था, "उस राजन के बच्चे को खूब पहचानता हूँ। वह अदना-सा एक्स्ट्रा-सप्लायर है। 'डबल' बनकर आखिर प्राप्त ही क्या होगा ? इस काम में न इज्ज़त है, न पैसा। ग़लत सोचते हो कि 'डबल' बनने वाला जल्द ही मालामाल हो जाता है। जान हथेली पर रखकर, खतरनाक शूटिंग में भाग लो—और पाओ क्या ? सिर्फ इतना कि भूखे न रहो। बस। लेकिन भीमा ! अभी हमारी हालत भुखमरी वाली नहीं है।"

सही तसवीर सामने आने के बाद देशराज और भीमा ने 'डबल' बनने वाला प्रस्ताव न केवल भुला दिया था बल्कि ऐसा प्रस्ताव रखने वाले राजन प्रति वे दोनों गहरे आक्रोश से भी भर उठे थे।

दैनिक अखबारों का 'जगह खाली है' कॉलम भीमा रोज पढ़ा करता। सब जगह अनुभवी व्यक्तियों की जरूरत थी...हुंह...जैसे कोई माँ के पेट से ही अनुभव लेकर आ सकता हो !

अनुभवी—या फिर, बहुत ज्यादा पढ़े-लिखे।

और भीमा बहुत ज्यादा पढ़े-लिखे लोगों में से नहीं था। केवल इंटर पास किया था उसने। पहलवानी में उलझने के बाद तो इंटर तक की विद्या भी जैसे हवा में घुल गई थी।

तो क्या करें भीमा ? चपरासी बने ?

चपरासी बनने के लिए भी साइकल चलाना आवश्यक शर्त थी—और भीमा ने कभी साइकल चलाना नहीं सीखा। "मुझे साइकल से ज्यादा तेज तो मेरी टाँगें ही ले जा सकती हैं।" शुरू से ही भीमा की 'फिलासफी' इस श्रेणी की रही।

तो ? क्या भीमा साइकल चलाना शुरू करे ? सीख ले ?

लेकिन—

क्या दुनिया में यही एक काम बाकी रह गया है ? चपरासी बनना ?

'मुझे ऐसे घटिया ढंग से सोचना भी नहीं चाहिए।' भीमा स्वयं को समझाया करता, 'एक ओर यह चम्पक है, जो मुझे फिल्मी अभिनेता बना कर लाखों कमाने की सोच रहा है। कमा सके या न कमा सके, यह दीगर बात है—उतने ऊँचे ढंग से वह सोच तो सकता है न ! मैं क्यों इतने ओछे ढंग से सोचूं ?'

मगर दिनोंदिन उसका हौसला पस्त हो रहा था। यही हालत देशराज की थी।

ट्रिन-ट्रिन...!

फोन बजा। गेस्ट-हाउस के मैनेजर ने रिसीवर उठाया, "हैलो...!"

"ज़रा भीमा जी को बुला दीजिए। जरूरी बात करनी है।" किसी पुरुष-स्वर ने कहा।

मैनेजर ने भीमा को बुलाने के लिए नौकर रवाना किया। एक मिनट भी मुश्किल से बीता होगा कि भीमा ने आकर रिसीवर उठाया, "हैलो ! मैं—भीमा।"

"बधाई—भीमा साहब।" उस पुरुष-स्वर में व्यंग्य की कमी नहीं थी।

भीमा सावधान हुआ, "बधाई ? किस बात की ?"

"आज के ज़माने में ऊँचे ख्वाब देखना भी बधाई की बात है।"

"क्या मतलब ?"

"अगर एक पहलवान अभिनेता बन गया, तो इसका मतलब यह तो नहीं कि दुनिया का हर पहलवान अभिनेता बन सकता हो।"

"आप कौन साहब बोल रहे हैं ?"

"नाम जानकर क्या करेंगे ?" पुरुष-स्वर ने पूरी ठसक के साथ जवाब दिया, "मोटे तौर पर यूँ समझिए—आपका शुभचिन्तक हूँ।"

"शुक्रिया, लेकिन मुझे गुमनाम लोगों से बात करना पसन्द नहीं है।"—और भीमा ने कनेक्शन काट दिया।

मैनेजर के कानों तक भीमा के शब्द पहुँचे ही थे। ज्यों ही भीमा ने रिसीवर रखा, मैनेजर ने पूछा, "किस का फोन था, भीमा साहब ?"

"पता नहीं कौन था..." भीमा बुदबुदाया, "किसी से मेरी दुश्मनी नहीं, लेकिन लोग दुश्मन बनना चाहते हैं।"

"बातचीत से ऐसा लगा, जैसे कोई आपको धमकी-सी दे रहा हो...?"

"यही समझ लीजिए।" भीमा बुदबुदाया।

"मेरा ख़याल है, फोन दूसरी-तीसरी बार भी आएगा।" मैनेजर बोला, "क्या करूँ ? आपको बुलाऊँ या नहीं ?"

"हमेशा फोन करने वाले का नाम पूछिए। यदि बताने से इन्कार करे, तो एक ही जवाब दीजिए,'ग़लत नम्बर'। वह दूसरी बार नम्बर मिलाएगा, तीसरी बार मिलाएगा—जितनी बार मिलाए, यही कहिए,'ग़लत नम्बर'।"

"ओके, बॉस !" मैनेजर मुस्कराया। भीमा को कभी-कभी 'बॉस' कह देना उसकी पुरानी आदत थी। यह शब्द भीमा को पसन्द भी था, किन्तु—आज ?

भीमा को लगा, मैनेजर व्यंग्य कर रहा है। किस का 'बॉस'

का मालिक ?

नजर झुकाकर भीमा अपने कमरे की ओर जाने लगा।

दूसरे दिन फोन आया। फोन करने वाले ने नाम बताने से इन्कार
या। मैनेजर ने कनेक्शन काट दिया और काटने के बाद ही भीमा को
चित किया, "उसी शख्स का फोन था...।"

भीमा चिन्तित होने लगा। धमकियों पर ध्यान न देना ही उनका
मुक़ाबला करने का सबसे अच्छा तरीक़ा होता है, लेकिन...क्या कभी-कभी
धमकियों के अनुसार लोग कार्य भी नहीं कर डालते ? धमकी—कि तुम्हारा
बेटा हम उठा ले जाएँगे...और क्या सचमुच बेटे को उठा नहीं लिया
जाता ? धमकी—कि अगर इतनी मियाद में इतना रुपया इस-इस जगह
नहीं पहुँचाया और अगर पुलिस की सहायता लेने की चेष्टा की, तो तुम्हारे
बेटे का अंग-भंग कर दिया जाएगा—और क्या सचमुच बेटे का अंग-भंग
नहीं कर दिया जाता ?

भीमा को लगा, उस आदमी से बात करना ज़रूरी है। आखिर पता
तो चले कि वह किस प्रकार की धमकी देना चाहता है। अभी सिर्फ इतना
आभास मिला है कि उस व्यक्ति को भीमा के अभिनेता बनने का प्रयास
करने पर एतराज है—लेकिन यदि भीमा ने प्रयास न छोड़ा, तो ? भीम
की ओर से चम्पक ने प्रयास न छोड़ा, तो ? क्या करेगा वह व्यक्ति ?

देशराज और चम्पक से उसने रहस्यमय फोन आने वाली बात अ
छिपा रखी थी। संयोग की बात कि जब भी फोन आया, ये दोनों गा
अनुपस्थित थे, या किसी छोटे-मोटे काम में व्यस्त।

आदेशानुसार, मैनेजर ने इस बार फोन आने पर कनेक्शन काटा
बल्कि भीमा को बुला दिया। रिसीवर कान से लगाते हुए भीमा ने
स्वर में शुरू किया, "कहिए ?"

"खूब रही, भीमा साहब ! खूब ग़ायब हुए आप। ऐसी
कायरता ! फोन पर बात करने में कोई खतरा नहीं।" वही पुरुष-

भीमा ने कहा, "कायरता किस में है ? नाम न बताने वाले मे
नाम फोन की उपेक्षा करने वाले में ?"

"ओहो...!" वह अनजान पुरुष व्यंग्य से हँस दिया, "तो ह

वान साहब आज बहुत खीझे हुए हैं...?"

"फिजूल की बातों में वक्त जाया न कीजिए। बताइए, आप मुझे क्या सन्देश देना चाहते हैं।"

"अभिनेता बनने के ख्वाब छोड़ दो।"

"ऐसे ख्वाब मैंने कभी देखे ही नहीं, लेकिन मुझे जहाँ भी रोजी-रोटी मिलेगी, मैं जाऊँगा।"

"तुम कभी अभिनेता नहीं बन सकोगे।"

"न सही, लेकिन अगर मैंने कोशिश की, तो आप क्या करेंगे ?" भीमा ने पूछा। वह जल्दी-से-जल्दी धमकी का स्वरूप जान लेना चाहता था।

"कुछ भी कर सकता हूँ।"

"फिर भी ?"

"यह तो वक्त ही बताएगा।"

"यानी—आपमें न अपना नाम बताने का साहस है, न यह बताने की सूझबूझ कि आप किस-किस प्रकार मुझे नुकसान पहुँचा सकते हैं। बधाई, मिस्टर अनजाने।"

"बधाई स्वीकृत है।"

"वैसे...मैं अन्दाजा लगा सकता हूँ कि आप किस की ओर से बोल रहे हैं।"

"बहुत खूब ! यानी आप केवल बलवान नहीं, बुद्धिमान भी हैं।"

एक-एक शब्द जैसे भीमा के सीने के पार निकल गया, किन्तु उसने अपना संयम न खोया और पूछा, "आपने बताया नहीं कि अगर मैंने अभिनेता बनने का प्रयास न छोड़ा, तो आप क्या करेंगे।"

"कुछ भी...कुछ भी...।" पुरुष खतरनाक ढंग से बुदबुदाया। इसके साथ ही उसने फोन का कनेक्शन काट दिया।

उलझन में पड़ते हुए भीमा ने रिसीवर रखा। धमकी का स्वरूप आज भी अज्ञात रह गया था।

अब भीमा चम्पक से चर्चा किए बिना न रह सका। देवराज भी मौजूद था। चम्पक ने सारी बात सुनकर प्रसन्नता से कहा, "इसका केवल एक मतलब है। वह यह कि जो सपने मैं देख रहा हूँ, वे एकदम आधारहीन

हैं। मैं फिल्मी हस्तियों के पास चक्कर लगा रहा हूँ, यह बात किसी से छिपी नहीं। एक-दो फिल्मी पत्रिकाओं ने इसका नोटिस भी लिया है। ज़ाहिर है कि यह समाचार सूबासिंह तक पहुँच चुका है और उसके कान खड़े हो गए हैं। ये धमकियाँ उसीके इशारे पर दी जा रही हैं।"

धमकियाँ सुनने का भीमा के लिए यह पहला अवसर था। उसके चेहरे से ही प्रकट था कि वह हचमचाया हुआ है...।

चम्पक ने इस तरह आगे चलाया, जैसे अपने-आप से बातें कर रहा हो, "फिल्म-इंडस्ट्री में एक से अधिक पहलवान-हीरो के लिए गुंजाइश नहीं है, यह साफ़ दीखता है। सूबासिंह है जमा-जमाया। यानी—हम लोग या तो जमेंगे ही नहीं, और यदि जम गए, तो सूबासिंह को उखड़ना होगा। सूबासिंह हम से डर गया है, वरना यों धमकियाँ दिलवाने की उसे न सूझती। चूँकि वह डर गया है, हमें यह मान कर चलना चाहिए कि हम वास्तव में सफल हो सकते हैं।"

भीमा ने कुढ़ते हुए सिर हिलाया, "कैसा अभिनय, कैसी बात ! कुछ अतापता ही नहीं, और धमकियाँ चालू ! कमाल है ! इससे बेहतर तो यही रहेगा कि..."

चम्पक ने उसे वाक्य पूरा न करने दिया और कहा, "देखो यार, तुम ने एक बार अपना भविष्य मेरे हाथों में सौंपा था। मैंने तुम्हें प्रसिद्ध पहलवान के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई या नहीं ? एक और बार अपना भविष्य मुझे सौंपो। मैं तुम्हें अभिनेता के रूप में प्रतिष्ठा दिलाकर रहूँगा।"

"सुन-सुनकर मेरे कान पक गए है।" भीमा नाराज़ होने लगा था।

मगर चम्पक की आँखें चमक रही थीं।

अगली बार जब उस अनजान पुरुष का फोन आया, तो चम्पक भीमा की बग़ल में ही खड़ा था। "क्या सोचा आप ने, भीमा साहब ? अभिनेता बनने का ख्वाब अभी तक छोड़ा या नहीं ?" पुरुष-स्वर ने पूछा।

"आप तो सीधे से यह बताइए कि यदि मैंने ख्वाब नहीं छोड़ा, तो आप क्या करेंगे।" भीमा ने अपना वही सवाल दोहरा दिया।

"यह मेरा आख़िरी फोन है।" पुरुष बोला, "अगर असली पहलवानी नहीं कर सकते, तो नक़ली करो—या बिलकुल मत करो...कुछ भी करो,

लेकिन एक्टिंग-वेक्टिंग का शौक छोड़ दो।"

उसी समय, सहसा, चम्पक ने भीमा के हाथ से रिसीवर ले लिया और कड़ककर पूछा, "कौन बोल रहा है ?"

दूसरी ओर से कोई जवाब न आया।

चम्पक ने आँखें सिकोड़कर, फिर से, उसी कड़कती आवाज में कहा, "कौन ? राजन ? ठहर, राजन के बच्चे...!"

इसका भी कोई जवाब दूसरी ओर से न आया।

और, तब, अचानक, दूसरी ओर से कनेक्शन काट दिया गया।

९

ठीक अगले दिन, सुबह-सुबह—

बन्द दरवाजे पर खट-खट।

"कौन ?" लेटे हुए भीमा ने पूछा। देशराज और चम्पक चुपचाप नाश्ता करते रहे।

"जी...मैं राजन...।" संकोची स्वर।

चम्पक ने आश्चर्य से देखा भीमा की ओर। कल जब चम्पक ने फोन पर कड़ककर कहा था, 'कौन ? राजन के बच्चे...' तो दूसरी ओर से चुपचाप कनेक्शन कट गया था। इसका अर्थ चम्पक ने यही लगाया था कि फोन पर राजन ही बोल रहा था—आवाज़ बदल कर।

लेकिन यदि फोन पर राजन ही था, तो आज ही वह भीमा के सामने कैसे मौजूद हो सकता है ? इतनी हिम्मत कैसे जुटा सकता है राजन ?

नाश्ते की प्लेट एक तरफ सरकाकर चम्पक उठा। दरवाजा खुलने के साथ ज्यों ही राजन ने प्रवेश किया, चम्पक ने उसका गला पकड़ लिया। देशराज ने लपककर सिटकनी चढाई।

"क्यों बे, फोन पर धमकियाँ देकर तसल्ली नहीं हुई ?" चम्पक ने आँखें तरेर कर पूछा और राजन को हुचमचा डाला।

हैं। मैं फिल्मी हस्तियों के पास चक्कर लगा रहा हूँ, यह बात किसी से छिपी नहीं। एक-दो फिल्मी पत्रिकाओं ने इसका नोटिस भी लिया है। ज़ाहिर है कि यह समाचार सूर्वासिंह तक पहुँच चुका है और उसके कान खड़े हो गए हैं। ये धमकियाँ उसीके इशारे पर दी जा रही हैं।"

धमकियाँ सुनने का भीमा के लिए यह पहला अवसर था। उसके चेहरे से ही प्रकट था कि वह हचमचाया हुआ है...।

चम्पक ने इस तरह आगे चलाया, जैसे अपने-आप से बातें कर रहा हो, "फिल्म-इंडस्ट्री में एक से अधिक पहलवान-हीरो के लिए गुंजाइश नहीं है, यह साफ दीखता है। सूर्वासिंह है जमा-जमाया। यानी—हम लोग या तो जमेंगे ही नहीं, और यदि जम गएँ, तो सूर्वासिंह को उखड़ना होगा। सूर्वा-सिंह हम से डर गया है, वरना यों धमकियाँ दिलवाने की उसे न सूझती। चूँकि वह डर गया है, हमें यह मान कर चलना चाहिए कि हम वास्तव में सफल हो सकते हैं।"

भीमा ने कुढ़ते हुए सिर हिलाया, "कैसा अभिनय, कैसी बात ! कुछ अतापता ही नहीं, और धमकियाँ चालू ! कमाल है ! इससे बेहतर तो यही रहेगा कि..."

चम्पक ने उसे वाक्य पूरा न करने दिया और कहा, "देखो यार, तुम ने एक बार अपना भविष्य मेरे हाथों में सौंपा था। मैंने तुम्हें प्रसिद्ध पहल-वान के रूप में प्रतिष्ठा दिलाई या नहीं ? एक और बार अपना भविष्य मुझे सौंपो। मैं तुम्हें अभिनेता के रूप में प्रतिष्ठा दिलाकर रहूँगा।"

"सुन-सुनकर मेरे कान पक गए है।" भीमा नाराज होने लगा था।

मगर चम्पक की आँखें चमक रही थीं।

अगली बार जब उस अनजान पुरुष का फोन आया, तो चम्पक भीमा की बग़ल में ही खड़ा था। "क्या सोचा आप ने, भीमा साहब ? अभिनेता बनने का ख्वाब अभी तक छोड़ा या नहीं ?" पुरुष-स्वर ने पूछा।

"आप तो सीधे से यह बताइए कि यदि मैंने ख्वाब नहीं छोड़ा, तो आप क्या करेंगे।" भीमा ने अपना वही सवाल दोहरा दिया।

"यह मेरा आखिरी फोन है।" पुरुष बोला, "अगर असली पहलवानी नहीं कर सकते, तो नक़ली करो—या बिलकुल मत करो...कुछ भी करो,

लेकिन एक्टिंग-वेक्टिंग का शौक छोड़ दो।"

उसी समय, सहसा, चम्पक ने भीमा के हाथ से रिसीवर ले लिया और कड़ककर पूछा, "कौन बोल रहा है?"

दूसरी ओर से कोई जवाब न आया।

चम्पक ने आँखें सिकोड़कर, फिर से, उसी कड़कती आवाज में कहा, "कौन? राजन? ठहर, राजन के बच्चे...!"

इसका भी कोई जवाब दूसरी ओर से न आया।

और, तब, अचानक, दूसरी ओर से कनेक्शन काट दिया गया।

९

ठीक अगले दिन, सुबह-सुबह—

बन्द दरवाजे पर खट-खट।

"कौन?" लेटे हुए भीमा ने पूछा। देशराज और चम्पक चुपचाप नाश्ता करते रहे।

"जी...मैं राजन...।" सकोची स्वर।

चम्पक ने आश्चर्य से देखा भीमा की ओर। कल जब चम्पक ने फोन पर कड़ककर कहा था, 'कौन? राजन के बच्चे...' तो दूसरी ओर से चुपचाप कनेक्शन कट गया था। इसका अर्थ चम्पक ने यही लगाया था कि फोन पर राजन ही बोल रहा था—आवाज बदल कर।

लेकिन यदि फोन पर राजन ही था, तो आज ही वह भीमा के सामने कैसे मौजूद हो सकता है? इतनी हिम्मत कैसे जुटा सकता है राजन?

नाश्ते की प्लेट एक तरफ सरकाकर चम्पक उठा। दरवाजा खुलने के साथ ज्यों ही राजन ने प्रवेश किया, चम्पक ने उसका गला पकड़ लिया। देशराज ने लपककर सिटकनी चढ़ाई।

"क्यों बे, फोन पर धमकियाँ देकर तसल्ली नहीं हुई?" चम्पक ने आँखें तरेर कर पूछा और राजन को झकझोर डाला।

भय और आश्चर्य से राजन की घिग्घी बँध गई, "जी ? ज-ज-ज जी ?"

"क्या 'जीजी-जीजी' लगा रखा है ?" देशराज हँसा, "यहाँ कहाँ है तेरी जीजी ? यहाँ तो तीनों तेरे जीजा बैठे हैं।"

"बोल ? क्यों आया है ?" चम्पक ने राजन को इतने ज़ोर से धकेला कि वह गिरते-गिरते बचा।

"यह क्या ? मैंने क्या किया है ?" राजन की आवाज़ थरथरा रही थी, "मेरा क्या कुसूर है ?"

तड़पकर चम्पक दूसरी बार उसका गला पकड़ने वाला था, किन्तु भीमा का संकेत पाकर रुक गया। राजन उठा और काँपता हुआ बोला, "मैं समझ नहीं पा रहा। मेरी आप लोगों से कोई दुश्मनी तो नहीं। ठीक है, मेरा प्रस्ताव आप लोगों ने स्वीकार नहीं किया—लेकिन...इससे हम दुश्मन तो नहीं हो गए ?"

"दुश्मन के बच्चे !" चम्पक ने दांत पीसे, "कल फोन पर तू भीमा को धमका रहा था कि नहीं ?"

"धमकाना ? कैसा धमकाना ?" राजन ने आँखें झपकाईं। उसकी आँखों का आश्चर्य इतना विशुद्ध था कि चम्पक को अपनी आक्रामक मुद्रा छोड़नी पड़ी।

देशराज ने जब धमकी वाली सारी बात राजन के सामने रखी, तो वह गहरे सोच में डूबता हुआ बोला, "नहीं, ये धमकियाँ सूबासिंह जी की ओर से नहीं दी जा रहीं।"

"तुम्हें कैसे मालूम ?" देशराज ने जानना चाहा।

भीमा बोला, "बल्कि मैं तो सोच रहा था कि सीधा जाकर सूबासिंह से बात करूँ कि यह कैसा मजाक है ?"

चम्पक ने कहा, "राजन, तुम सूबासिंह के खरीदे हुए गुलाम हो। उसके खिलाफ़ कैसे कुछ बोल सकते हो ?"

राजन ने गम्भीरता से जवाब दिया, "नहीं, गुलाम-वुलाम मैं किसी का नहीं हूँ। जब मैंने कहा है कि धमकियों के पीछे सूबासिंह जी नहीं हो सकते, तो किसी ठोस आधार पर ही कहा है।"

"आधार क्या है, सुनूँ जरा ?" चम्पक कुछ आगे सरक आया।

"सबसे पहले तो यह बताऊँ कि अभी मैं यहाँ क्यों आया हूँ।"

"बताओ।"

"मुझे मेहरा जी ने भेजा है।"

"प्रकाश मेहरा ने ?" देशराज ने आश्चर्य से पूछा।

"जी हाँ, उन्हीं ने।"

"प्रकाश मेहरा को भला हम से क्या सरोकार ?"

"मेहरा जी ने मेरे माध्यम से एक सन्देश आप लोगों तक पहुँचाना चाहा है।"

"सन्देश ?" चम्पक सावधान हुआ।

"ध्यान से सुनिएगा कि सन्देश क्या है, क्योंकि इस सन्देश में ही इसका जवाब भी छिपा है कि प्रसंगियों के पीछे किसका हाथ हो सकता है।"

"मैं पूरे ध्यान से सुन रहा हूँ," चम्पक बोला।

"मेहरा जी ने भीमा जी के नाम सन्देश दिया है कि यदि भीमा जी चाहें, तो उनके 'दल' में शामिल हो सकते हैं। हजारों-लाखों की बात न सही, लेकिन रोजी-रोटी की समस्या कभी न रहेगी," राजन ने उत्तर दिया।

चम्पक की भौंहें सिमट आईं।

मेहरा का 'दल'...प्रकाश मेहरा का 'दल'...!

प्रस्ताव सुनते ही भीमा की रग-रग में गुस्सा उबल गया, किन्तु वह चुप रहा, क्योंकि चम्पक और देशराज की तरह उसका भी दिमाग दूसरी दिशा में दौड़ने लगा था। फोन पर धमकी देने वाले ने, अन्तिम बार, जो कहा था...क्या कहा था उसने ?.. यही न कि अगर असली लड़ाइयाँ नहीं लड़ सकते, तो नकली लड़ो!

प्रकाश मेहरा ही तो था नकली पहलवानों का सरताज—अगुआ! वह स्वयं नहीं लड़ता था—हारे हुओं को लड़वाता और बीच में अपने पैसे खरे करता।

नकली पहलवान! देखने में बिलकुल असली जैसे।

आम जनता को कल्पना भी नहीं हो सकती कि इन नकली पह
की भी अपनी अलग दुनिया है।

यह दुनिया तेज़ी से सिमट रही है, छोटी हो रही है, कुछ वर्षों में शायद यह ग़ायब ही हो जाए—किन्तु फ़िलहाल यह दुनिया मौजूद है।

अखाड़े में किसी-न-किसी कारणवश, हर साल, अनेक पहलवान इतने घायल हो जाते हैं कि 'बॉक्सिंग-कमीशन' की ओर से उन्हें दंगलों में भाग लेने पर मनाही हो जाती है। ये हारे हुए तिरस्कृत पहलवान—मनाही के बावजूद—दंगल में उतरते हैं, किन्तु ये दंगल असली नहीं, नक़ली होते हैं।

देखने वाला कभी नहीं जान सकता कि दंगल नक़ली है। बिलकुल असली की तरह ही पहलवान हुँकारते हैं, उछलते हैं, चुनौतिया देते हैं, भिड़ जाते हैं—एक-दूसरे का हाल खस्ता कर देते हैं।

किन्तु वह सब दिखावे का होता है।

दर्शक समझता है कि जोरदार मुक्का खाकर पहलवान चारों खाने चित हो गया, जबकि वास्तव में एक पहलवान ने दूसरे पहलवान को धीरे से ही मुक्का मारा होता है। पिटने वाला पहलवान—जान-बूझकर—ज़ोर से उछल पड़ता है, एकदम चारों खाने चित हो जाता है, हाँफने लगता है।

कई पहलवान तो इतने अच्छे ढंग से बेहोशी का दम भरते हैं कि दर्शक उस पर तरस खा-खाकर दुबले हो जाएँ !

किन्तु सब नक़ली।

असली दंगलों की तरह ही इन नक़ली दंगलों का प्रचार होता है। जनता आती है, टिकट कटाती है, देखती है, खुश होती है।

नक़ली दंगल आयोजित करने वाला सबसे बड़ा गुरु यदि कोई था, तो प्रकाश मेहरा ही था। भीमा को उससे सख्त नफ़रत थी।

"प्रकाश मेहरा मिलावट का व्यापारी है," भीमा कहा करता, 'जिस तरह सरसों के तेल में जहरीले बीजों का तेल मिलाकर बेचा जाता है, उसी तरह प्रकाश मेहरा भी दंगलों में मिलावट करता है। लानत है !'

देशराज की आँखें सिकुड़ चकी थीं। वह बुदबुदाया, "तो क्या...धमकी देने वाला वह आदमी प्रकाश मेहरा के ही इशारे पर कह रहा था कि यदि भीमा असली लड़ाइयाँ नहीं लड़ सकता, तो वह नक़ली लड़ाइयाँ शुरू

करे ?"

"जी हाँ, देशराजजी," राजन बोला, "मेरा यही ख्याल है। पहले धमकियाँ, फिर सुझाव...।"

"यानी प्रकाश मेहरा, भीमा को, मनोवैज्ञानिक दबाव में रखने के बाद ही..."

"जी हाँ," राजन का सिर हिलने लगा, "मनोवैज्ञानिक असर डालने के बाद ही प्रकाश मेहरा ने अपना सन्देश भेजना उचित समझा।"

भीमा बोला, "लेकिन नकली लड़ाइयाँ लड़ने का सुझाव केवल आखिरी फोन में दिया गया। दिया भी बहुत मामूली ढंग से गया—ज़ोर देकर कुछ नहीं कहा गया। मैं कैसे मान लूँ कि प्रकाश मेहरा मुझ पर मनोवैज्ञानिक असर डालना चाहता है ?"

"अभी मामूली ढंग से कहा गया है। आगे ज़ोर देकर कहा जाएगा।" राजन ने अपना मत सामने रखा।

"लेकिन वह फोन तो धमकी देने वाले का आखिरी फोन था।"

"ऐसा नहीं होगा। फोन फिर से आएगा।" राजन ने पूरे विश्वास के साथ उत्तर दिया।

"देखते हैं...," भीमा बुदबुदाया।

राजन ने सिर खुजलाया, "तभी तो प्रकाश मेहरा ने पूरे दम-खम के साथ मुझ से कहा था कि भीमा मेरा प्रस्ताव ज़रूर मान लेगा, इन्कार करने का सवाल ही नहीं। मैंने प्रकाश मेहरा को समझाने का प्रयास भी किया था, किन्तु उसे पूरा-पूरा यकीन था कि भीमा की ओर से इन्कार हो ही नहीं सकता। मुझे भला क्या मालूम था कि प्रकाश मेहरा धमकियों के ज़रिए अपना जादू चलाने की नापाक कोशिश पहले ही कर चुका है। मालूम होता, तो उसका सन्देश लेकर यहाँ कभी न आता। कभी नहीं।" और राजन ने नाटकीय ढंग से कान पकड़े।

यह दुनिया तेज़ी से सिमट रही है, छोटी हो रही है, कुछ वर्षों में शायद यह ग़ायब ही हो जाए—किन्तु फ़िलहाल यह दुनिया मौजूद है।

अखाड़े में किसी-न-किसी कारणवश, हर साल, अनेक पहलवान इतने घायल हो जाते हैं कि 'बॉक्सिग-कमीशन' की ओर से उन्हें दंगलों में भाग लेने पर मनाही हो जाती है। ये हारे हुए तिरस्कृत पहलवान—मनाही के बावजूद—दंगल में उतरते हैं, किन्तु ये दंगल असली नहीं, नक़ली होते है।

देखने वाला कभी नहीं जान सकता कि दंगल नक़ली है। बिलकुल असली की तरह ही पहलवान हुंकारते हैं, उछलते हैं, चुनौतिया देते हैं, भिड़ जाते हैं—एक-दूसरे का हाल खस्ता कर देते हैं।

किन्तु वह सब दिखावे का होता है।

दर्शक समझता है कि ज़ोरदार मुक्का खाकर पहलवान चारों खाने चित हो गया, जबकि वास्तव में एक पहलवान ने दूसरे पहलवान को धीरे से ही मुक्का मारा होता है। पिटने वाला पहलवान—जान-बूझकर—ज़ोर से उछल पड़ता है, एकदम चारों खाने चित हो जाता है, हाँफने लगता है।

कई पहलवान तो इतने अच्छे ढंग से बेहोशी का दम भरते हैं कि दर्शक उस पर तरस खा-खाकर दुबले हो जाएँ!

किन्तु सब नक़ली।

असली दंगलों की तरह ही इन नक़ली दंगलों का प्रचार होता है। जनता आती है, टिकट कटाती है, देखती है, खुश होती है।

नक़ली दंगल आयोजित करने वाला सबसे बड़ा गुरु यदि कोई था, तो प्रकाश मेहरा ही था। भीमा को उससे सख्त नफ़रत थी।

"प्रकाश मेहरा मिलावट का व्यापारी है," भीमा कहा करता, 'जिस तरह सरसों के तेल में जहरीले बीजों का तेल मिलाकर बेचा जाता है, उसी तरह प्रकाश मेहरा भी दंगलों में मिलावट करता है। लानत है!'

देशराज की आँखें सिकुड़ चकी थीं। वह बुदबुदाया, "तो क्या...धमकी देने वाला वह आदमी प्रकाश मेहरा के ही इशारे पर कह रहा था कि यदि भीमा असली लड़ाइयाँ नहीं लड़ सकता, तो वह नक़ली लड़ाइयाँ शुरू

करे ?"

"जी हाँ, देवराजजी," राजन बोला, "मेरा यही खयाल है। पहले धमकियाँ, फिर सुझाव..."

"यानी प्रकाश मेहरा, भीमा को, मनोवैज्ञानिक दबाव में रखने के बाद ही..."

"जी हाँ," राजन का सिर हिलने लगा, "मनोवैज्ञानिक असर डालने के बाद ही प्रकाश मेहरा ने अपना सन्देश भेजना उचित समझा।"

भीमा बोला, "लेकिन नकली लड़ाइयाँ लड़ने का सुझाव केवल आखिरी फोन में दिया गया। दिया भी बहुत मामूली ढंग से गया—जोर देकर कुछ नहीं कहा गया। मैं कैसे मान लूँ कि प्रकाश मेहरा मुझ पर मनोवैज्ञानिक असर डालना चाहता है ?"

"अभी मामूली ढंग से कहा गया है। आगे जोर देकर कहा जाएगा।" राजन ने अपना मत सामने रखा।

"लेकिन वह फोन तो धमकी देने वाले का आखिरी फोन था।"

"ऐसा नहीं होगा। फोन फिर से आएगा।" राजन ने पूरे विश्वास के साथ उत्तर दिया।

"देखते हैं...," भीमा बुदबुदाया।

राजन ने सिर खुजलाया, "तभी तो प्रकाश मेहरा ने पूरे दम-खम के साथ मुझ से कहा था कि भीमा मेरा प्रस्ताव जरूर मान लेगा, इन्कार करने का सवाल ही नहीं। मैंने प्रकाश मेहरा को समझाने का प्रयास भी किया था, किन्तु उसे पूरा-पूरा यकीन था कि भीमा की ओर से इन्कार हो ही नहीं सकता। मुझे भला क्या मालूम था कि प्रकाश मेहरा धमकियों के जरिए अपना जादू चलाने की नापाक कोशिश पहले ही कर चुका है। मालूम होता, तो उसका सन्देश लेकर यहाँ कभी न आता। कभी नहीं।" और राजन ने नाटकीय ढंग से कान पकड़े।

राजन की बात सच निकली। धमकी देने वाले का फोन तीसरे दिन फिर आया। "माफ कीजिएगा, भीमाजी..." भीमा के फोन पर आते ही उसने कहा, "पिछले फोन को मैंने आखिरी फोन बताया तो था, किन्तु आपको फिर से याद करना पड़ रहा है।"

"किस खुशी में ?" भीमा ने पूछा।

"पिछले फोन को मैंने आखिरी फोन इसलिए बताया था कि मुझे पक्का यक़ीन था, मेरे शब्दों का आप लोगों पर पूरा असर होगा। खेद कि ऐसा न हुआ। मेरी मनाही के बावजूद आपका दूत—क्या नाम है उसका ?—हाँ.. याद आया...चम्पक ! चम्पकलाल बंसल ! क्या उसने फिल्मी हस्तियों के चक्कर नहीं काटे ? मनाही के बाद भी ? इसका अर्थ क्या है ?"

"इसका अर्थ वही है, जो आप समझ रहे है।" भीमा ने उत्तर दिया।

"सोच लीजिए। किसी भी सीमा तक भुगतना पड़ सकता है।"

"और यदि मैं नक़ली लड़ाइयाँ लड़ने के लिए तैयार हो जाऊँ ?"

"तो मैं.. आपकी बातचीत एक ऐसे व्यक्ति से करवा दूँगा, जो इस मामले का सबसे बड़ा उस्ताद है।"

"उसी उस्ताद के कहने से धमकियाँ दे रहे हो न ?" भीमा का स्वर तप आया, "कह देना प्रकाश मेहरा से, भीमा को प्रकाश दिखाने की ज़रूरत नहीं। खबरदार, जो आइन्दा कभी फोन किया। जाओ, जो करना हो, करो। पूरी छूट है।"—और भीमा कनेक्शन काट चुका था।

इसके कुछ घण्टों बाद ही भीमा को एक ऐसा समाचार सुनना पड़ा, जिसके लिए वह बिलकुल तैयार नहीं था।

राजन ने फोन किया, "भीमा साहब, फौरन नानावती हास्पिटल पहुँचिए।"

"क्यों ? क्या बात है ?"

"मैं और चम्पक जी एक फिल्म-प्रोड्यूसर से मिलने के लिए जा रहे थे..." राजन की आवाज काँप रही थी, "पैदल चल रहे थे। बातें कर रहे

थे। पता न चला, कब कुछ गुण्डे पीछे लग गए। एक सूने नुक्कड़ पर उन्होंने अचानक हमला बोल दिया।"

"ओह...!"

"मुझे उन्होंने छुआ भी नहीं। उनका आक्रमण सिर्फ चम्पकजी पर था। चाकू से गोद डाला। आधा मिनट भी न लगा होगा। दहशत के मारे मैं चिल्ला भी न पाया। चम्पक जी लहूलुहान होकर सड़क पर गिर पड़े—लगभग बेहोशी जैसी हालत में। गुण्डे गायब हो गए। मेरे मुंह से बोल नहीं फूट रहा था। किसी तरह टैक्सी की, चम्पक जी को हास्पिटल पहुंचाया।"

"मैं अभी आया...नानावती हास्पिटल ही न?"

"हां, इमरजेन्सी वार्ड में घुसने के साथ ही दूसरा बेड।"

"राजन...!" भीमा की आवाज आशंका से थरथरा गई।

"हां, भीमा साहब...!"

"चम्पक खतरे से बाहर तो है न?"

"चिन्ता न करिए, भीमा साहब! हमलावरों को अच्छी तरह मालूम था कि उन्हें क्या करना है।"

"तब तो ..चम्पक की दशा...!"

"हमलावरों को मालूम था कि उन्हें चम्पक जी की हत्या नहीं करनी है—केवल घायल करना है। उन्होंने केवल घायल ही किया। सधे हुए गुण्डे थे। बड़े ही गहरे घाव किए हैं, लेकिन ऐसी-ऐसी जगहों पर कि जान को कोई खतरा न रहे।"

"मैं अभी रवाना हुआ।" भीमा ने फोन रख दिया।

देसराज को साथ लेकर, टैक्सी से, भीमा तुरन्त नानावती हास्पिटल की ओर रवाना हो गया।

"तो तू यहां क्या कर रहा है?" भीमा ने आश्चर्य से कहा। भी

देशराज ठिठककर खड़े रह गए।

हास्पिटल पहुँचे हुए उन्हें तीन घंटे बीत चुके थे। अभी तक चम्पक से बात नहीं हो पाई थी। कारण—वह दर्द से छटपटाता रहा था। छुटकारा दिलाने के लिए डॉक्टर ने उसे ऐसी गहरी नींद की दवा दे दी थी, जो बेहोशी से किसी तरह कम नहीं थी।

चम्पक के तमाम बदन पर पट्टियाँ-ही-पट्टियाँ बँधी देखकर भीमा और देशराज थर्रा गए थे।

बेखबर सोए चम्पक को पता भी न था कि भीमा और देशराज कितने चिन्तित हैं।

चम्पक की गहरी नींद खुलने के इन्तज़ार में भीमा और देशराज हास्पिटल के कैंटीन में जा बैठे थे। समय काटे न कटता था। एक-एक पल पहाड़ लग रहा था।

और आशंकाएँ...चम्पक पर हमला केवल सांकेतिक है। चम्पक के साथ-साथ—वास्तव में—यह हमला भीमा को सबक सिखाने के लिए है। ऐसा ही हमला—इससे भी भयंकर हमला—स्वयं भीमा पर होगा, यदि उसने अभिनेता बनने का प्रयास न छोड़ा...!

विडम्बना यह भी थी कि भीमा ऐसे प्रयास को लेकर विशेष उत्साहित कभी नहीं रहा। केवल चम्पक ही था, जो उस सुनहरे सपने को छोड़ने के लिए राजी नहीं था—धमकियों ने जिसका आत्म-विश्वास और बढ़ा दिया था।

लेकिन भीमा को सबक देने के लिए चम्पक पर हमला हुआ...चम्पक को अपने बढ़े हुए आत्म-विश्वास की क़ीमत अदा करनी पड़ी।

चम्पक अब जाग गया होगा, इस अनुमान के साथ भीमा और देशराज कैंटीन से बाहर आए।

आए ही थे कि उनकी नजर ली हू पर पड़ी।

वह गोरा, गंजा, नाटा, खतरनाक व्यक्ति, पूरी गम्भीरता से इमरजेन्सी वार्ड की ओर बढ़ रहा था। किससे मिलने जा रहा था वह? भीमा और देशराज ने सोचा भी न था कि वह चम्पक के बैड के पास जाकर रुकेगा। उनकी कल्पना यही थी कि ली हू का भी कोई सगा-सम्बन्धी या

दोस्त-परिचित, इमरजेन्सी वार्ड में दाखिल हुआ होगा।

देशराज और भीमा, एक फासला बनाए रखकर, ली हू के पीछे-पीछे चलते रहे थे। ली हू को चम्पक के बेड के पास रुकते देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ था...बहुत गहरा आश्चर्य...ली हू और चम्पक के बीच क्या रिश्ता है? कैसा सम्पर्क है? कौतूहल से भीमा और देशराज इस प्रकार आगे बढ़े थे कि ली हू या चम्पक में से किसी की निगाह उन पर न पड़े, किन्तु उन दोनों की बातचीत इन दोनों के कानों तक आ जाए।

तब उन्हें वह बात ज्ञात हुई, जो चम्पक ने आज तक छिपा कर रखी थी।

चम्पक होश में आ चुका था। नर्स ने ली हू को हिदायत दे दी थी कि ज्यादा बातचीत न की जाए। ली हू ने नर्स की बात पर रंचमात्र भी ध्यान नहीं दिया था। चम्पक से मुखातिब हो कर वह कह रहा था वह, "मियाद पूरी होने में अब सिर्फ दो दिनों की देर है।"

"हाँ, ली हू साहब..." चम्पक का स्वर अस्थिर था, "और दो दिनों तक तो मुझे शायद यहाँ से छुट्टी भी न मिले। माफी चाहता हूँ। सोच भी नहीं सकता था, ऐसा हो जाएगा।"

"लेकिन...मियाद माने मियाद।"

"यदि आप मियाद बढ़ाने किसी तरह समर्थ नहीं, तो कहने के लिए मेरे पास कुछ नहीं रह जाता।"

"जब खबर मिली कि चाकू से हमला हुआ है, तो मैंने स्वयं आ कर देखना जरूरी समझा—ताकि.. ।"

ली हू ने वाक्य पूरा न किया। चम्पक ने मुस्कराने का प्रयास किया। ली हू का आशय क्या था, चम्पक समझ गया था। ली हू ने स्वयं आ कर देखना चाहा कि हमले का समाचार सच्चा था या झूठा।

उतनी-उतनी पट्टियों के कारण मुस्कराना कोई आसान काम नहीं था। चम्पक की मुस्कान दो क्षण में ही डूब गई। उसने गम्भीरता से कहा, "मुमकिन है, मैं झूठी पट्टियाँ तमाम शरीर पर बँधवा कर पड़ा हुआ होऊँ। यदि और भी तसल्ली करनी हो, तो पट्टियाँ खुलवा कर दिखा दूँ।"

"ज़रूरत नहीं।" ली हू पर चम्पक के व्यंग्य का रंच-मात्र भी असर न हुआ। "मैं चेहरा देख कर असलियत भाप सकता हूँ। घायलों की आँखें अलग तरह की होती हैं।"

"और गरीबों की आँखें ?" चम्पक ने पूछा।

"क्या मतलब ?" ली हू न समझा।

"क्या आप को मेरी आँखों में देख कर पता नहीं चलता कि मियाद पूरी होते-होते पाँच हज़ार रुपये ला कर आपको दे देने का भरसक प्रयास मैंने किया है ? क्या आप इतना भी नहीं समझ सकते कि यदि मेरी जेब खाली न होती, तो मैं आपके सामने यों शर्मिन्दा होना कभी पसन्द न करता ? सब-कुछ आप देख रहे हैं—और फिर भी ये शब्द आपके ही हैं कि मियाद माने मियाद !"

ली हू का चेहरा, जो पहले ही पथरीला था, अब और पथरीला हो आया। उसने उठते हुए कहा, "हाँ, चम्पक ! मियाद माने मियाद ही होता है। पहले तुम हास्पिटल से छुट्टी पा लो। मैं मियाद बढ़ा नहीं रहा हूँ, लेकिन मियाद पूरी होने के साथ—पाँच हज़ार न मिलने की सूरत में—जो कार्रवाई करने की मैं सोचे हुए था, उसे फ़िलहाल रोके रहूँगा।"

"चलिए, गनीमत है। धन्यवाद !"

"हास्पिटल से छूटो। तब हम फिर से मिलेंगे। मियाद बढ़ने का सपना न देखना।"

"एक बात बताइए, ली हू साहब !"

"क्या ?" ली हू जाते-जाते रुक गया।

"क्या आपको रुपयों की इतनी भयानक तंगी है कि यदि पाँच हज़ार का इन्तज़ाम मैं कुछ विलम्ब से कर पाता हूँ, तो आपकी गाड़ी ही रुक जाए ?"

ली हू हँसा, "सवाल यह नहीं कि मुझे तंगी है या नहीं। सवाल उसूल का है। मियाद बढ़ाना मेरा उसूल नहीं। फिर मिलेंगे...।" और वह जाने लगा।

देशराज और भीमा उसके रास्ते से हट गए। न जाने क्यों, वे उसके द्वारा देखे जाना नहीं चाहते थे।

मी हू जब इमरजेन्सी वार्ड से निकल चुका, तो वे चम्पक के बेड की ओर बढ़े। चम्पक गहरी साँसें लेता हुआ, आँखें मूँद कर, हलाल चेहरे के साथ, बुत की तरह स्थिर पड़ा था। यदि वह गहरी साँसें न ले रहा होता, तो पता चलाना मुश्किल ही रहता कि वह पट्टियों में लिपटा हुआ बुत है या जिन्दा आदमी। उसके पूरे व्यक्तित्व में ऐसा बेजानपन आ गया था, जो पहले कभी नहीं देखा गया था।

"चम्पक...!" भीमा ने होले से पुकारा।

चम्पक ने आँखें खोली। उन आँखों में आशंका काँप रही थी—मी हू के साथ हुई बातचीत का कोई अंश इनके कानों तक तो नहीं पहुँचा? आशंका के ही कारण चम्पक ठीक से मुस्करा भी न पाया।

भीमा ने कहा, "कैसे हो?

"ठीक हूँ। अद्भुत घटना रही—है न? मैंने कतई नहीं सोचा था कि उन धर्मसियों में कोई दम है।" चम्पक ने उत्तर दिया।

"हम तुमसे मिलने के लिए कई घंटों से इन्तजार कर रहे हैं। तुम गहरी नींद में थे।"

"डाक्टर की कृपा—और क्या!"

नर्स नजदीक आई और भीमा से बोली, "इन से ज्यादा बात न करें, तो बेहतर। यह काफी कमजोर है।"

"जी!" भीमा ने नर्स की ओर उड़ती निगाह से देख लिया।

नर्स चली गई।

देवराज बोला, "चम्पक . यह मी हू क्यों आया था यहाँ? तुमसे मिलने के पीछे क्या मकसद था उसका? विवाद-विवाद का क्या चक्कर है?"

चम्पक ने आँखें बन्द कर ली। तो.. इन्होंने जान लिया। दरअसल, छिपाने का कोई अर्थ था ही नहीं। शायद कुछ से नहीं था, किन्तु चम्पक ने सोचा था—'मेरी जिन्दगी चमत्कारों की दुनिया रही है। क्या अजूबा, यदि किसी चमत्कार से मेरी जेब में पाँच-सात हजार आ जाएं। देवराज या भीमा को बताने की जरूरत क्या है? वे आखिर क्यों जानें कि मैंने गट्ठा लगाने जैसा गन्दा काम किया? वह भी—मी हू जैसे घटिया आदमी

...ा !'

...फिल्मी हस्तियों में से यदि एक को भी यह वात जँच जाती कि भीमा ...फिल्मों में हीरो वनाया जा सकता है, तो—

...अनुवन्ध पर हस्ताक्षर करने का ही पाँच-सात हज़ार मिल सकता ...। अजूवा क्या रहता, यदि सचमुच किसी फिल्म-निर्माता को वात जँच ...ती ? मगर किसी को वात नहीं जँची।

वात नहीं जँची—इससे भी कोई अजूवा उसी तरह नहीं था, जिस ...तरह बात किसी को जँच जाने में न होता। फिल्मी दुनिया में कुछ असम्भव नहीं, कोई, वात अजूवा नहीं।

लेकिन वदक़िस्मती...

चम्पक ने अनिच्छा से आँखें खोलीं। कम-से-कम शब्दों में उसने पाँच हज़ार की शर्त के वारे में अपने दोनों साथियों को सव वता दिया।

भीमा और देशराज सन्नाटे में आ गए। देशराज पहली वार पछताया कि उसने आज तक एक पाई भी क्यों न वचाई। और भीमा ? उसके पास तो पछताने के लिए भी शायद कोई गुंजाइश नहीं थी।

भीमा यदि चाहता, तव भी क्या वचा सकता था ? भारत देश में कितनी-कितनी सामाजिक क्रान्तियों की गुंजाइश है ! मगर यहाँ क्रान्ति होने का नाम भी नहीं। यहाँ की जनता लकीर की फकीर ही वनी रहना चाहती है, वरना—

दहेज जैसी प्रथा, अव तक, ख़त्म क्यों न हुई ?

भीमा की पाँच वहनें थीं। भीमा—उनका अकेला भाई। सवसे वड़ा। पाँचों वहनों की शादी भीमा ने करवाई। भीमा ने मिर्ज़ापुर क्यों छोड़ा था ? अपने घर से निकल क्यों गया था वह ? इसीलिए न कि ध... वटोर सके—वहनों की ढंग से शादियाँ कर सके ? चारेक मास पहले भीमा ने अपनी सवसे छोटी वहन की शादी की। हर शादी में औस... पचास हज़ार फुंक गया...लोग कहते थे, वहुत कम ख़र्च किया इन्हों... पचास-पचास हज़ार फूंकने के वाद भी लोग ऐसा कहते थे...!

ठीक यही चक्कर चम्पक के साथ भी था। उसकी भी चार... थीं। चारों में से एक भी सुन्दर नहीं। पढ़ी-लिखी ज़रूर थीं...

सुन्दरता का आवश्यक वरदान किसी को नहीं मिला था। चम्पक ने उनकी शादियाँ करवाईं—चम्पक की सारी आय उसी में ग़ायब हो गई।

चम्पक और भीमा, दोनों को तसल्ली थी—कि सब बहनों की शादियाँ सकुशल निबट गईं।

चम्पक और भीमा, दोनों की जेबें ख़ाली ज़रूर हो गई हैं, लेकिन दंगलों में नए-नए रिकार्ड क़ायम करने वाला भीमा फिर से कमाएगा। चम्पक भी, अपने इस पहलवान दोस्त के माध्यम से, धन बटोरेगा। धन अभी तक हाथ में ठहरा नहीं—किन्तु अब ठहरने वाला था...ज़रूर ठहरेगा...।

लेकिन बदकिस्मती का वार भी अभी होना था। 'वर्किंग-कमीशन' की रिपोर्ट! भीमा कभी दंगल में नहीं उतर सकेगा...यह कुछ ऐसी ही बात थी की ख़ून-पसीना एक करके, सारी ज़िन्दगी दाँव पर लगा कर आपने एक टकसाल लगाई, किन्तु भूचाल आया—टकसाल धरती के पेट में!

घर की इज़्ज़त बचाए रखने के लिए, घर को आबाद रखने के लिए भीमा ने घर छोड़ा था। चम्पक ने भी इसीलिए अपने घर का त्याग कर न जाने कहाँ-कहाँ की ख़ाक छानी थी। कभी यहाँ दंगल, कभी वहाँ दंगल...

क्या आज का ही दिन देखने के लिए?

१२

अख़बारों के 'आवश्यकता है' विभागों के विज्ञापन भीमा के लिए निरर्थक ही रहे थे। हारकर उसने फ़ैसला किया कि वह कामदिलाऊ दफ़्तर की शरण लेगा। देवराज ने उसके इस फ़ैसले का विशेष स्वागत न किया। देवराज के अनुसार—कामदिलाऊ दफ़्तर की लाल-फ़ीताशाही और घूसख़ोरी भीमा को रास नहीं आएगी। 'मगर क्या किया जाए?' भीमा के इस सवाल का जवाब भी देवराज के पास नहीं था।

देशराज की असहमति के कारण ही भीमा जब कामदिलाऊ दफ़्तर में अरज़ी देने के लिए रवाना हुआ, तो वह अकेला ही था। देशराज को साथ नहीं रखा था उसने।

कामदिलाऊ दफ़्तर की भव्य इमारत ने भीमा को आतंकित कर दिया। दंगलों के सिलसिले में, इससे पहले, अनेक बार, भीमा ने भव्य-से भव्य इमारतों में प्रवेश किया था, किन्तु आज उसने पहली बार जाना कि इमारत की निर्जीव भव्यता में भी कैसा आतंक होता है! वह बड़ी-सी इमारत मानो ऐलान-सा कर रही थी, 'यह जगह बड़े लोगों के लिए है... जो छोटे लोग यहाँ आते हैं, वे भी किसी-न-किसी बड़े आदमी के ज़ोर पर आते हैं...तभी उन्हें सहायता मिलती है। भीमा, तुम छोटे हो, इस इमारत को तुम से कोई सहानुभूति नहीं...।'

भीमा ने संकोच के साथ प्रवेश किया। चपरासी को बताया कि वह किस उद्देश्य से आया है। चपरासी बोला कि एक फार्म भर कर देना होगा। 'फार्म कहाँ मिलेगा?' के उत्तर में उसने एक काउंटर की ओर इशारा कर दिया। वहाँ से फार्म लेकर भीमा बैठ गया। जेब से उसने फाउंटेन-पेन निकाला। खोला। नाम? उसने अपना पूरा नाम भरा। वर्तमान पता? उसने दादर के गेस्ट-हाउस का पता भर दिया। स्थायी पता? वह उलझन में पड़ा। मिर्ज़ापुर की गलियाँ और सड़कें उसकी आँखों के सामने ज़िन्दा हो उठीं...मिर्ज़ापुर को तो भीमा ने छोड़ ही दिया। वहाँ के पते को स्थायी पते के रूप में भला कैसे दर्ज किया जाए? लेकिन दूसरा कोई पता भी तो नहीं! आखिर भीमा ने वहीं का पता लिख दिया।

बम्बई में निवास की अवधि? यहाँ क्या भरा जाए? भीमा तो कभी एक जगह टिका नहीं। लेकिन...यदि बम्बई में निवास की अवधि—एक लम्बी अवधि—दर्ज न की गई, तो शायद...कामदिलाऊ दफ्तर की सहानुभूति भीमा को उतनी न मिल सके, जितनी कि उसे मिलनी चाहिए...।

ग़लत भर दे? लिख दे कि पन्द्रह साल से यहाँ है? बेकार है? दर-दर की ठोकरें खा रहा है?

लेकिन नहीं, भीमा को झूठ का सहारा नहीं लेना चाहिए...।

मगर इस दुनिया में झूठ कौन नहीं बोलता? धर्मराज युधिष्ठिर ने भी

तो...। भीमा मुस्करा दिया मन-ही-मन। एक फ़ालतू-सी बात को वह ज़रूरत से ज़्यादा अहमियत दे रहा था—वह जान गया।

किन्तु बम्बई में निवास की अवधि का ख़ाना वह भर नहीं सका। उसे ख़ाली ही रहने देकर उसने ख़ानापूरी की अगली दफ़ा पढ़ी—पहले कहाँ नौकरी करते थे?

नहीं। इस दफ़ा को भी नहीं भरा जा सकता।

अगली दफ़ा—

कहाँ-कहाँ, कब-कब, कैसी-कैसी नौकरियों के अनुभव अब तक मिल चुके हैं?

भीमा को पसीना आने लगा। यहाँ भी वही सवाल था—अनुभव! अख़बारों के 'आवश्यकता है' विज्ञापन जिस तरह निरर्थक रहे थे, क्या उसी तरह कामदिलाऊ दफ़्तर भी निरर्थक ही रहनेवाला है? देशराज का कहना सही था शायद..!

भीमा की उँगलियाँ काँपने लगी थीं—और उसे इस का पता नहीं था।

उसने अगली दफ़ाएँ पढ़ीं। घुमा-फिराकर, सब में, एक ही बात पूछी गई थी—अनुभव।

मस्तक के नम हो चुके होने का पता अचानक चला। भीमा ने रूमाल निकाला। मस्तक पर फेरा। सहसा वह उठ पड़ा। आधा भरा हुआ फ़ार्म उसने बैंच पर ही छोड़ दिया, जिस पर कि वह बैठा हुआ था। 'बेकार... व्यर्थ की कोशिश...'भीमा के चेहरे की रग-रग से जैसे यही चीत्कार-सा फूट रहा था।

जल्दी में फ़ाउंटेन-पेन का कैप बन्द करके उसने बाहर निकलने के लिए क़दम उठाए ही थे कि—

"ज़रा सुनिएगा...!"

वह ठिठक गया। उतना झंकार-भरा, मीठा नारी-स्वर उसने कभी नहीं सुना था। पलट कर देखने लगा। ढेरमढेर फ़ाइलों में, मेज़ पर, पूरे अधिकार के साथ जमी हुई एक युवती की स्थिर हुई जा रही थी। क्या वह मधुर स्वर इसी युवती का

यही है...भीमा का दिल धक-से हो कर रह गया। 'इस सुन्दरी को मुझसे क्या काम है ?' यह प्रश्न उसे रोमांचित और स्तब्ध-सा कर गया।

पहलवानों की दुनिया में औरत की जगह कहाँ होती है ! घूमते-फिरते, दर्शकों की गैलरी में निगाह फेरते, पत्र-पत्रिकाओं को पलटते हुए भीमा ने अनेक सुन्दरियों के दर्शन किए थे। वस। भीमा की दुनिया में नारी केवल इतनी ही थी। किसी अजनवी नारी ने आज पहली वार पुकारा था उसे।

भीमा का चेहरा लाल पड़ गया।

वह अत्यन्त असहज मुद्रा में चलता हुआ उस मेज़ के नज़दीक पहुँचा।

"आपने मुझे पुकारा ?" पूछते समय उसे लगातार भय लग रहा था—कहीं मैं हकला न जाऊँ।

उस रेशमी युवती ने मुस्करा कर उत्तर दिया, "जी हाँ, आप ही को।"

"लेकिन मैं..." भीमा और कुछ न वोल सका।

"वैठिए।" युवती ने सामने रखी कुर्सी की ओर संकेत किया।

भीमा वैठा।

"आपने फार्म भरा क्यों नहीं ?"

भीमा का आक्रोश, सहसा, उछल पड़ा, "कोई मतलव नहीं था। यह दफ़्तर मेरे लिए विलकुल...।"

"ज़रा उठा कर दीजिएगा ? देखूँ, आपने क्या-क्या भरा है ?"

भीमा ने कुर्सी छोड़ी। उस वैंच तक पहुँचा, जहाँ उस का अधूरा फार्म ज्यों-का-त्यों पड़ा था। उसे लेकर वह मेज़ तक वापस आया। फार्म युवती के सामने रखता हुआ वह कुर्सी पर फिर वैठ गया।

युवती की आँखें फार्म पर घूमने लगीं, "यह तो लगभग कोरा है।"

"जी हाँ।" भीमा ने रूखी हँसी हँसने का प्रयास किया।

"लेकिन क्यों ?"

"यदि पूरा भरूँ, तो भी कोरा ही छोड़ना होगा। लिहाज़ा सोचा कि भरने का मतलव ही नहीं।"

"मैं...समझी नहीं।"

"अधिकांश खानों में पिछली नौकरियों के अनुभवों का ब्यौरा माँगा गया है। मैंने आज तक कभी नौकरी नहीं की। पहली बार तलाश में निकला हूँ।"

"कभी नौकरी नहीं की ? तो क्या...आपका कोई व्यापार था, जिस में सफल न होने के कारण अब आप :"

"व्यापार !" भीमा की असहजता अब कम होने लगी थी, हाँ...आप उसे व्यापार कह सकती हैं। आधुनिक दुनिया में हर चीज व्यापार ही है। मेरे दो भागीदार भी थे। मैं असफल क्या हुआ, उनकी भी लुटिया डूब गई।"

"ओह...लेकिन...जो भी है, आपको यह फार्म तो भरना ही चाहिए।"

"आप मुझे नौकरी दिलाएँगी ?" भीमा ने सीधा सवाल पूछा। उसने युवती की आँखों में सीधे-सीधे देखा। वे आँखें उसे इतनी संगीत-भरी और जादुई-सी लगीं कि अगले ही क्षण वह झेंप-सा गया—जैसे उसने कोई अपराध करने का इरादा बनाया हो और पकड़ा गया हो। उसकी निगाहें झुक गईं। झुकने के साथ ही उसने स्वयं को सावधान किया। नहीं। उसने कोई अपराध नहीं किया था। युवती से जब बातें हो रही हैं, तो युवती की आँखों में सीधी नजर डालना—इसमें कहीं कोई अपराध नहीं है। भीमा ने निगाह उठाई।

युवती गम्भीरता से बोली, "आपका यह फार्म, क्लर्क के माध्यम से आखिर मेरे पास ही आना था। नौकरी दिलवाने के लिए ही यह दफ़्तर खोला गया है।"

"यह तो मैं भी जानता हूँ लेकिन...क्या आप नौकरी दिलवाने का वचन देती हैं ?"

"नहीं।"

"इसीलिए तो कहता हूँ कि यह दफ़्तर केवल एक ढोंग है...[illegible] कम...मुझ जैसे व्यक्ति को तो यही लग सकता है।"

भीमा के इस आरोप को युवती ने रंच मात्र भी पसन्द न [illegible]

और यह नापसन्दगी उसके चेहरे पर उभर भी आई,

सौजन्य भाव में कोई कमी न आई। उसने उत्तर दिया, "यह दफ़्तर केवल प्रयास कर सकता है। नौकरी तो अन्ततः अपनी योग्यता से मिलती है।"

"क्यों नहीं!" भीमा के स्वर में कटुता का आभास था, "और योग्यता की कसौटी क्या है? अनुभव! यही न? मेरे पास किसी चीज का अनुभव नहीं। किसी नौकरी की साख मेरे पास नहीं।"

"लेकिन जो व्यापार आप करते थे, उसका अनुभव तो...।"

"प्लीज़...उसे 'व्यापार' न कहिए।"

"किन्तु...जैसा कि स्वयं आपने बताया...।"

"वह मेरा शौक़ था। यह एक दीगर बात है कि उसी शौक़ ने मुझे पैसा बहुत दिया, किन्तु केवल इसी आधार पर मैं उसे व्यापार मानने को तैयार नहीं।"

"स्वयं आप ही ने 'व्यापार' शब्द...।"

"हां, यह शब्द स्वयं मैंने इस्तेमाल किया, किन्तु बिना अर्थ के।"

"आप क्या करते थे?"

"पहलवानी।"

कुन्दन को लगा, उसने कुछ ग़लत सुना है। भीमा की ओर देखती रह गई वह। फिर—सहसा—उसे याद आया कि क्यों वह भीमा के चेहरे की ओर आकर्षित हुई थी। उसकी मेज़ के सामने, रोज न जाने कितने व्यक्ति ऐसे आकर बैठते थे, जिनके चेहरों पर असहनीय उलझन कांप रही होती थी—किन्तु किसी भी व्यक्ति की उलझन के प्रति कुन्दन ने कौतूहल अनुभव नहीं किया था। वह जानती थी, यह दफ़्तर उलझन-भरे व्यक्तियों का केन्द्र है। किस-किस पर ग़ौर किया जाए?

किन्तु भीमा ने उसका ध्यान बरबस आकर्षित कर लिया था। इसीलिए तो जब भीमा फार्म वहीं छोड़ कर जाने लगा था, तो कुन्दन ने पुकार लिया था।

क्यों?

क्योंकि भीमा का चेहरा उसे जाना-पहचाना लग आया था।

अब उसके मस्तिष्क में कौंध-सी हुई—जाना-पहचाना क्यों लगा था वह चेहरा? क्योंकि उसे उस ने अखबार में देखा था। समाचार—नामी

पहलवान भीमा हार गया...समाचार के साथ फोटो...उस दिन, बस की यात्रा के दौरान, वह समाचार कुन्दन ने पढा था, फोटो देखा था...उस वक्त क्या वह सोच भी सकती थी कि उसी नामी पहलवान को वह अपने दफ़्तर मे देखेगी ?—उलझन के साथ ?

ये सारे तार जुड़ नही रहे थे—जब तक कि भीमा ने बताया नही कि वह पहलवानी करता था।

'पहलवानी' शब्द सुन कर कुन्दन पर पहली प्रतिक्रिया यही हुई कि उसने या तो कुछ गलत सुना, या फिर उसके साथ कोई मज़ाक किया जा रहा है। अगले ही क्षण—मस्तिष्क मे हुई कौंध ने—कुन्दन के सामने प्रकट कर दिया कि सच्चाई वही है, जो बताई जा रही है।

"ओह !" कुन्दन के मुंह से बेसाख्ता निकल पड़ा। भीमा द्वारा दिए गए अधूरे फार्म पर उसकी नज़र दौड़ गई। नाम—भीमसेन अग्रवाल...

तब—

कुन्दन हँसने लगी।

हँसने लायक कोई बात नही थी, किन्तु अनायास उसे हँसी आ गई। भीमा उसके हास्य का कारण समझ सकता, यह सम्भव नही था। चकित-सा देखने लगा।

"क्यों ?" पूछा उसने, "आप हँस क्यो रही हैं ?"

"ओह, माफ कीजिएगा...पता नही, आप क्या सोच रहे हों, लेकिन ...असल मे...चूंकि आप पहलवानों जैसे बिलकुल नज़र नही आ रहे, इस कारण मैं कुछ ऐसी चौंकी कि...लेकिन बुरा न मानिएगा।" कुन्दन ने किसी तरह कहा।

भीमा पुलकित हो गया, "बुरा क्यों मानूं ? अपनी तारीफ़ सुनकर आज तक किसे बुरा लगा है ?"

"पहलवानी तो बड़ा रोमांचक काम है—नही ?" कुन्दन ने बाल-सुलभ कौतूहल दिखाया।

"हाँ, और खतरनाक भी।" इसके साथ भीमा ने, संक्षेप मे, कुन्दन को बताया कि क्यों उसे दंगलों की दुनिया से हमेशा के लिए विदा लेनी पड़ी है।

"मुझे दुःख हुआ सुनकर।" कुन्दन हार्दिकता के साथ बोली, जैसे

अन्दरूनी चोट आपको लगी, वैसी चोट दुश्मनों को भी न लगे।"

"उस चोट को मैं सह गया, किन्तु अब जो बेकारी की मार पड़ रही है, उसे सहना मुश्किल है। यह मार मुझ अकेले पर नहीं—पूरे तीन व्यक्तियों पर पड़ रही है। देशराज जी और चम्पक पर भी।"

"ये दोनों कौन हैं ?"

"देशराज जी मेरे प्रशिक्षिक हैं। चम्पक मेरा मैनेजर है।" और भीमा ने बताया कि किस प्रकार भीमा की केवल एक हार ने उन दोनों को भी पस्त कर दिया था।

बातों-बातों में कुन्दन ने भाँप लिया कि देशराज जी के प्रति तो गहरा आदर रखता है, किन्तु चम्पक के प्रति अत्यन्त भावुक है। चम्पक की समस्या को लेकर भीमा इतना चिन्तित था कि उसे 'ज़रूरत से ज़्यादा चिन्तित होना' ही कहा जाएगा। कुन्दन ने भीमा जैसे वयस्क, ऊँचे-पूरे व्यक्ति से ऐसी भावुकता की आशा नहीं रखी थी, किन्तु वही भावुकता इसका प्रमाण थी कि भीमा दिल का कितना साफ़ आदमी है।

"मैं जो कुछ भी बन सका, चम्पक के ही कारण बन सका।" भीमा ने कहा, "उसी ने मुझे प्रसिद्धि के चरम के शिखर पर ला बिठाया। उसी ने मुझे देशराज जी जैसा प्रशिक्षक ला कर दिया। बता नहीं सकता, मैं कितना दुःखी हूँ—क्योंकि उसी चम्पक को मेरी हार ने चौपट कर दिया। किसी कारणवश उसे फ़ौरन पाँच हज़ार रुपयों की सख्त ज़रूरत है। मैंने उससे आठ-नौ हज़ार रुपये उधार लिए हैं—अपनी बहन की शादी मुझे निब-टानी थी। रुपए उसके हैं। इन दिनों उसे रुपयों की सख्त ज़रूरत भी है...मुझे चाहिए कि रुपए लौटा दूं। मेरे पास नया पैसा भी नहीं ! स्वयं को अपराधी-सा महसूस करता हूँ—हर क्षण। प्लीज़...मेरी मदद करिए। कोई ऐसा काम दिलाइए, जिससे मैं तुरन्त और एकमुस्त पाँच हज़ार की रक़म पा जाऊँ—बाद में चाहे, हर मास, तनख्वाह में से काटता रहे...।"

कुन्दन बोली, "ऐसी व्यवस्था करना लगभग असम्भव है। नौकरी भी एकदम तुरन्त मिल जाएगी, ऐसी आशा आपको नहीं रखनी चाहिए। अभी तो आप ने फार्म भी ठीक से भर कर नहीं दिया। हज़ारों लोग

आपने पहले ही लाइन में लगे हुए हैं। फिर भी...आपका मैं विशेष ध्यान रखूंगी। रही बात एक मुश्त पांच हज़ार के इन्तज़ाम की। उसकी चिन्ता आपको करने की जरूरत नहीं। भूचाल के समय हर व्यक्ति अपना ही सिर बचाने को मजबूर होता है—दूसरों के लिए सोचने की गुंजाइश नहीं होती। चम्पक जी को पांच हज़ार का इन्तज़ाम करना है—वह करेंगे। यदि न कर सकेंगे, तो जिम्मेदारी उनकी है—आपकी नहीं।"

"मैं आपसे सहमत नहीं हूँ। मैं चम्पक के लिए जान लड़ा देना चाहता हूँ।"

"आप बहुत नेकदिल हैं, किन्तु इतनी नेकदिली को भावुकता भी कह दिया जाता है—और आज के जमाने में भावुकता के लिए कोई जगह नहीं।"

भीमा चुप रहा। कुन्दन की 'फिलासफी' उसे अच्छी नहीं लगी थी, किन्तु वह उसे दोषी कैसे ठहरा सकता था? वह एक ऐसी जगह काम करती, जहां यदि किसी भावुक व्यक्ति को बिठा दिया जाए, तो उसके तो हाथ-पांव ही फूल जाएं। अभावुकता की आदत पड़ गई है इस युवती को।

नाम क्या है इस युवती का?

भीमा को ज़बरदस्त इच्छा हुई—नाम जान लेने की।

"भावुकता?" भीमा बुदबुदाया, "शायद आप सच कहती हैं। मैं भावुक हूँ, किन्तु भावुकता एक अच्छा गुण है।"

"किन्तु अति किसी चीज़ की अच्छी नहीं होती।"

"क्या मैं चम्पक के प्रति अति की सीमा तक भावुक हूँ?"

"इसका उत्तर मैं सहसा 'हां' या 'ना' में कैसे दूं?" कुन्दन ने उत्तर दिया, "मैं आपको जानती ही कितना हूँ? चम्पक जी को तो मैंने कभी देखा तक नहीं। तो भी—पहला इम्प्रेशन मुझ पर यही पड़ा है कि आप चम्पक जी की चिन्ता जरूरत से ज्यादा कर रहे हैं।"

"मेरे और चम्पक के रिश्ते कितने गहरे हैं, आप सोच नहीं सकतीं। इसीलिए यदि आपको वैसा लगता है, तो आश्चर्य नहीं।"

"जो भी है ..बहस के लिए यहां मौका नहीं। किसके साथ कैसा

रिश्ता रखा जाए, यह आपका निजी मामला है। मेरी पहुँच वहाँ तक न तो है, न होनी चाहिए। इसके अलावा—अभी मुझे यहाँ काफ़ी काम पड़ा है। यदि इजाज़त हो, तो—आपका फार्म भर कर मैं रख लूं ?"

भीमा को 'पत्ता कट जाने' जैसा आभास मिला। उस मीठी युवती से ऐसी सहानुभूति-सनी बातचीत यों अचानक ख़त्म होने लगेगी—उसने चाहा नहीं था।

किन्तु युवती ने जो कहा है, उचित कहा है। यह दफ़्तर है, कोई पार्क वार्क नहीं, जहाँ आप घण्टों बैठ कर अपना गुबार निकाल सकते हों।

भीमा से पूछ-पूछ कर कुन्दन ने सारी जानकारियाँ फार्म में स्वयं अपने हाथ से भरीं। भीमा से दस्तख़त करवाए। तब फार्म को सावधानी से साथ एक फाइल में लगा लिया।

"तो ?" भीमा ने उठने से पहले की मुद्रा में कहा, "मैं चलूं ?"

"बेशक...गेस्ट-हाउस का फोन नम्बर और पूरा पता, दोनों, अब हमारे पास हैं। जैसी भी ज़रूरत हुई, मैं आपको ख़बर करूँगी।"

"मैंने आपका समय—इतना अधिक समय—लिया है कि...।"

"समय आपने लिया नहीं, मैंने स्वयं दिया है।" कुन्दन अत्यन्त माधुर्य से मुस्करा कर बोली, "मैंने ही आपको पुकारा, वरना आप तो जा ही रहे थे।"

"मुमकिन है, स्वयं मैं ही फोन करके पूछताछ करना चाहूँ।"

"क्यों नहीं।"

"फोन उठाने वाले से मैं क्या कहूँगा ? कैसे बताऊँगा कि किसे बुलाना है।"

कुन्दन मुसकराई, "मेरा नाम कुन्दन है। नाम बताना काफ़ी रहेगा। नम्बर नोट कर लीजिए।"

भीमा ने फोन-नम्बर नोट किया। फिर विदा ली।

नानावती हास्पिटल से, चम्पक का, निर्धारित समय से एक दिन पहले छुट्टी मिल गई। अस्पताल वालों ने गेस्ट-हाउस में फोन किया कि चम्पक को 'घर' ले जाने की व्यवस्था कर ली जाए।

भीमा, उस वक्त, कामदिलाऊ दफ्तर गया हुआ था। देशराज बाहर से घूम कर आया लौटा ही था कि सन्देश मिला। वह अस्पताल की ओर रवाना हो गया।

अस्पताल के गेट पर उसकी मुलाक़ात राजन से हो गई। वह भीतर से बाहर आ रहा था। देखते ही देशराज ने कहा, "कहिए, राजन साहब, नमस्कार! क्या हाल हैं? चम्पक से मिलकर आ रहे हैं क्या?"

"जी हाँ।" राजन ने देशराज की ओर ज़रा सकपका कर देखा।

देशराज उसके सकपकाने पर गौर न कर सका और बोला, "आज चम्पक को छुट्टी मिल रही है।"

"हाँ.. चम्पक जी बहुत खुश हैं।"

राजन चला गया। देशराज चम्पक के बैड की ओर बढ़ा।

थोड़ी ही देर बाद टैक्सी ने देशराज और चम्पक को दादर के गेस्ट-हाउस के सामने उतारा। गेस्ट-हाउस के व्यवस्थापक ने चम्पक का स्वागत ऐसे किया, गोया वह विदेश-यात्रा करके लौटा हो!

चम्पक मुस्कराया मन ही मन। उसे मालूम था—गेस्ट-हाउस में जब तक उधारी शुरू नहीं होती, तभी तक यह आवभगत है। उसके बाद तो...।

और उधारी शुरू होने में अब देर भी क्या थी? बम्बई कितना महँगा शहर है, चम्पक ने जैसे पहली बार जाना। जो कुछ भी धन चम्पक, देशराज और भीमा के पास था, सब जादू की तरह फुंक रहा था...।

कमरे में पहुँच कर चम्पक आराम से लेट गया। दोनों हाथ मोड़ कर, सिर के पीछे ले जा कर टिकाते हुए उसने कहा, "देशराज जी...अस्पताल से छुट्टी पाने के कुछ समय पहले राजन आया था।"

"हाँ, मेरी-उसकी भिड़न्त गेट पर हो गई थी। क्यों? कोई

बात ?" देशराज ने जानना चाहा।

"यह राजन बड़ा चालू आदमी है। हमेशा कोई-न-कोई खास बात उसकी जेब में रखी होती है।" चम्पक हँसा। उसका हँसना अजब ढंग का था—लोमड़ी जैसी चालाकी से भरा। देशराज को वह हँसी चम्पक की जैसी न लगी। अचरज से चम्पक की ओर देखता रह गया, "क्या कह रहा था ?"

"मेरी समस्या हल करने आया था।" चम्पक की चालाकीपूर्ण हँसी और गहरी हो जाने लगी।

"यानी ?"

"किसी व्यक्ति ने, राजन के माध्यम से, एक सन्देश भेजा है।"

"किस व्यक्ति ने ?" देशराज सावधान हुआ।

"यह राजन ने नहीं बताया।"

"बदमाश आदमी है। हमेशा इसी तरह...।"

"लेकिन, देशराज जी, प्रस्ताव खासा ठोस है।"

"सुनूं ?"

"सुनाने से पहले मुझे आपके सहयोग का पक्का वचन चाहिए।"

"क्या वचन अलग से देने की जरूरत है ? वचन तो है ही।"

"वचन की सचमुच अलग से जरूरत है।"

देशराज की भौंहें सिकुड़ीं। चम्पक की बदली हुई हँसी उसे, न जाने क्यों, खतरनाक-सी लगने लगी। नजदीक सरकते हुए पूछा उसने, "प्रस्ताव क्या है ?"

"पहले सहयोग का वचन दीजिए।"

"पहले प्रस्ताव जानना चाहूँगा।"

"बात यह है, देशराज जी...यदि आपका सहयोग न मिला, तो शायद यह प्रस्ताव मुझे छोड़ना पड़ेगा।" चम्पक ने गम्भीर होते हुए कहा, "लेकिन यह प्रस्ताव नहीं छोड़ता हूँ, तो—मेरी समस्या हल हो जाती है।"

"कौन-सी समस्या ? ली हू वाली ?"

"हाँ। वही।"

"पांच हजार एक मुश्त मिलेंगे ?"

"पूरे छह हज़ार। एकमुश्त। काम सिर्फ़ दो-ढाई घंटे का।"

देशराज को यह बात असम्भव-सी लगी, "कमाल करते हो! यह कैसे हो सकता है?"

"हो सकता है। तभी तो राजन मेरे पास आया था।"

"यदि मेरे सहयोग से तुम्हारी समस्या हल होती है, तो मैं यही कहूँगा कि तुम जो चाहोगे, मैं करने को तैयार हूँ।" देशराज ने वचन दिया।

"भीमा को तैयार करना होगा।"

"मैं समझा नहीं। कहना क्या चाहते हो?"

"काम भीमा का है। रिहर्सल और एक्चुअल शो—सब मिला कर दो-ढाई घंटों से ज़्यादा का काम नहीं है। राजन का प्रस्ताव सुन कर यही लगा—मेरी लाटरी निकल आई।"

"मेरा कौतूहल काफ़ी बढ़ चुका है। फौरन बताओ, प्रस्ताव क्या है?"

"प्रस्ताव कुछ ऐसा है कि भीमा एकाएक मानेगा नहीं," चम्पक ने देशराज की आँखों में बेधकता से देखते हुए कहा, "लेकिन वह आपको पूज्य मानता है। यदि आपने आग्रह किया, तो वह टाल नहीं सकेगा।"

"लेकिन आग्रह कैसा, यह तो बताओ।"

"भीमा को नाचना होगा—रेड-इंडियनों का नाच।"

"क्या बकते हो?"

"मुझे मालूम था, आपको बुरा लगेगा, किन्तु सोचिए—"

"नाचना भीमा का काम है?" देशराज ने आँखें तरेरीं।

"पहले पूरी बात तो सुनिए," चम्पक बोला, "ज़रा-सी देर के ही लिए नाचना होगा। बम्बई का कोई पूँजीपति है—राजन ने नाम नहीं बताया। कई बरसों तक वह बीमार रहा। अब स्वस्थ हो गया है। इसी खुशी में वह एक 'कामिक प्रोग्राम' का आयोजन कर रहा है—अपने दोस्तों, रिश्तेदारों, परिचितों के मनोरंजन के लिए। इस 'कामिक प्रोग्राम' का एक ही फारमूला है—इसमें जाने-माने व्यक्तियों को ऐसे-ऐसे रूपों में पेश किया जाएगा, जिसकी कल्पना भी न की जा सके। मसलन

भीमा को ही लेते हैं। वह नामी पहलवान है—रह चुका है। क्या कोई कल्पना भी कर सकता है कि भीमा रेड-इंडियनों का नाच नाचेगा ? यही इस कार्यक्रम का रोमांच है। एक-एक आइटम के लिए पानी की तरह पैसा बहने वाला है। अनेक फिल्मी हस्तियाँ भाग लेने वाली हैं।"

"चम्पक, तुम्हारी बातें सुन कर मेरे रोम-रोम में आग लग रही है।"

"भावुकता से न सोचिए, देशराज जी !" चम्पक ने उत्तर दिया, "भीमा आपसे ज़्यादा भावुक है। आपको न केवल अपनी भावुकता छोड़नी है, भीमा की भावुकता को भी नष्ट करना है।"

"चम्पक !"

"मेरी हार्दिक इच्छा है कि भीमा इस प्रस्ताव को न ठुकराए।"

"लेकिन यह घोर पतन का प्रस्ताव है। मैं सपने में भी नहीं सोच सकता कि मेरा प्रिय शिष्य, पूँजीपतियों के मनोरंजन के लिए, सबके सामने अधनंगा होकर नाचे।"

"अधनंगा !" चम्पक व्यंग्य से मुसकराया, "दंगलों में उतरते समय क्या भीमा अधनंगा नहीं होता था ?"

"चम्पक !" देशराज की मुट्ठियाँ कस गईं।

"चीखने से काम नहीं चलेगा, देशराज जी ! भीमा पर आखिर मेरा कुछ अधिकार भी है। इसी तरह, आप पर भी मेरा कुछ अधिकार है।"

"तुम्हारे अधिकारों को हमने कभी नहीं नकारा, किन्तु अधिकारों की सीमा से बाहर नहीं जाना चाहिए।"

"ऐसा है, देशराज जी, मैं बहुत डर गया हूँ।" चम्पक बोला। उसका यह वाक्य, हो रही बातचीत में, सहसा, फिट नहीं बैठ रहा था। देशराज ने उसकी ओर जलती निगाहों से देखना जारी रखा। दो पल के मौन के बाद चम्पक ने कहा, "मैं सपनों में जीने वाला व्यक्ति हूँ। कोमल हूँ। छुरों और चाकू इत्यादि से मेरा नाता नहीं। इसीलिए, छुरों और चाकू का जो हमला मुझ पर किया गया, उसने मुझे दहला दिया है। जब तक हमला नहीं हुआ था, तभी तक मैं बहादुर बना हुआ था, लेकिन—आपके सामने तो मैं स्वीकार कर ही सकता हूँ कि—इस एक हमले ने मेरे हौसले पस्त कर दिए हैं।"

"तो ?"

"यह कल्पना मुझे दहला देती है कि ऐसा ही हमला मुझ पर दुबारा भी हो सकता है।"

"नहीं होगा—यदि भीमा को अभिनेता बनाने की कोशिशें छोड़ दोगे।"

"वह तो छोड़ ही दूंगा, लेकिन ली हू जो छाती पर बैठा हुआ है! पांच हजार का इन्तजाम, उसके लिए, जल्दी-से-जल्दी कर लेना है। मैं कोई जादूगर तो हूँ नहीं। आखिर कैसे इतने रुपयों का आननफानन इन्तजाम होगा ? हमारे सामने समस्या केवल रोजी-रोटी की नहीं है। पेट भरने लायक तो हम कमा ही सकते हैं—अपने-अपने लिए। समस्या तो एक मुश्त पांच हजार का प्रवन्ध करने की है—फौरन। ली हू ने मियाद बढ़ाने से इन्कार कर दिया है।"

देशराज चुप रहा।

चम्पक ने गहरी सांस ली, "उस कम्बख्त चीनी का दिमाग सड़ा हुआ है। अभी भी वह...किसी भी सीमा तक जा सकता है। क्या वह मुझ पर छुरे-चाकू का हमला नहीं करवा सकता ?"

"तुमने ली हू के साथ सट्टा खेला। इसकी सजा तुम भीमा को देना चाहते हो ?"

"इसमें सजा देने की क्या बात है ? दोस्ती के नाते सहयोग मांग रहा हूं। बस।"

"लेकिन.. ।"

"मुझे बताइए, देशराज जी—'लेकिन' की कोई गुंजाइश है ?" चम्पक ने देशराज की आंखों में घूरते हुए कहा।

देशराज बोला, "तुम्हारे और भीमा के बीच कितना बड़ा अन्तर है! भीमा हर वक़्त तुम्हारी चिन्ता में डूबा रहता है। जब देखो, उसकी जबान पर एक ही नाम है—चम्पक, चम्पक! तुम्हारी समस्या कैसे हल हो, सोच-सोच कर वह परेशान है। वह तुम्हारा भला चाहता है। इधर तुम हो कि अपने दोस्त को सरेआम, अपमानजनक ढंग से नचाने की सोच रहे हो। तुम्हें केवल अपना खयाल है—अपने दोस्त की इज्जत का नहीं। भीमा

...ारी इज़्ज़त बचाने के लिए रातों को ढंग से सो नहीं पाता। इधर तुम ...ा की इज़्ज़त बेचना चाहते हो।"

"एक मिनट को मान लीजिए, देशराज जी, कि भीमा को किसी ...िल्म में बढ़िया रोल मिल गया—और वह रौल हो, रेड-इंडियन की ...ोशाक पहन कर नाचना।"

"मन मनाने के लिए कुछ भी सोचा जा सकता है। फिल्मों वाली सारी बात हवाई है। यह हवाई क़िला मूलतः तुम ने बाँधा है—मैंने या भीमा ने नहीं।" देशराज ने उत्तर दिया, "अपने रौल के साथ पूरा न्याय करने के लिए, किसी फिल्म में, यदि भीमा अधनंगा हो जाता, तो सब उसकी तारीफ़ करते, उसकी कला के गुण गाते। इसी प्रकार, दंगल के मैदान में भीमा यदि अधनंगा होता रहा है, तो इसके लिए किसी ने उसका मज़ाक़ नहीं उड़ाया। अधनंगा होना दंगल की आवश्यकता है। 'कामिक प्रोग्राम' और दंगल में ज़मीन-आसमान का अन्तर है। 'कामिक प्रोग्राम' में भीमा को अधनंगा देख कर क्या लोग उसकी कला की प्रशंसा करेंगे ? नहीं। वे उस पर हँसेंगे, सीटियाँ वजाएँगे। इसीलिए मैं कहता हूँ कि—"

"आपका कहना अपनी जगह सही हो सकता है, लेकिन मैं भी अपनी जगह सही हूँ। मुझे जान के लाले पड़े हुए हैं। ली हू से दुश्मनी मोल लेन... मेरे वूते में नहीं। मुझे धन चाहिए। अपनी सबसे छोटी बहन की शादी ... समय भीमा ने मुझ से हज़ारों रुपये उधार लिये थे। लिये थे या नहीं ?"

"तुमने सहर्ष दिए थे। विना माँगे।"

"तो अब भीमा को भी विना माँगे वे रुपए वापस कर देने चाहिए..."

"यदि उसके पास होते, तो तुम्हें ऐसा कहने की ज़रूरत न पड़ती..."

"नहीं हैं, तो इन्तज़ाम करे। इन्तज़ाम कैसे हो सकता है, ... रास्ता मैं सुझा रहा हूँ। ग़लत क्या है ?"

"रास्ता तुम सुझा रहे हो न ? ठीक है। तुम्हीं सुझाओ।"

"यानी ?"

"भीमा के सामने यह प्रस्ताव मेरे मुँह से क्यों रखवाना चा... जाओ। ईश्वर ने तुम्हें भी ज़वान दी हुई है। वल्कि...हम तीनों ... सबसे लम्बी ज़बान तुम्हारे ही पास है। स्वयं जाओ। भीमा से...

क्यों कहूँ ?"

"वह मेरा गला पकड़ लेगा ।"

"लेकिन मार नही डालेगा ।" और देशराज उठकर कमरे से निकल गया ।

उसके भारी-भरकम शरीर को दरवाजे के पार होते हुए चम्पक देखता रहा । यदि देशराज का सहयोग नही मिलता—जो कि मिलता हुआ दीख नही रहा—तो पाँच हजार की रकम हाथ में आकर भी नही आएगी । उस सूरत मे—

क्या करे चम्पक ?

एक ही रास्ता रह गया है—चम्पक भाग जाए । किसी को न बताए । एकदम रफूचक्कर ! गुमनाम होकर कही बस जाए, किसी तरह पेट भरे । ली हू के गुंडो के हाथो जान गँवाने से बेहतर यही होगा ।

शरीर मे जगह-जगह पट्टियाँ बँधी है । इनके खुलने का इन्तजार करना होगा । यदि पट्टियों के साथ ही भागा, तो ऐसे हुलिये के आदमी की खोज कितनी आसानी से करवा ली जाएगी—चम्पक अच्छी तरह समझता था ।

ली हू के गुंडे भी, जब तक पट्टियाँ नही खुलेगी—सहसा हमला करने वाले नही ।

चम्पक यह सब अभी सोच ही रहा था कि गेस्ट-हाउस के नौकर ने आकर सूचना दी, "चम्पक साहब, आपका फोन है ।"

"किसने किया है फोन ? नाम पूछा ?"

"जी नही, यह पूछना तो याद नही रहा ।"

चम्पक कहने वाला था, "जाओ, पूछ कर आओ ।' लेकिन फिर, ऐसा कहे बिना ही उठ पड़ा । पट्टियो और कमज़ोरी के कारण, टेलीफोन तक तुरन्त ही जा पहुँचना सम्भव नही था । पर्याप्त समय लेता हुआ वह टेलीफोन तक पहुँचा और रिसीवर उठा कर बोला, "हैलो !"

"हैलो, चम्पक जी !" औरतो जैसी बारीक आवाज, "मैं ली हू बोल रहा हूँ ।"

"आपकी पूरी खबर मुझे मिलती रही है। अस्पताल से आपको एक दिन पहले ही छुट्टी मिल गई। आप अपने गेस्ट-हाउस अभी थोड़ी देर पहले ही पहुँचे हैं।"

"जी...!" चम्पक धीमे से बोला।

"क्या आप बम्बई से भाग जाने की सोच रहे हैं?"

"नहीं तो।" चम्पक सकपका गया।

"यदि सोच रहे हो, तब भी न सोचिएगा। मैंने एक आदमी आपके पीछे लगा दिया है। इस आदमी की तनख्वाह बहुत कम है। महीने के सिर्फ़ तीन सौ रुपए। याने—रोज के केवल दस रुपए। आपको याद तो है न कि मैंने मियाद नहीं बढ़ाई है?"

"कैसे भूल सकता हूँ!"

"तो अब—नई स्थिति यह है कि—जो आदमी आपके पीछे लगा हुआ है, उसकी तनख्वाह आपके जिम्मे है।"

"जी!"

"क्यों?"—बात समझ में न आई? एक-एक दिन बीतेगा और पाँच हज़ार की वह रक़म, रोज दस रुपयों के हिसाब से, बढ़ती जाएगी।"

"लेकिन ली हू साहब, ऐसा तो हमारी शर्त में कहीं भी नहीं था।"

"न सही, यह मेरा तोहफ़ा है।"

"यह तो सरासर अन्याय है।"

"पाँच हज़ार की रक़म आप मुझे दे नहीं रहे। क्या यह मेरे साथ अन्याय नहीं?"

"मैं पूरी कोशिश कर रहा हूँ।"

"मुझे कोशिश से क्या सरोकार? मुझे तो रुपए चाहिए।" ली हू ने उत्तर दिया, "मुझे यह भी मालूम है कि पाँच हजार का इन्तज़ाम करने का एक उपाय आपको सुझा दिया गया है।"

चम्पक सावधान हुआ, "यानी...क्या आप जानते हैं कि..."

"जी हाँ, मैं जानता हूँ कि बम्बई के किसी पूंजीपति द्वारा आयोजित हो रहे एक 'कामिक प्रोग्राम' में आपका लाड़ला भीमा यदि रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचा, तो...आप तर जाएँगे—और मैं भी।"

"आपको किसने बताया ?"

"मेरे जासूसों ने। और...यहाँ···आपको मैं एक और सूचना देना चाहूँगा।"

"क्या ?"

"उस प्रोग्राम का आयोजन जिसे सौंपा गया है, वह मेरा पार्टनर है। प्रोग्राम में जो भी लाभ होगा, मैं और मेरा पार्टनर आधा-आधा बाँटेंगे।"

"ओह, यानी...भीमा 'हाँ' कहता है या 'ना' इसमें आपकी रुचि और भी गहरी है।"

"जी हाँ।" और ली हू मक्कारी से हँसा।

"तो क्या...मैं यह मान कर चल सकता हूँ कि यदि भीमा ने 'हाँ' कह दी, तो उस पूँजीपति की ओर से भारी रकम दी जाएगी। मुझे छह हजार की बात कही गई है, लेकिन...रकम छह हजार से बहुत ज्यादा मिलेगी—आपको।"

"व्यापार माने व्यापार।"

"और मुझे जो छह हजार मिलेंगे, वे आप वापस ले लेंगे। एक हवाई शर्त के आधार पर।"

"शर्त माने शर्त।"

"मैं यह भी मान कर चलना चाहूँगा कि भीमा को अभिनेता बनाने की मेरी कोशिशें रोकने के पीछे स्वयं आपने दिलचस्पी ली है।" चम्पक का स्वर तीखा होने लगा था, "यदि हमें किसी फिल्मी हस्ती से पाँचेक हजार एकमुश्त मिल जाते, तो इस 'कामिक प्रोग्राम' में भीमा की 'हाँ' होने का सवाल ही नहीं था। इसीलिए आपने नहीं चाहा कि.."

"हाँ, इसीलिए मैंने नहीं चाहा कि..."

"क्या आपके पार्टनर का नाम प्रकाश मेहरा नहीं, जो नकली दंगल आयोजित करवाता है ?"

"आप यह सब क्यों पूछ रहे हैं ? पार्टनर का नाम प्रकाश मेहरा हो या दिलीपकुमार, आपको क्या फर्क पड़ेगा ?"

"मैं अपने सामान्य ज्ञान में वृद्धि करना चाहता हूँ। भारतीयों का सामान्य ज्ञान बहुत कमजोर है। इस दिशा में हर भारतीय को सावधान

रहना चाहिए।" चम्पक ने व्यंग्य से कहा।

किन्तु ली हू की खाल मोटी थी। ऐसे व्यंग्य उसके लिए कोई अर्थ नहीं रखते थे। उसने कहा, "भारतीय सरकार चाहती है कि टेलीफोन पर हद-से-हद दो मिनट तक बातचीत की जाए। उससे ज़्यादा नहीं।"

"हाँ...और दो मिनट होने को हैं।"

"हो चुके हैं। रिसीवर रखने से पहले आपका जवाब पाना चाहूँगा। भीमा 'हाँ' कह रहा है या 'ना' ?"

"अभी उससे मेरी मुलाक़ात नहीं हुई। मुझे नहीं मालूम, यह प्रस्ताव उसके सामने किस प्रकार रखा जाए।" चम्पक ने कहा, "आपको यही विश्वास दिलाना चाहूँगा कि भीमा की 'हाँ' पाने के लिए मैं कोई कसर बाकी नहीं रखूँगा।"

"आप समझदार हैं। मैं फिर फोन करूँगा।"—और ली हू ने कनेक्शन काट दिया।

१४

भीमा लौटा। चम्पक को एक दिन पहले ही अस्पताल से छूट आया देखकर उसे प्रसन्नता हुई। उसने विस्तारपूर्वक बताया कि किस प्रकार कामदिलाऊ दफ्तर में उसकी मुलाकात कुन्दन नामक एक युवती से हुई और कुन्दन ने किस प्रकार 'पूरी सहानुभूति' के साथ बात की।

"कुन्दन नामक यह लड़की शादीशुदा है या नहीं ?" चम्पक ने हँसकर पूछा।

भीमा झेंप गया, "हो या न हो, मुझे क्या !"

"उसका नाम लेते ही तुम्हारी आँखों में चमक आ जाती है। मैंने तो यही सोचा कि पहली मुलाक़ात में ही तुम ने उसके शादीशुदा होने-न-होने की बाबत पूछ लिया है और...फिल्मों में रोल मिले या न मिले, हीरोइन का पीछा हीरो ने करना शुरू कर दिया है।"

"तुम्हारा दिमाग़ ख़राब है।" भीमा ने शर्म से लाल पड़ते हुए कहा,

"ख़बरदार, जो आइन्दा कभी ऐसी 'फ़िल्मी बात' मुँह से निकाली।"

"कान पकड़ता हूँ।" चम्पक ने नाटकीयता से कान पकड़ते हुए कहा, फिर ठहाका लगा दिया। भीमा को याद आया, एक दिन राजन ने भी ऐसी ही नाटकीयता से अपने कान पकड़े थे। वह मुस्करा दिया।

चम्पक जान-बूझकर मज़ाकिया बातें करना चाहता था। उसमें साहस नहीं था कि रेड-इण्डियन के नृत्य वाला प्रस्ताव, भीमा के सामने, एकाएक रख दे। कुछ-न-कुछ तो बोलना ही चाहिए, कोई-न-कोई बात तो होनी ही चाहिए—केवल इस ग़रज़ से चम्पक भीमा से मज़ाक कर रहा था। भीमा उतना अधिक झेंप जाएगा, उसने सोचा नहीं था। इसीलिए, भीमा के झेंपने पर उसे ज़्यादा मज़ा आया। अत्यन्त स्वार्थी ढंग से वह मज़ा लेना चाहता था—केवल अपने मनोरंजन के लिए।

"उस दफ़्तर में और भी कई लड़कियाँ होंगी," वह बोला, "इस कुन्दन से ही तुम्हारी बातचीत कैसे शुरू हुई?"

"उसी ने पुकारा। उसी ने बात की। मैं तो बिना फ़ार्म भरे वापस आ रहा था।"

"बधाई!"

"फिर छेड़छाड़?"

"क्यों? बधाई देने में कौन-सी 'फ़िल्मी' बात है?"

" 'बधाई' कहते समय तुम ने आँखें क्यों नचाई?"

"अरे! मुझे मालूम ही नहीं। क्या मेरी आँखें नाची थीं?"

भीमा हँसा, "वह लड़की...यो...है काफ़ी सुन्दर।"

"लो, फ़िल्मी तर्ज़ की बातें तुम्हीं ने शुरू कर दीं।"

"तुम्हारा जी जला रहा हूँ।" भीमा फिर हँसकर बोला और नहाने के लिए कपड़े उतारने लगा। बम्बई के चिपचिपे वातावरण में वह अकसर दो बार नहा लिया करता। सूट उतारा। बूट उतारे। तौलिया लपेटकर वह बाथरूम में जा घुसा। बाथरूम के बन्द दरवाज़े के पीछे से चम्पक ने उसकी गुनगुनाहट सुनी। 'मेरा पहलवान वाकई खुश है।' उसने मन-ही-मन कहा।

भीमा नहा कर बाहर निकला, तो चम्पक बोला, "कुन्दन से तुम ने

कह तो दिया है न कि नौकरी ऐसी चाहिए, जिसमें पाँच हज़ार एडवान्स मिल जाएँ ?"

"हाँ, मैंने कहा; जिसके जवाव में वह वोली कि यह असम्भव है। उस ने मुझे कोई झूठे आश्वासन नहीं दिए हैं। साफ़ कहा है कि मामूली नौकरी पा लेने की आशा भी मुझे फ़ौरन नहीं रखनी चाहिए।"

चम्पक ने मुँह विदकाया, "मेरी नौका डूबकर रहेगी।"

भीमा ने स्नेह से उसके दोनों कन्धे पकड़ लिये, "प्यारे ! वता, तेरे लिए मैं क्या करूँ ? मुझे हर क्षण याद है कि तुझे कितने रुपये, कितनी जल्दी चाहिए, लेकिन वता मैं क्या करूँ।"

भीमा के स्वर में ऐसी गहरी आत्मीयता थी कि चम्पक दहल गया। इतने अच्छे दोस्त को वह रेड-इण्डियन की भद्दी पोशाक में भद्दे ढंग से नचवाना चाहता है...चम्पक नीचे देखने लगा।

"क्या सोचने लगे, चम्पक ?"

"समय इतना कम है कि शायद सोचने का भी मौक़ा नहीं।"

"रुपए जल्दी न दे पाने की सूरत में ली हू तुम पर हमला करवाएगा—यही शक है न तुम्हें ? फिलहाल मैं यही कह सकता हूँ—वाहर मत निकलो। ली हू के आदमी गेस्ट-हाउस के अन्दर घुसकर तुम पर आक्रमण करें, इसकी गुंजाइश मैं सहसा नहीं देखता।"

"तो क्या क़ैदियों का जीवन विताऊँ ? कव तक ?"

"वाहर जव भी निकलो, मुझे साथ रखो।" भीमा ने अपने अलमस्त शरीर की ओर इशारा किया, "चाहे कितने ही आदमी, कैसे भी हथियार लेकर आएँ—जव तक मैं तुम्हारी वग़ल में ज़िन्दा रहूँगा, तुम्हारा वाल भी बाँका न होने दूंगा।"

"भीमा !" चम्पक की आवाज़ काँप गई।

"फिलहाल केवल इतना ही मेरे वस में है, मेरे दोस्त !"

तीन दिन हो गए...कुन्दन का फोन नहीं आया...भीमा की अकुलाहट बढ़ रही थी। कुन्दन का सुन्दर, सलोना मुखड़ा हर घड़ी उसकी आँखों के सामने छाया रहता। चम्पक ने पहला सवाल पूछा था—कुन्दन शादीशुदा है या नहीं ? एक ऐसा सवाल, जिसका जवाब भीमा को मालूम नहीं था।

भीमा ने कह दिया था, 'शादीशुदा हो या न हो, मुझे क्या !'

लेकिन क्या भीमा ने सोते-जागते, हर क्षण, यही कामना—न चाहते हुए भी—नहीं की है कि कुन्दन को शादीशुदा नहीं होना चाहिए ?

वह स्वयं को समझाना चाहता, 'कुन्दन यदि सचमुच शादीशुदा नहीं है, तब भी—मुझे क्या फर्क पड़ेगा ? मैं क्यों इस तरह सोचने लगता हूँ ? बार-बार ? वह मेरी क्या लगती है ? क्या लग सकती है ? हल्की-सी, औपचारिक, केवल एक मुलाकात ! और मेरे विचारों की दिशा ही बदल गई है। लानत है ! पहली बार पता चला—नारी का अभाव कितना बड़ा होता है। जीवन में कभी नारी के सम्पर्क में आया ही नहीं। मुछन्दर पहलवानों को पछाड़ने में ही व्यस्त रहा हूँ मैं। इसीलिए, केवल इतनी-सी मुलाकात में, ऐसे गुदगुदी-भरे विचार दिमाग में घुट रहे हैं। लानत है—और कमाल है !'

कुन्दन ने वचन थोड़े दिया था कि वह तीन दिनों के अन्दर फोन करेगी। यदि नहीं आया है फोन, तो इसमें अकुलाने जैसा क्या है ?

मगर इस अकुलाहट को नकारा कैसे जाए ?

आखिर भीमा ने तय किया, वह स्वयं ही कुन्दन को फोन कर देगा।

रिसीवर उठाकर उसने कामदिलाऊ दफ्तर का नम्बर डायल करना शुरू किया ही था कि उँगलियों में झुरझुरी। ऐसी झुरझुरी कि दस मील दूर से दिखाई दे ! घबराकर, फोन किए बिना ही, भीमा ने रिसीवर रख दिया।

अब ?

अगला दिन और भी ज्यादा अकुलाहट का था। क्षण-क्षण उसका मन कहता, 'कुन्दन का फोन आने ही वाला है...'

मन कितना झूठा था !

दोपहर का भोजन करने के बाद भीमा ने लेटना चाहा। रात को ठीक
ो नहीं पाया था। पता न चला, कब आँखें झप गईं।

"उठो, पहलवान ! जागो ! किसके नाम की माला जप रहे हो ?"
म्पक ने भीमा को झकझोरा। वह हड़बड़ाकर जागा। उठ बैठा। आँखें
लने लगा। "क्यों ? क्या हुआ ?" पूछा उसने।

"तुम नींद में बड़बड़ा रहे थे। कुन्दन जी को नमस्ते कर रहे थे।"

"धत् !"

"सच।"

मज़ाक और छेड़छाड़ का, फिर तो, दौर ही चल पड़ा। चम्पक उसे
सताना चाहता था। रेड-इन्डियनों के नृत्य के लिए जिसे वह मजबूर नहीं
कर सकता था, उसे—कम-से-कम—सता तो सकता था न वह ! सताने
में कोई 'ग़द्दारी' नहीं, दोस्ती का कोई अपमान नहीं। कितना अच्छा लग
रहा है भीमा का यों तिलमिलाते जाना !

देशराज उपस्थित नहीं था। भीमा ने चाहा, 'काश, देशराज जी उप-
स्थित होते। चम्पक इतनी ज़्यादा छेड़छाड़ न करता। उनका कुछ तो लिहाज़
रखता ही है।'

किन्तु देशराज, अपने लिए, छोटी-मोटी कोई नौकरी तलाश करने के
लिए निकला हुआ था।

शाम के चारेक बजे भीमा से ऐसा सोचे बिना रहा ही न गया, 'जाक
इसी वक़्त, कुन्दन से मिलता हूँ।'

भीमा को आशा थी—बल्कि, विश्वास था—कि कुन्दन से दो-
मुलाक़ातें हो जाने के बाद, उसके प्रति वह अनावश्यक आकर्षण अनु
नहीं करेगा। सहज हो जाएगा उसके प्रति।

एक मुलाक़ात—पहली—हो चुकी। तीन-चार मुलाक़ातें और
चाहिए। जितनी जल्दी हो जाएँ, उतना अच्छा। क्यों न आज ही मिल
जाए ?

वह तैयार होने लगा।

"कहाँ चले ?" चम्पक ने पूछा।

"कहाँ भी।"

"मैं भी चलूँगा।"

"मुझे अकेले जाना है।"

"लेकिन, भीमा, तुम्हीं ने कहा था कि मैं तुम्हें साथ रखकर बाहर निकला करूँ।"

"इस वक्त बाहर कौन निकल रहा है? तुम या मैं?"

"दोनों।"

"नहीं, मैं अकेला जा रहा हूँ। समझे?"

"समझ गया।" चम्पक मुस्कराया।

"क्या समझे?"

"कुन्दन से मिलने जा रहे हो। जल्दी में हो। चार बज चुके हैं। पाँच-साढ़े पाँच बजे उनका दफ्तर बन्द हो जाता होगा। उससे पहले पहुँचना चाहते हो?"

"हाँ, तो?"

"इन देवी जी के दर्शन मुझे भी करने हैं।"

"करवा दूँगा दर्शन—जब मौका आएगा।"

"मैं तो इसी वक्त साथ चलूँगा।"

"मेरा दिमाग तुम्हीं ने खराब किया है!" और भीमा ने चम्पक को ऐसे उठा लिया, जैसे मच्छर को उठाया हो। खोला बाथ रूम और पानी से लबालब भरे टब में दे पटका चम्पक को।

चम्पक दहाड़ मारने की तरह चीख उठा।

भीमा ने ठहाका लगाया, "ऐसी भीगी हुई हालत में चलोगे मेरे साथ?"

"ठहर, यार, अभी दूसरे कपड़े निकाल कर ...।"

"जब तक तू कपड़े बदलेगा, तब तक तो मैं पहुँच चुका होऊँगा।"—और भीमा बाहर था।

इलेक्ट्रिक ट्रेन में बैठनेके साथ भीमा के होंठो पर मुस्कान आने लगी। जो हुआ, खूब हुआ। चम्पक को सिर से पाँव तक एकदम भिगो दिया। अच्छा ही हुआ। कम्बख्त ने छेड़-छेड़कर दिमाग झुलसा दिया था!

ा !

आसपास बैठे यात्री भीमा को अचरज से देखने लगे थे कि यह आदमी ला-अकेला भला क्यों मुस्करा रहा है। भीमा ने सह यात्रियों के आश्चर्य ग़ौर किया। ग़ौर करते ही उसकी मुस्कान खत्म हो गई।

मगर मन में फुलझड़ियाँ छूट रही थीं। वह—एक पहलवान—किसी ुदरी से मिलने जा रहा था। हा, हा, कैसी फिल्मी सिचुएशन !

किन्तु ऐसे सूटेड-बूटेड, बढ़िया, ऊँचे-पूरे पुरुष को देखकर सोचेगा भी कौन कि पहलवानी इस का धन्धा रहा है ? धन्धा और शौक़ ? कोई नहीं सोच सकेगा। कुन्दन कैसी हँस पड़ी थी, जब भीमा ने उसे पहली बार बताया था कि वह दंगलों का राजा रहा है।

भीमा को अपना अतीत भूल जाना चाहिए।

कुन्दन फाइलें समेट कर, पर्स उठा कर, चलने की तैयारी में ही थी —जब भीमा सहसा उसके सामने प्रकट हुआ। उसे देखते ही कुन्दन मुस्करा दी, "नमस्कार !"

"ग़लत वक़्त पर पहुँचा। नहीं ?" भीमा ने हाथ जोड़ कर नमस्कार का उत्तर देते हुए कहा।

"ग़लत वक़्त पर ? क्यों ?"

"आप घर जाने की तैयारी में हैं।"

"तो क्या हुआ। आइए।"

और वे दोनों साथ-साथ चलने लगे।

"पिछली बार मैंने आपका—आप जैसे प्रसिद्ध व्यक्ति का—स्वा नहीं किया था। उस दिन न सही, आज सही। बोलिए, क्या पिएँ चाय ? कॉफ़ी ? या कुछ ठंडा ?" कुन्दन कैंटीन की ओर क़दम रही थी।

"चाहे जो पिया जाए, बिल मैं अदा करूँगा।" भीमा ने कहा।

कुन्दन हँस पड़ी, "स्वागत मुझे करना है, बिल आप पे करेंगे ?

"शिष्टाचार की पुस्तक में लिखा है कि पुरुषों की मौजूदगी में लाओं को बिल पे करने की अनुमति नहीं मिलनी चाहिए।"

"शिष्टाचार की पुस्तकें रट कर आए हैं क्या ?"

'ऐसा ही नमस्ते कीजिए।"

कुन्दन के साथ चलना भीमा को बहुत अच्छा लग रहा था। देहरादून से रवाना होते समय भीमा कितना चिन्तित था! मुलाकात होने पर वह ठीक से बात भी कर सकेगा या नहीं, उसे विश्वास नहीं था। कुन्दन की याद उस पर ख्वाहमख्वाह छाई रही—यदि वह बात कुन्दन जान जाए, तो? भांप ले, तो? भांप लेने की शक्ति, महिलाओं में, अद्भुत होती है। कुन्दन को कैसा लगेगा, यदि उस ने भांप लिया? इसी आशंका ने भीमा को, भीतर-ही-भीतर, जैसे रौंद ही डाला था।

किन्तु आमना-सामना होने पर उसने पाया—उस असहजता का नाम भी नहीं है। कुन्दन से वह ऐसे मिल रहा था, जैसे पुराना परिचय हो—खासा पुराना परिचय। यानी—

अन्दाजा सही निकला। मेल-मुलाकात होती रहे, महिलाओं के सम्पर्क के अवसर आते रहें, फिर किसी भी महिला को लेकर ख्वामख्वाह गुदगुदी-भरे ख्याल मन में आएँगे नहीं।

अभाव के कारण, मनाही के कारण, स्वयं का आकर्षण पैदा होता है। भीमा को इससे छूटना होगा। यदि कारणवश, कुन्दन के साथ सम्पर्क टूट गया, तो भीमा किसी और महिला के साथ परिचय विकसित करेगा। अवश्य करेगा।

लेकिन क्या सचमुच कुन्दन के साथ सम्पर्क टूटने वाला है?

उँह, अभी से क्यों उतनी दूर की सोची जाए?

भीमा ने महसूस किया—अपनी 'असहजता दूर करने के लिए वह कुन्दन को इस्तेमाल कर रहा था—उसी तरह, जैसे सिर-दर्द होने पर 'एनासिन' ले ली जाए।

और...स्वयं कुन्दन को पता नहीं कि वह इस्तेमाल की जा रही है।

यह सारा विचार भीमा को बहुत ही बुरा लगा। एक अजब कुरेदन-सी मन में होने लगी—कि इसी वक्त वह कुन्दन से क्षमा-याचना कर ले। वचन भी दे कि वह आइन्दा कभी उसे 'एनासिन' की तरह इस्तेमाल नहीं करेगा...लेकिन नहीं, यह आवेश भावुकता का ही आवेश होगा। भीमा को याद रखना है कि भावुकता के लिए इस दुनिया में—आज की ब्याव

हारिक दुनिया में—जगह नहीं है। स्वयं कुन्दन ने यही कहा है।

कैंटीन में प्रवेश किया जा चुका था। कैंटीन में सन्नाटा नहीं था। दफ़्तर में छुट्टी हो चुकी होने के कारण अनेक व्यक्ति वहाँ आ जमे थे, डटे हुए थे। पहली नज़र में तो यही लगा कि इन दोनों को बैठने की जगह भी न मिलेगी, किन्तु उसी समय दो व्यक्तियों ने बिल पे किया और उठे। एक छोटी मेज़ खाली हो गई। कुन्दन और भीमा ने झट वहाँ अधिकार कर लिया।

पर्स मेज़ पर रखते और बैठते हुए कुन्दन बोली, "आप अपने बारे में पता करने आए होंगे। है न ?"

भीमा ने 'हाँ' में सिर हिलाया।

"मैंने आपसे कहा ही था कि ज्यों ही कोई इन्तज़ाम होगा, मैं फोन कर दूंगी।"

भीमा अचकचा कर बोला, "मेरे आने के कारण यदि आपको ज़रा भी कोई तक़लीफ़ हुई है तो..."

"अरे, नहीं-नहीं, मेरा मतलब वह नहीं था। प्लीज़, ऐसा न सोचिए।" कुन्दन ने तुरन्त सफ़ाई दी, "मैं सिर्फ़ यह कहना चाहती थी कि...मेरा मतलब है...आपकी समस्या लगातार मेरे ध्यान में रही है। यह न सोचिएगा कि मैंने आपके केस को आफिस के रूटीन में टाल दिया।"

"शुक्रिया।"

"लेकिन...दिक़्क़त यह है...मुझे एकाएक समझ में नहीं आ रहा कि पहलवानी के अनुभव के आधार पर आप को आखिर कैसा काम दिलाया जाए।"

"कुन्दन जी, बुरा न मानें, तो एक निवेदन करूँ।"

"कहिए।"

"क्या अभी हम यह भूल नहीं सकते कि मैं भूतकाल में क्या था ? मुझे मालूम है, वह अनुभव आज मेरे किसी काम का नहीं। फिर उसे याद रखे रहने से क्या लाभ ?"

कुन्दन बहुत प्यारी मुस्कान मुस्करा कर बोली, "आप सच कहते हैं। वाक़ई मैं ग़लत ढँग से सोचती रही हूँ।"

सीमा हँसने लगा, "बताइए, अभी मैं क्या सोच रहा हूँ।" उसने 'मैं' पर ज़ोर दिया।

"कैसे बता सकती हूँ?"

"मुझे—इस वक़्त—चम्पक की याद आ रही है।"

"ओह, आप का व्यवस्थापक! कोई अजूबा नहीं। मैंने पहली मुलाकात में ही भाँप लिया था कि आप चम्पक जी के प्रति बेहद भावुक हैं। इसीलिए, सोते-जागते, हर पल उन्हीं की समस्या को लेकर उलझते हैं।"

"नहीं, कोई और बात है।"

"क्या?"

"देखिए, बुरा न मानिएगा।"

"मैं?"

"हाँ, आप। बात कुछ ऐसी है कि आप को बुरा लग सकता है।"

"भला ऐसी भी क्या बात हो सकती है। बुरा नहीं मानूँगी। बताइए।"

"गेस्ट-हाउस लौटने पर मैंने चम्पक को बताया कि कुन्दन जी से मुलाकात हुई थी और उन्होंने बहुत ही अच्छे ढंग से बात की।"

"हूँ।"

"तो, चम्पक ने, छूटते ही, जानती हैं, क्या पूछा?"

"क्या पूछा?"

"कुन्दन जी शादीशुदा हैं या नहीं।"

कुन्दन ज़ोर से हँस पड़ी, "हिश...!"

"सचमुच यही पूछा।"

"फिर?" कुन्दन ने आँखें झपकाईं।

"फिर क्या! जान छुड़ानी थी। मैंने कह दिया, 'शादीशुदा हैं। दो बच्चे भी हैं। जब मुझ से बात हुई, दोनों बच्चे पास ही बैठे हुए थे'।"

"बाप रे!"

"क्यों?"

"आपसे भूल हुई। बच्चे दो नहीं, पूरे तीन हैं, तीन।" और _

ऐसी उन्मुक्त होकर हँसी कि दूर तक के बैठे हुए लोग गर्दन घुमाकर देखने लगे।

भीमा का चेहरा बुझते-बुझते खिल उठा। कुन्दन का वास्तविक आशय क्या था, एक कौंध की तरह उसकी समझ में आ गया।

वह मेज़ छोटी थी। आमने-सामने केवल दो ही कुर्सियां थीं, जिन पर वे अधिकार जमाए हुए थे। आसपास, यों, मौजूद तो अनेक व्यक्ति थे—किन्तु सब अपनी बातों में मगन। कुन्दन की हँसी जब तक खत्म हुई, तब तक घूमी गर्दनें फिर से सीधी हो गई थीं। फिर से सब अपनी-अपनी बातों में खो जाने लगे थे।

भीमा ने कहा, "अब तो मुझे कोई और ही शक होने लगा है।"

"क्या ?"

"कभी आप के घर आ कर गिनने होंगे। बच्चे शायद तीन से भी ज्यादा हों !"

कुन्दन हुलस कर बोली, "आप जैसा प्रसिद्ध व्यक्ति मेरे घर आए, इससे ज्यादा खुशी की बात मेरे लिए भला और क्या हो सकती है !"

"दरअसल...चम्पक का कोई दोष नहीं। वह सपनों में जीने वाला आदमी है। जब तक मैं और वह दंगलों में उलझे हुए थे, तब तक तो किसी को होश नहीं था कि इस दुनिया में मर्दों के अलावा भी कुछ और होता है। अब, सहसा आँखें खुली हैं कि दुनिया में...कि दुनिया में...भीमा ने, संकोचवश, वाक्य पूरा न किया।

कुन्दन गहन मुस्कान के साथ बोली, "हुं।"

अचानक ही भीमा ने पाया, वह दिल खोल कर बातें कर रहा है—बिना डरे कि कुन्दन पर कैसी प्रतिक्रिया होगी। अनायास उसके मुंह से शब्द फूटते जा रहे थे। वह कुन्दन को बता रहा था—किस तरह कुन्दन उसके मानस पर छाई रही, लगातार छाई रही।

"मैं क्षमा-याचना करने आया हूं।" भीमा ने अपनी 'आत्म-स्वीकृति' पूर्ण करते हुए कहा।

"यह सब आपकी भावुकता का प्रमाण है।" कुन्दन ने स्नेह-भरी शिकायत के स्वर में कहा, "जो भी है...मैंने बुरा नहीं माना है।"

सचमुच उसने बुरा नहीं माना था, हालांकि वह सारी बात उसे अच्छी नहीं लगी थी। कैंटीन में इतने-इतने लोगों की मौजूदगी में, एक पुरुष 'ऐसी-ऐसी' बातें करे...गनीमत केवल इतनी थी कि उनकी मेज़, दूसरी मेज़ों से, काफ़ी-कुछ कटी हुई थी। भीमा धीमे स्वर में बोल रहा था, आसपास के लोग अपनी ही बातों में लीन थे, किसी ने भीमा के शब्दों पर सहसा ग़ौर न किया होगा—फिर भी.. क्या भीमा को 'ऐसी बातें' नहीं करनी चाहिए?

करनी चाहिए या न करनी चाहिए—इसमें रंचमात्र भी सन्देह नहीं किया जा सकता था कि भीमा दिल का साफ़ आदमी था। उसकी बेबाकी इतनी अजब थी कि कुन्दन ने यदि बुरा मानने का प्रयास किया होता, तो भी शायद बुरा न मान सकती...।

भीमा, भावुकता-जनित इन वाक्यों को बोल चुकने के बाद, मानो अपनी किसी अपराध-भावना से छूट गया था। कुन्दन में उसके प्रति जो सहजता, अभी की दूसरी मुलाक़ात होते ही, मन में आ गई थी, वह सहजता—इन वाक्यों को बोल देने के पश्चात्—क्या और भी गहरी नहीं हो गई थी?

"कुन्दन जी, मैंने भी अपने मन का गुबार निकाल लिया। पता नहीं, आपको कैसा लग रहा हो... क्या अब भी आप मुझे अपने घर चाय पर आमन्त्रित करना चाहेंगी? शायद नहीं।"

देने का मौक़ा भीमा को दिया। अवसर के अनुकूल यही था। बैरा चला गया।

"कोई गीत सुनना पसन्द करेंगे ?" कुन्दन ने सहसा पूछा, जिसका जवाब भीमा के पास नहीं था। अव्वल तो वह यही ठीक से न समझ पाया कि कुन्दन का आशय क्या है। क्या कुन्दन स्वयं कुछ गा कर सुनाने वाली है ? धत् ! यह कैसी बात ! इतने लोगों की मौजूदगी में, केवल दूसरी ही मुलाक़ात में, कुन्दन कुछ गाकर सुनाए—धत् ! भीमा को दो पल बाद ही समझ में आया कि कुन्दन का संकेत कैंटीन में रखे ज्यूक-बॉक्स की ओर था। लगभग आदमक़द ज्यूक-बॉक्स, अपनी जलती रोशनियों के साथ, कोने में चुपचाप बैठा हुआ था। जब महँगाई की मार आज के जितनी नहीं थी, उस ज्यूक-बॉक्स को यों चुप नहीं होना पड़ता था। बैठे हुए लोगों में से कोई-न-कोई उठ कर पच्चीस पैसे का सिक्का उसमें डालता और अपनी पसन्द के रिकार्ड का बटन दबा देता। ज्यूक-बॉक्स उस गीत को सारे कैंटीन में गुंजा देता...लेकिन महँगाई ने लोगों को संकोची बना दिया है। रह-रह कर ज्यूक-बॉक्स को चुप हो जाना पड़ता है। उसके पेट में पच्चीस पैसे के सिक्के, दिन-भर में भी, बहुत कम पहुँचते हैं।

भीमा को पता ही नहीं था कि दुनिया में संगीत नामक भी कोई चीज़ है। जिस तरह वह पहली बार, दुनिया में, स्त्रियों की मौजूदगी के प्रति सजग हुआ था—उसी तरह, कुन्दन ने ज्यों ही उससे गीत सुनने के बारे पूछा, त्यों ही उसका रोम-रोम संगीत की सम्भावनाओं के प्रति सचेत गया।

लेकिन वह कोई उत्तर नहीं दे सकता था। 'हाँ' नहीं। 'ना' नहीं। कु की ओर देखता रह गया—जैसे कुन्दन ने न जाने क्या पूछ लिया हो ! भीमा ने कहा कि हाँ, वह गीत सुनना पसन्द करेगा, तो यथासम्भव कु का अगला सवाल होगा, 'कौन-सा गीत ? किस फिल्म का कौन-सा गीत

और भीमा को फिर से चुप रह जाना होगा। जिसे मालूम ही कि संगीत भी इस दुनिया में रहता-बसता है, वह इस क्षेत्र में अपनी के बारे में आखिर क्या कह सकेगा ?

कुन्दन ने क्या उसकी उलझन भाँप ली ? समझ ली ?

पता नहीं ...।

लेकिन उसने अपना सवाल दोहराया नहीं। न पूछा दूसरी बार कि गीत सुनना पसन्द करेंगे या नहीं। भीमा को वहीं बैठा रहने देकर वह उठी, पहुँची ज्यूक-बॉक्स के पास। पच्चीस पैसे का सिक्का भीतर सरकाया। अपनी पसन्द के एक गीत का बटन दबा दिया। खलच्च्च...रिकार्ड लगने की धीमी आवाज़...फिर संगीत का फूटता स्वर...।

गीत अच्छा था। संगीत अच्छा था। ज्यूक-बॉक्स भी नया और सुन्दर था।

मगर ये फिल्मी गीत! हर गीत में वही—लड़का-लड़की!

जो भी है...कुन्दन ने एक गीत चुना था...भीमा ने उसे गौर से सुना—पूरे गौर से। नहीं, इस फिल्मी गीत में भीमा को कोई सांकेतिकता नहीं ढूँढनी चाहिए। लड़का-लड़की। भीमा लड़का। नहीं, नहीं, इस तरह सोचना बेजा हरकत होगी।

गीत जब तक जारी रहा, न जाने क्यों, कुन्दन और भीमा, दोनों की ज़बान बन्द रही। आमने-सामने बैठकर वे एक ऐसी स्थिति जी रहे थे, जैसी स्थिति जीने का अवसर रोज़ नहीं होता। शायद वे चुप इस-लिए हुए कि उन्हें चुप्पी की आवश्यकता थी। क्यों थी? शायद उन्हें मालूम नहीं था।

गीत खत्म होते ही भीमा बोला, "धन्यवाद, कुन्दन जी! इस गीत को मैं कभी नहीं भूल सकूँगा।"

"क्यों भला? यह गीत लोकप्रिय है, ठीक है, किन्तु लोकप्रिय गीत तो नए-नए आते रहते हैं। नए गीत आते हैं, पुराने भुला दिए जाते हैं।"

"हाँ, किन्तु इस गीत को मैं कभी न भूल सकूँगा। इसने मुझे संगीत के साथ पहली बार परिचित कराया है।।"

"अच्छा, इतनी-सी बात को भी आपने भावुकता से रंग दिया।"

"क्या आपको भावुकता से ज़्यादा चिढ़ है, कुन्दन जी?"

"ओह, नहीं, लेकिन...मेरा खयाल है कि भावुकता के बिना काम चलाया जा सकता है। खैर, छोड़िए।"

चाय आ चुकी थी। पी जा चुकी थी। बिल आ चुका था।

उसे पे कर दिया था। बैरा अपनी टिप पा चुका था। भीमा को हल्का-सा सलाम कर चुका था। जा चुका था। बातें खत्म होने लगी थीं। अब मुलाक़ात को भी खत्म हो जाना चाहिए।

"तो? चला जाए?" भीमा ने पूछा।

कुन्दन चुपचाप उठने लगी।

भीमा भी उठ पड़ा। दोनों साथ-साथ कैंटीन से बाहर आए। चुप।

चौराहे पर सहसा वे ठिठक गए। भीमा ने पूछा, "आप कैसे घर जाती हैं? ट्रेन से या बस से?"

"बस से।"

"जबकि मैं ट्रेन पकड़ना पसन्द करूँगा," भीमा ने कहा। हालाँकि उसका दिल चाह रहा था, काश, वह बस पकड़ सकता!

"मुझे काफ़ी देर हो गई है।" कुन्दन ने अपना पर्स, दोनों हाथों में, कुछ इस तरह थाम लिया, मानो उस पर्स से वह अपनी रक्षा करना चाहती हो। किन्तु, रक्षा किस से? भीमा से? मगर भीमा उसे कोई नुकसान तो पहुँचा नहीं रहा। तो क्या...भीमा ने उसे बोर कर दिया है? बिना कुछ कहे न जाने क्या-क्या कह दिया जा रहा था...ऐसी स्थिति में, एक-दूसरे के सामने से, जितनी जल्दी हट जाया जाए, उतना अच्छा।

भीमा ने हाथ जोड़ दिए, "बहुत-बहुत शुक्रिया, आज की मुलाक़ात के लिए। आपकी जगह कोई और होती, तो न केवल बुरा मान जाती—मुझे शायद...हमेशा के लिए...।"

"ऐसा न कहिए। मेरी हैसियत क्या है? जबकि आप बहुत प्रसिद्ध...।"

"प्रसिद्ध हूँ नहीं—था। अब तो मेरी भी हैसियत...खैर, जाने दीजिए, बीती विसार कर आगे की सुध लेने में ही सार है।"

"मैं हमेशा आपकी मदद करूँगी।"

"आपको देर हो रही है न? प्लीज़...क्षमा कर दीजिएगा, मेरे ही कारण आपको...।"

"नहीं, आप के कारण नहीं। ऐसा न सोचिए। फिर भी...समय काफ़ी हो चुका है।"

"फिर मिलेंगे..." भीमा विदा लेते-लेते बुदबुदाया।

"हाँ...नमस्कार...!"

वह मुड़ी और जाने लगी।

भीमा ने रेलवे-स्टेशन की ओर कदम बढ़ाए। गर्दन घुमाकर, जाती हुई कुन्दन को एक बार देख लेने का बड़ा मन हो रहा था, किन्तु भीमा ने स्वयं को रोका। ये सब भावुकता की बातें हैं।

किन्तु कुन्दन के साथ बिताया हुआ एक-एक क्षण भीमा के तन-मन में बज रहा था।

सहसा भीमा ने देखा—

एक जगह भीड़ लगी है। हुंकार जैसी आवाजें उठ रही हैं। शायद कोई झगड़ा...?

भीमा रुक गया।

भीड़ के नज़दीक आया। देखा—दो किशोर हैं। गुत्थमगुत्था हो गए हैं। एक-दूसरे के बाल नोच रहे हैं, गालियाँ दे रहे हैं। कपड़े-लत्ते से मवाली तो नहीं लग रहे, किन्तु इतने क्रोधित हैं कि आपा खो बैठे हैं।

भीड़ इकट्ठी तो हो गई है, किन्तु उन्हें छुड़ाने का प्रयास कोई नहीं कर रहा। सब तमाशा देखने के लिए हैं। बल्कि एक-दो जने ऐसे भी हैं, जो उन किशोरों को और भी ज्यादा लड़ाना चाहते हैं। उन्हें तरह-तरह से उकसा रहे हैं।

भीमा से न रहा गया। लड़ाई। हाथापाई। दंगल! पूरा दंगल न सही—आधा दंगल सही। दंगल ही तो भीमा की दुनिया थी। उसे उस दुनिया से जबरन निकाल बाहर किया गया, किन्तु क्या ऐसे छोटे दंगलों में भी भीमा की कोई उपयोगिता नहीं?

भीड़ को चीर कर भीमा आगे आ गया। उस का अलमस्त जवान शरीर भीड़ के लोगों को इतनी आसानी से हटाता गया, जैसे किसी मशाल के सामने मोम की दीवार पिघल कर बैठती जाए, हटती जाए, सरकती जाए।

भीमा ने दोनों किशोरों को एक-एक हाथ से पकड़ कर एकदम अधर ही उठा लिया। दोनों किशोर अचकचा गए। अचानक यह क्या चमत्कार

उसे पे कर दिया था। वैरा अपनी टिप पा चुका था। भीमा को हल्का-सा सलाम कर चुका था। जा चुका था। वातें खत्म होने लगी थीं। अव मुला-क़ात को भी ख़त्म हो जाना चाहिए।

"तो ? चला जाए ?" भीमा ने पूछा।

कुन्दन चुपचाप उठने लगी।

भीमा भी उठ पड़ा। दोनों साथ-साथ कैंटीन से वाहर आए। चुप।

चौराहे पर सहसा वे ठिठक गए। भीमा ने पूछा, "आप कैसे घर जाती हैं ? ट्रेन से या वस से ?"

"वस से।"

"जवकि मैं ट्रेन पकड़ना पसन्द करूँगा," भीमा ने कहा। हालाँकि उसका दिल चाह रहा था, काश, वह वस पकड़ सकता !

"मुझे काफ़ी देर हो गई है।" कुन्दन ने अपना पर्स, दोनों हाथों में, कुछ इस तरह थाम लिया, मानो उस पर्स से वह अपनी रक्षा करना चाहती हो। किन्तु, रक्षा किस से ? भीमा से ? मगर भीमा उसे कोई नुकसान तो पहुँचा नहीं रहा। तो क्या...भीमा ने उसे वोर कर दिया है ? विना कुछ कहे न जाने क्या-क्या कह दिया जा रहा था...ऐसी स्थिति में, एक-दूसरे के सामने से, जितनी जल्दी हट जाया जाए, उतना अच्छा।

भीमा ने हाथ जोड़ दिए, "वहुत-वहुत शुक्रिया, आज की मुलाक़ात [illegible] लिए। आपकी जगह कोई और होती, तो न केवल वुरा मान जाती—मु[illegible] शायद...हमेशा के लिए...।"

"ऐसा न कहिए। मेरी हैसियत क्या है ? जवकि आप व[illegible] प्रसिद्ध...।"

"प्रसिद्ध हूँ नहीं—था। अव तो मेरी भी हैसियत...ख़ैर, जाने दीजि[illegible] वीती विसार कर आगे की सुध लेने में ही सार है।"

"मैं हमेशा आपकी मदद करूँगी।"

"आपको देर हो रही है न ? प्लीज़...क्षमा कर दीजिएगा, मे[illegible] कारण आपको...।"

"नहीं, आप के कारण नहीं। ऐसा न सोचिए। फिर भी... काफ़ी हो चुका है।"

"फिर मिलेंगे..." भीमा विदा लेते-लेते बुदबुदाया।

"हाँ...नमस्कार...!"

वह मुड़ी और जाने लगी।

भीमा ने रेलवे-स्टेशन की ओर कदम बढ़ाए। गर्दन घुमाकर, जाती हुई कुन्दन को एक बार देख लेने का बड़ा मन हो रहा था, किन्तु भीमा ने स्वयं को रोका। ये सब भावुकता की बातें हैं।

किन्तु कुन्दन के साथ बिताया हुआ एक-एक क्षण भीमा के तन-मन में बज रहा था।

सहसा भीमा ने देखा—

एक जगह भीड़ लगी है। हुंकार जैसी आवाजें उठ रही हैं। शायद कोई झगड़ा...?

भीमा रुक गया।

भीड़ के नजदीक आया। देखा—दो किशोर हैं। गुत्थमगुत्था हो गए हैं। एक-दूसरे के बाल नोच रहे हैं, गालियाँ दे रहे हैं। कपड़े-लत्ते से सयाने तो नहीं लग रहे, किन्तु इतने क्रोधित हैं कि आपा खो बैठे हैं।

भीड़ इकट्ठी तो हो गई है, किन्तु उन्हें छुड़ाने का प्रयास कोई नहीं कर रहा। सब तमाशा देखने के लिए हैं। बल्कि एक-दो जने ऐसे भी हैं जो उन किशोरों को और भी ज्यादा लड़ाना चाहते हैं। उन्हें तरह-तरह से उकसा रहे हैं।

भीमा से न रहा गया। लड़ाई। हाथापाई। दंगल! [illegible] सही—आधा दंगल सही। दंगल ही तो भीमा की दुनिया थी। [illegible] दुनिया से जबरन निकाल बाहर किया गया, किन्तु क्या ऐसे [illegible] में भी भीमा की कोई उपयोगिता नहीं?

भीड़ को चीर कर भीमा आगे आ गया। [illegible] शरीर भीड़ के लोगों को इतनी आसानी से हटाना [illegible] के सामने मोम की दीवार पिघल कर बैठती जा [illegible] जाए।

हुआ, दोनों में से किसी की समझ में न आया।

"क्यों लड़ रहे हो, प्यारे बच्चो ?" भीमा ने मुस्करा कर पूछा, "ज़रूरत-से-ज़्यादा जोश कहाँ से आ गया ? अभी तो ठीक से जवान भी नहीं हुए।"

"छोड़िए। छोड़ दीजिए।" किशोरों ने छूटने के लिए तड़पना शुरू किया, किन्तु भीमा की इस्पाती पकड़ के सामने उनका बूता ही क्या था। भीमा ने उन्हें ऐसा जकड़ा कि तड़पना तो दूर, हिलना भी उनके लिए सम्भव न रहा।

भीड़ की ओर देखकर भीमा गुर्राया, "खड़े क्या है ? जाइए। रास्ता नापिए। इन बच्चों से मैं निबट लूँगा।"

भीमा की चुनौती ने भीड़ को तुरन्त बिखेर दिया।

भीमा ने दोनों किशोरों को ज़मीन पर खड़ा किया, फिर दोनों के बीच में स्वयं डट गया और बोला, "बताओ, क्यों लड़ रहे थे ?"

दोनों किशोर चुप।

"बताओ, वरना मैं यही समझूँगा कि बिना बात के लड़ रहे थे।"

दोनों किशोर फिर भी चुप। नीचे देखने लगे।

"नहीं बताओगे ?" भीमा प्यार से हँसा, "तो मिलाओ हाथ।"

दोनों में से किसी किशोर ने हाथ न बढ़ाया।

भीमा ने पकड़ा एक किशोर का हाथ। भीमा ने पकड़ा दूसरे किशोर का हाथ। जबरन खींच कर मिला दिया और कहा, "हो गई न फिर से दोस्ती ?"

किशोरों ने न 'हाँ' कही न 'ना'।

"बिलकुल हो गई—एकदम पक्की दोस्ती हो गई। चलो, इस खुशी में तुम दोनों का मुँह मीठा कराऊँ।" भीमा ने कहा।

यह बात उन किशोरों की आशा के बिलकुल विपरीत थी। वे भीमा की ओर देखते रह गए। भीमा ने दोनों को प्यार से एक-एक चपत लगाई और दोहराया, "क्यों ? मुँह मीठा नहीं करना ?"

दोनों किशोर कुछ शरमाए, कुछ झेंपे।

भीमा उन्हें खींचता हुआ सामने के डिपार्टमेंटल-स्टोर की ओर ले

गया। दोनों के लिए अपने खर्च पर टॉफियाँ खरीदीं। उनकी जेबों में भर दीं।

"जाओ, भागो! अगर आइन्दा फिर लड़ते दिखाई दिए, तो हाथ-पैर बाँध कर चिड़ियाघर में छोड़ आऊँगा। समझे?" भीमा बोला और एक पल कर हँस दिया।

उस की हँसी, दोनों किशोरों के लिए इतनी उल्लासदायक थी कि वे भी हँसे बिना न रह सके।

वे जाने लगे। भीमा ने रोका, "जाते-जाते एक और बार हाथ मिलाते जाओ।"

किशोर रुके। जरा झिझके। फिर दोनों ने तपाक से आपस में हाथ मिलाए।

"शाबाश!" भीमा ने दोनों की पीठ थपथपाई, "अब कभी न लड़ना।"

किशोर चले गए। भीमा ने भी रेलवे-स्टेशन की ओर कदम बढ़ा दिए। उस नन्हे-से 'दंगल' में भाग लेकर वह कम प्रसन्न नहीं था।

किशोरों का झगड़ा भीमा ने कितनी शीघ्रता से, कैसी आत्मीयता से समाप्त कर दिया—इसकी जानकारी कुन्दन को मिल चुकी थी।

यदि भीमा जान सकता कि कुन्दन ने उसे उस झगड़े का निबटारा करते देख लिया है, तो उसकी प्रसन्नता निश्चित रूप से दोगुनी हो जाती।

किन्तु यह जानकारी भीमा को नहीं थी। जानकारी न होने के बावजूद वह खासा प्रसन्न था। स्टेशन की ओर उठते कदमों में तेजी आ गई थी।

भीमा से विदा लेने के बाद कुन्दन ने, यों ही पलट कर पीछे देख लिया था। भीमा जैसे नेकदिल व्यक्ति का साथ पाकर वह एक ऐसे सन्तोष से भरी हुई थी, जो उसके लिए अनूठा ही था। उसी सन्तोष के कारण उसने जाते-जाते, भीमा की ओर पलट कर, एक नजर देख लेना चाहा था।

और तब उसने देखा था—भीमा उस भीड़ को चीरता हुआ किशोरों की ओर बढ़ रहा था।

भीमा ने कैसे रोबीले ढंग से भीड़ को बिखेर दिया और कैसे चुटकियों में ही दोनों किशोरों को दोस्त बना दिया—कुन्दन ने सब देखा।

देखने के लिए, नुक्कड़ पर, थम गई थी वह। किशोरी को विदा करने के बाद भीमा ने जब स्टेशन की ओर क़दम उठाए, उसके बाद ही कुन्दन अपनी जगह से हिल सकी थी।

भीमा की योग्यता को उसने ऐसे कोण से पहचाना था, जिस में अनेक सम्भावनाएँ थी। उन सम्भावनाओं के ज़ोर पर भीमा को कोई काम शायद शीघ्र ही दिलाया जा सकेगा...।

अपनी मेज़ पर रखी अनेक फाइलें कुन्दन को याद आ गई थीं...कल सुबह, दफ़्तर पहुँचते ही, वह उन फाइलों को चेक करेगी।

१६

दफ़्तर पहुँचते ही, अगले दिन,कुन्दन ने उन फाइलों को चेक किया। एक फाइल सचमुच ऐसी निकल आई, जो भीमा के लिए वरदान साबित हो सकती थी।

वह फाइल थी 'क्वीन मेरी पब्लिक स्कूल' की।

इस स्कूल के इम्तहान अपने अन्तिम चरण पर थे। इम्तहानों के बाद, स्कूल का ग्रीष्म-कालीन कैम्प लगने वाला था। तमाम बच्चे बम्बई से बाहर जाने वाले थे। कहाँ जाएँगे, यह अभी निश्चय नहीं था, किन्तु किसी खुली जगह में ही जाएँगे—जहाँ उन्हें प्रकृति की गोद में खेलने-कूदने का अवसर मिल सके और बम्बई की चिपचिपी गर्मी से छुटकारा भी मिल सके।

इस ग्रीष्म-कालीन कैम्प में, शैतान बच्चों को सम्भालने के लिए, स्कूल को एक ऐसे व्यक्ति की ज़रूरत थी, जिस में अनुशासन लागू करने की योग्यता हो।

भीमा में ऐसी योग्यता है। इस योग्यता की कोई डिग्री तो नहीं भीमा के पास, किन्तु यह उसमें नैसर्गिक रूप में ही है। जन्मजात! कुन्दन ने स्वयं अपनी आँखों से देखा था उस योग्यता को।

उसने 'क्वीन मेरी पब्लिक स्कूल' के प्रिंसिपल मिस्टर के. के. महाजन का फोन-नम्बर मिलाया।

"हैलो, महाजन साहब ! नमस्कार...मैं कुन्दन बोल रही हूँ।"

"नमस्कार, कुन्दन जी ! कोई डेवलपमेंट ?"

"आपसे एक बात पूछनी थी।"

"हाँ, हाँ . ।"

"ग्रीष्म-कालीन कैम्प में आपको जो 'फिजिकल इन्स्ट्रक्टर' चाहिए न, उस पद के लिए . डिग्री-विग्री का कोई बन्धन तो नहीं है न ?"

"चाहेंगे तो हम किसी डिग्री वाले व्यक्ति को ही, किन्तु...अपवाद सब जगह होते हैं।"

"एक व्यक्ति मेरे ध्यान में है। डिग्री तो नहीं है उसके पास, किन्तु जैसी योग्यता किसी 'फिजिकल इन्स्ट्रक्टर' में होनी अपेक्षित है, वैसी योग्यता उसमें कूट-कूटकर भरी हुई है।" और कुन्दन ने, अपनी ओर से जो भी अधिकतम प्रशंसा, भीमा की हो सकती थी, कर डाली। केवल एक बात छिपाई उसने—कि भीमा भूतपूर्व पहलवान रहा है। प्रिंसिपल पर इसका प्रभाव अच्छा नहीं पड़ेगा, वह जानती थी।

महाजन साहब बोले, "जब आप इतनी सिफ़ारिश कर रही हैं, तो इस व्यक्ति को ..क्या नाम बताया आपने ?"

"श्री भीमसेन अग्रवाल।"

"ठीक है। हम इन सज्जन को कन्सीडर कर सकते हैं। क्यों न उनका एक हल्का-सा इण्टरव्यू ले लिया जाए ? वैसे, जब आप ने सिफ़ारिश की है, तो.. लगभग पक्का ही जानिए, फिर भी ..।"

"ओके—एण्ड थैंक्यू। मैं भीमसेन जी से सम्पर्क कर के आपको अगली सूचना दूँगी। इण्टरव्यू के लिए आप उन्हें कब बुलाना चाहेंगे ?"

"एक मिनट.. मैं ज़रा अपनी डायरी में चैक-अप कर लूँ।"

टेलीफोन पर थोड़ा सन्नाटा। फिर —

"हाँ, कुन्दन जी, ऐसा है ..उन्हें आप परसों तक मत भेजिए। उसके बाद किसी भी दिन रखा जा सकता है। जैसा भी उनके लिए सुविधाजनक हो।"

"ओके—एगेन थैंक्यू . !"

"मेन्शन नाट...।"

कुन्दन ने रिसीवर रख दिया। गहरी साँस ली। तो आखिर, कुछ करना सम्भव हुआ तो सही !

उसने भीमा की फाइल खोली। गेस्ट-हाउस का फोन-नम्बर अलग परची पर नोट किया, फिर डायल घुमाने लगी।

इन्गेज्ड।

दसेक मिनट बाद कुन्दन ने फिर ट्राई किया।

इन्गेज्ड। दसेक मिनट बाद फिर—इन्गेज्ड।

कुन्दन ने टेलीफोन-एक्सचेंज को सहायता माँगी, तो जवाब मिला, "उधर की लाइन खराब है।"

"ओह...!" बुदबुाकर कुन्दन ने रिसीवर रख दिया।

अब ? भीमा को कैसे खबर की जाए ? सोचा, 'दोपहर तक शायद लाइन ठीक हो जाएगी।'

—जो कि न हुआ।

शाम हुई। दफ़्तर से उठने का समय हो गया। लाइन वैसी-की-वैसी। एक बार सोचा, 'कल खबर कर दूंगी। आज ही ऐसी कौन-सी जल्दी है।' किन्तु तभी याद आया—कोई काम पाने के लिए भीमा कितना उत्सुक था ! कितना नेकदिल आदमी ! इन्टरव्यू देने के लिए उसे भले ही एकदम आज या कल नहीं जाना—किन्तु काम उसे यथासम्भव मिल सकता है, यह समाचार तो आज का है न ! आज का समार उसे आज ही मिल जाना चाहिए।

एक ही उपाय है—कुन्दन स्वयं जाए बताने के लिए।

किन्तु...?

क्या ऐसा करना उचित रहेगा ? भीमा के मन में जो कोमल भावनाएँ पनप सकती हैं—क्योंकि वह भावुक व्यक्ति है—क्या उसमें कोई खतरा नहीं ? ऐसी कई घटनाएँ कुन्दन की सहेलियों के साथ घट चुकी हैं, जब भावुक व्यक्तियों के कारण उन सहेलियों को दिक़्क़तों का सामना करना पड़ा। कुन्दन ने उन निरीक्षणों से सबक़ लिया था—भावुक व्यक्तियों से जरा दूर का ही वास्ता रखना चाहिए।

किन्तु कुन्दन से रहा न गया। दफ़्तर से निकलते समय वह अनिश्चित-

थी थी कि जाए या न जाए, किन्तु निकल कर सड़क पर आते-आते वह फ़ैसला कर चुकी थी—वह जाएगी।

वह गई। दादर में उस गेस्ट-हाउस को ढूँढ़ने विशेष समय न लगा। एकाध जगह ही पूछताछ करनी पड़ी। गेस्ट-हाउस में प्रवेश करने के साथ वह मैनेजर की मेज़ के सामने खड़ी थी। जब उसने बताया कि वह श्री भीमसेन अग्रवाल से मिलने आई है, तो मैनेजर ने उसे सिर से पाँव तक देखा। वह असहज होने लगी, किन्तु शीघ्र ही सम्भल गई। मैनेजर ने नौकर साथ कर दिया, "इन्हें भीमा जी के कमरे तक पहुँचा आओ।"

बन्द दरवाज़े तक पहुँचाकर नौकर लौट गया।

कुन्दन ने दरवाज़े पर धीमे-से खटखट की।

"कौन?" भीतर से पूछा गया। पुरुष-स्वर। भीमा का स्वर नहीं था वह स्वर। भीमा का नहीं, तो किसका? चाहे जिसका भी हो, कुन्दन को उत्तर देना होगा। वह बोली, "ज़रा खोलिएगा।"

दरवाज़ा तुरन्त खुला। सामने चम्पक खड़ा था। वह उसे पहचानती नहीं थी। चम्पक भी उसे नहीं पहचानता था, किन्तु उसने अन्दाज़ा लगा लिया। कुन्दन बोली, "श्री भीमसेन जी हैं?"

"भीमसेन जी? ओह, आइए...आइए न!" चम्पक सामने से हट गया। कुन्दन के सौंदर्य ने उसे चकाचौंध कर दिया था। सादगीपूर्ण वेश-भूषा ने उस सौंदर्य को इतना सम्माननीय बना दिया था कि चम्पक को भीमा के भाग्य से जलन हुई। इस तरह कभी कोई सुन्दरी चम्पक से मिलने नहीं आई।

कुन्दन ने प्रवेश किया। खोजपूर्ण निगाह पूरे कमरे में डाली। भीमा अनुपस्थित था। पूछा, "वह...कहीं गए हुए हैं क्या?"

"ज़रा सैलून तक गए हैं। गए हुए काफ़ी समय हो गया। आते होंगे। बिलकुल आते ही होंगे। बैठिए न। मेरा ख़याल है, आप कुन्दन जी हैं?"

"जी।" कुन्दन संकोच के साथ बैठी।

"मुझे चम्पक कहते हैं।"

"ओह, आप हैं।" कुन्दन चौंक पड़ी, "भीमसेन जी आप के बारे में इतने चिन्तित हैं कि उतने तो स्वयं अपने बारे में भी नहीं।"

चम्पक मुस्कराया, "दरअसल...हम लोग ऐसी स्थितियों से गुज़र रहे हैं कि केवल चिंतित होने का भी कोई अर्थ नहीं रहा। मौक़ा तो अब त्याग और बलिदान का है।"

"मैं समझी नहीं।"

"क्या लेंगी ?" चम्पक ने शिष्टाचार का परिचय दिया, "कॉफ़ी या चाय ? वैसे, इस गेस्ट-हाउस की चाय—केवल चाय ही...कुछ पीने लायक़ होती है। कॉफ़ी न मँगा बैठिएगा।"

"नहीं, प्लीज, रहने दीजिए, बिलकुल इच्छा नहीं।"

"लेकिन जब भीमा आएगा, तो...क्षमा कीजिएगा, भीमसेन जी को यहाँ सब भीमा ही कहते हैं..."

"इट्स ओ.के।"

"भीमा आपको कुछ-न-कुछ ज़रूर पिलाएगा। वह आता ही होगा। लिहाज़ा, विशेष आग्रह यदि मैं न करूँ, तब भी काम चल सकता है।" और चम्पक मुस्कराया। न जाने क्यों, कुन्दन को ऐसा लगा—वह मुस्कान किसी दोस्त की मुस्कान नहीं थी। उस मुस्कान में चुनौती जैसी छाप क्यों थी ? क्यों मिला ऐसा आभास ?

"मैं...भीमसेन जी के लिए एक सन्देश लाई हूँ। यदि आप दे सकें, तो मैं आप को बता कर ही...।"

"क्या भीमा से मिले बिना चली जाएँगी ? सवाल ही नहीं।" चम्पक ने साधिकार कहा, "तो भी—सन्देश क्या है ?"

"उनसे कहिएगा, कल मुझसे मिल लें। टेलीफोन की लाइन ख़राब थी, इसलिए कहने के लिए स्वयं आई हूँ।"

"आपने वास्तव में कष्ट किया। बस, इतना ही सन्देश है ? कह दूंगा। वैसे, यदि यह सन्देश न दूं, तो भी...भीमा आपसे मिलने के लिए...कल नहीं तो परसों आने ही वाला था। हर समय आपके गुण गाता रहता है।"

कुन्दन ने क्षण-मात्र में भाँप लिया—ग़लत व्यक्ति के सामने फँस गई है। उठ जाना चाहिए। कुन्दन को अपनी धड़कन के ज़रा तीव्र हो जाने का पता चल गया। उसकी आँखों की वेधकता बढ़ी। पल्लू खींच कर उस ने कन्धे पर और भी ज़्यादा समेट लिया। यह उसकी आत्म-रक्षा वाली

मुद्रा थी।

"आपका व्यक्तित्व वास्तव में वैसा ही है, जैसा भीमा बताया करता है।" चम्पक बोला, "मुझे आपसे मिलकर प्रसन्नता हुई। दरअसल .. आपकी तारीफ सुन-सुनकर मैं इतना उत्सुक हो चुका था कि यदि आज मुलाकात न होती, तो खास आप के दर्शन करने के लिए 'एम्प्लायमेंट-एक्सचेंज' तक आना पड़ता।"

कुन्दन ने बात पलटने के लिए कहा, "त्याग और बलिदान के मौके के बारे में आप कुछ कह रहे थे न?"

"ओह, हाँ . .असल में...भीमा से मुझे डर-सा लगता है। वह जरा कम व्यावहारिक है। मेरे लिए वह किसी भी सीमा तक त्याग कर सकता है— किन्तु अपने सिद्धान्तों को न छोड़ते हुए। अब...देखिए न जैसी यह दुनिया है— इसमें त्याग की भी दो शैलियाँ बन गई हैं।" चम्पक बोला, "एक शैली आदर्शवादियों की। दूसरी दुनियादारों की। सोचने की बात यह है—आदर्शवादियों का त्याग आखिर कितना सार्थक हो सकता है?"

"मुझे नहीं मालूम कि आप और भीमसेन जी किस नैतिक पहेली में फँसे हुए हैं।"

"मुझे पाँच हजार रुपयों की सख्त जरूरत है। भीमा ने मुझसे अनेक हजार रुपए उधार लिए हुए हैं। मुझे जरूरत है—भीमा को लौटा देने चाहिए। वह इसके लिए कोशिश भी कर रहा है, किन्तु त्याग और बलिदान की उसकी शैली क्या है? वही—आदर्शवादियों की! मसलन ..यदि मैं उससे कहूँ कि भीमा, तुम एक खास प्रोग्राम में रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचो—पाँच-छह हजार एकमुश्त मिल जाएँगे—तो वह तैयार नहीं होगा।"

"होना भी नहीं चाहिए," कुन्दन बोली।

"क्यों? यदि कोई जरूरत एकदम गला ही घोंट रही हो, तो—"

"इस बारे में तो लम्बी चर्चा की जरूरत है।" कुन्दन ने उत्तर दिया, "अभी मेरे पास इतना समय नहीं। भीमा जी.. सॉरी . भीमसेन जी को मेरा सन्देश दे दीजिएगा। उन्हें मुझसे तुरन्त मुलाकात करनी चाहिए।"

"क्या किसी नौकरी का इन्तजाम हो गया है?" चम्पक ने पू

[illegible]

"मैं समझी नहीं।"

"क्या लेंगी ?" चम्पक ने [illegible] किया, "कॉफ़ी या चाय ? वैसे, इस [illegible] — केवल चाय ही...कुछ पीने लायक होती है। कॉफ़ी न [illegible]।"

"नहीं, प्लीज़, क्षमा कीजिए, बिलकुल इच्छा नहीं।"

"लेकिन जब भीमा आएगा, तो...मना कीजिएगा, भीमसेन जी को यहाँ सब भीमा ही कहते हैं..."

"इट्स ओ.के।"

"भीमा आपको कुछ-न-कुछ जरूर पिलाएगा। वह आता ही होगा। लिहाज़ा, विशेष आग्रह यदि मैं न करूँ, तब भी काम चल सकता है।" और चम्पक मुस्कराया। न जाने क्यों, कुन्दन को ऐसा लगा—वह मुस्कान किसी दोस्त की मुस्कान नहीं थी। उस मुस्कान में चुनौती जैसी छाप क्यों थी ? क्यों मिला ऐसा आभास ?

"मैं...भीमसेन जी के लिए एक सन्देश लाई हूँ। यदि आप दे सकें, तो मैं आप को बता कर ही...।"

"क्या भीमा से मिले बिना चली जाएँगी ? सवाल ही नहीं।" चम्पक ने साधिकार कहा, "तो भी—सन्देश क्या है ?"

"उनसे कहिएगा, कल मुझसे मिल लें। टेलीफ़ोन की लाइन खराब थी, इसलिए कहने के लिए स्वयं आई हूँ।"

"आपने वास्तव में कष्ट किया। बस, इतना ही सन्देश है ? कह दूँगा। वैसे, यदि यह सन्देश न दूँ, तो भी...भीमा आपसे मिलने के लिए...कल नहीं तो परसों आने ही वाला था। हर समय आपके गुण गाता रहता है।"

कुन्दन ने क्षण-मात्र में भाँप लिया—गलत व्यक्ति के सामने फँस गई है। उठ जाना चाहिए। कुन्दन को अपनी धड़कन के ज़रा तीव्र हो जाने का पता चल गया। उसकी आँखों की वेधकता बढ़ी। पल्लू खींच कर उसने कन्धे पर और भी ज़्यादा समेट लिया। यह उसकी आत्म-रक्षा वाली

मुद्रा थी।

"आपका व्यक्तित्व वास्तव में वैसा ही है, जैसा भीमा बताया करता है।" चम्पक बोला, "मुझे आपसे मिलकर प्रसन्नता हुई। दरअसल... आपकी तारीफ सुन-सुनकर मैं इतना उत्सुक हो चुका था कि यदि आज मुलाकात न होती, तो खास आपके दर्शन करने के लिए 'एम्प्लायमेंट-एक्सचेंज' तक आना पड़ता।"

कुन्दन ने बात पलटने के लिए कहा, "त्याग और बलिदान के मौके के बारे में आप कुछ कह रहे थे न?"

"ओह, हाँ ..असल में...भीमा मुझे डर-सा लगता है। वह जरा कम व्यावहारिक है। मेरे लिए वह किसी भी सीमा तक त्याग कर सकता है—किन्तु अपने सिद्धान्तों को न छोड़ते हुए। अब...देखिए न ..जैसी यह दुनिया है—इसमें त्याग की भी दो शैलियाँ बन गई हैं।" चम्पक बोला, "एक शैली आदर्शवादियों की। दूसरी दुनियादारों की। सोचने की बात यह है—आदर्शवादियों का त्याग आखिर कितना सार्थक हो सकता है?"

"मुझे नहीं मालूम कि आप और भीमसेन जी किस नैतिक पहेली में फँसे हुए हैं।"

"मुझे पाँच हजार रुपयों की सख्त जरूरत है। भीमा ने मुझसे अनेक हजार रुपए उधार लिए हुए हैं। मुझे जरूरत है—भीमा को लौटा देने चाहिए। वह इसके लिए कोशिश भी कर रहा है, किन्तु त्याग और बलिदान की उसकी शैली क्या है? वही—आदर्शवादियों की! दरअसल ..यदि मैं उससे कहूँ कि भीमा, तुम एक खास प्रोग्राम में रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचो—पाँच-छह हजार एकमुश्त मिल जाएँगे—तो वह तैयार नहीं होगा।"

"होना भी नहीं चाहिए," कुन्दन बोली।

"क्यों? यदि कोई जरूरत एकदम गला ही घोंट रही हो, तो --"

"इस बारे में तो लम्बी चर्चा की जरूरत है।" कुन्दन ने उत्तर दिया "अभी मेरे पास इतना समय नहीं। भीमा जी.. सॉरी . भीमसेन जी को मेरा सन्देश दे दीजिएगा। उन्हें मुझसे तुरन्त मुलाकात करनी चाहिए।"

"क्या किसी नौकरी का इन्तजाम हो गया है?" चम्पक ने आँखें

सिकोड़ीं।

"जी हाँ। अस्थायी पद है। बाद में...शायद स्थायी हो जाए।"

"कैसा पद है?"

"मैं भीमसेन जी को बताऊँगी। आप उन्हीं से पूछ लीजिएगा। फ़िलहाल...मैं चलती हूँ।" कुन्दन झटके के साथ उठ पड़ी।

चम्पक के चेहरे का रंग बदलने लगा, "कुन्दन जी...मुझे पहली मुलाक़ात में ही कहना तो नहीं चाहिए, लेकिन कह रहा हूँ—क्या आप मेरे पहलवान को अकेला नहीं छोड़ सकतीं?"

"क्या मतलब?" कुन्दन की आँखों की वेधकता बढ़ गई।

"आप सरकारी कर्मचारी हैं, तनख़्वाह पाती हैं। भीमा की चिन्ता नहीं करेंगी, तब भी तनख़्वाह आपको मिलेगी।"

"मैं अभी यहाँ सरकारी ख़र्च पर नहीं आई हूँ, मिस्टर! यहाँ आने का कोई ओवर-टाइम भी मुझे नहीं मिलेगा।"

"यह तो आप ही ठीक-ठीक जान सकती हैं कि आप क्यों आई हैं। मुझे केवल यही कहना है कि भीमा में दुनियादारी की काफ़ी कमी है। भीमा की परेशानियों का मूल कारण यही है। यदि आप इस कमी को और गहरा कर देंगी, तो...।"

"भीमसेन जी की किसी भी कमज़ोरी को उभारने में मेरी रुचि न तो है, न हो सकती है। मैं केवल मानवीय नाते से उनकी सहायता करना चाहती हूँ। भीमसेन जी भी इसी नाते से आपकी सहायता करना चाहते हैं। मैं नहीं जानती कि रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचने का उदाहरण आपने केवल उदाहरण के रूप में दिया—अथवा ऐसा कोई प्रस्ताव सचमुच आपके सामने है। भीमसेन जी इसी तरह का कोई घटिया प्रस्ताव मान लें, चाहे न मानें—मुझे उनकी सहायता करनी है और करूँगी।"

"रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचने वाली बात मैंने केवल उदाहरण के रूप में नहीं कही है, कुन्दन जी!" चम्पक ने अवसर पहचानकर कहा। भीमा के सामने उक्त प्रस्ताव रखने के लिए देशराज राज़ी न हो, न सही—स्वयं चम्पक साहस न जुटा पाए, न सही—किन्तु कुन्दन के माध्यम से यह सन्देश भीमा को अवश्य दिया जा सकता है। चम्पक ने जारी रखा,

"भीमा की जगह यदि मैं होता, तो अपने दोस्त की जान बचाने के लिए तेरा प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लेता। भीमा नहीं करेगा—क्योंकि मेरे लिए त्याग करना चाहकर भी वह नहीं करना चाहता।"

"त्याग करने का अर्थ यह नहीं कि अपनी आत्मा बेच दी जाए।"

"आत्माओं का कहीं अस्तित्व नहीं।"

"आप मुझे कभी नहीं समझ सकेंगे। मैं भी आपको कभी नहीं समझ सकूँगी। हमें ऐसा प्रयास करने में समय बर्बाद नहीं करना चाहिए। हम एक-दूसरे के लिए किसी अन्य ग्रह से आए [illegible] की तरह अपरिचित हैं—और रहेंगे। थैंक्स फॉर कम्पनी।" और [illegible] हुई [illegible] कमरे से बाहर निकल गई।

पीछे से [illegible] मुस्करा दिया। [illegible] जाएगा—पहुँचकर रहेगा। देखें, [illegible] पर [illegible] है ... [illegible] उसे कहते हैं, जो मुसीबत में काम आए। देखें [illegible] निभाता है।

गेस्ट-हाउस की सीढ़ियाँ उतर कर [illegible] कि भीमा से आमना-सामना हो गया।

"अरे, आप?"—भीमा [illegible]। [illegible]

सिकोड़ीं।

"जी हाँ। अस्थायी पद है। बाद में...शायद स्थायी हो जाए।"

"कैसा पद है ?"

"मैं भीमसेन जी को बताऊँगी। आप उन्हीं से पूछ लीजिएगा। फ़िल-हाल...मैं चलती हूँ।" कुन्दन झटके के साथ उठ पड़ी।

चम्पक के चेहरे का रंग बदलने लगा, "कुन्दन जी...मुझे पहली मुलाक़ात में ही कहना तो नहीं चाहिए, लेकिन कह रहा हूँ—क्या आप मेरे पहलवान को अकेला नहीं छोड़ सकतीं ?"

"क्या मतलब ?" कुन्दन की आँखों की वेधकता बढ़ गई।

"आप सरकारी कर्मचारी हैं, तनख्वाह पाती हैं। भीमा की चिन्ता नहीं करेंगी, तब भी तनख्वाह आपको मिलेगी।"

"मैं अभी यहाँ सरकारी खर्च पर नहीं आई हूँ, मिस्टर ! यहाँ आने का कोई ओवर-टाइम भी मुझे नहीं मिलेगा।"

"यह तो आप ही ठीक-ठीक जान सकती हैं कि आप क्यों आई हैं। मुझे केवल यही कहना है कि भीमा में दुनियादारी की काफ़ी कमी है। भीमा की परेशानियों का मूल कारण यही है। यदि आप इस कमी को और गहरा कर देंगी, तो...।"

"भीमसेन जी की किसी भी कमज़ोरी को उभारने में मेरी रुचि न तो है, न हो सकती है। मैं केवल मानवीय नाते से उनकी सहायता करना चाहती हूँ। भीमसेन जी भी इसी नाते से आपकी सहायता करना चाहते हैं। मैं नही जानती कि रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचने का उदाहरण आपने केवल उदाहरण के रूप में दिया—अथवा ऐसा कोई प्रस्ताव सचमुच आपके सामने है। भीमसेन जी इसी तरह का कोई घटिया प्रस्ताव मान लें, चाहे मानें—मुझे उनकी सहायता करनी है और करूँगी।"

"रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचने वाली बात मैंने केव उदाहरण के रूप में नहीं कही है, कुन्दन जी !" चम्पक ने अवसर पहचानव कहा। भीमा के सामने उक्त प्रस्ताव रखने के लिए देशराज राजी न हो, सही—स्वयं चम्पक साहस न जुटा पाए, न सही—किन्तु कुन्दन के माध्य से यह सन्देश भीमा को अवश्य दिया जा सकता है। चम्पक ने जारी र

"भीमा की जगह यदि मैं होता, तो अपने दोस्त की जान बचाने के लिए ऐसा प्रस्ताव सहर्ष स्वीकार कर लेता। भीमा नहीं करेगा—क्योंकि मेरे लिए त्याग करना चाहकर भी वह नहीं करना चाहता।"

"त्याग करने का अर्थ यह नहीं कि अपनी आत्मा बेच दी जाए।"

"आत्माओं का कहीं अस्तित्व नहीं।"

"आप मुझे कभी नहीं समझा सकेंगे। मैं भी आपको कभी नहीं समझा सकूँगी। हमें ऐसा प्रयास करने में समय बर्बाद नहीं करना चाहिए। हम एक-दूसरे के लिए किसी अन्य ग्रह से आए प्राणियों की तरह अपरिचित हैं—और रहेंगे। थैंक्स फॉर कम्पनी।" और तमतमाती हुई कुन्तल कमरे से बाहर निकल गई।

पीछे से चम्पक मुस्करा दिया। भीमा तक 'यह प्रस्ताव' अब पहुँच जाएगा—पहुँचकर रहेगा। देखें, भीमा पर कैसी प्रतिक्रिया होती है। दोस्त उसे कहते हैं, जो मुसीबत में काम आए। देखें, भीमा किस हद तक दोस्ती निभाता है।

गेस्ट-हाउस की सीढ़ियाँ उतर कर कुन्तल सड़क पर आई ही थी कि भीमा से आमना-सामना हो गया।

"अरे, आप?"—भीमा चकित। हतप्रभ।

उसे देखते ही कुन्तल का तमतमाया चेहरा एकाएक खिल उठा। "क्यों? आश्चर्य की क्या बात है?"

"नहीं, नहीं, आश्चर्य नहीं, बल्कि... आश्चर्य तो यह है कि आप मुझसे मिले बिना जा रही थी।" भीमा ने मुस्कराकर कहा। सैलून से बाल कटवाकर आया था वह। कुन्तल को उसका चेहरा काफी छोटा-सा महसूस हुआ। बाल कटवाने के बाद पुरुषों का चेहरा, कितना बदल जाता है! भीमा के जबर्दस्त शरीर पर उसका चेहरा केवल छोटा नहीं, निरीह-सा भी लग रहा था। क्या सचमुच यह चेहरा निरीह था? या, कुन्तल ने कल्पना कर ली? जो भी हो, भीमा का जरा बदला हुआ-सा व्यक्तित्व कुन्तल को और भी अच्छा लगा। चेहरे का छोटापन भीमा के पहलवानपन को कम नहीं कर रहा था क्या? कर तो रहा था! कुन्तल उसे देखती रह गई।

भीमा ने गौर किया—कुन्तल देखती रह गई है [illegible]

झेंपा, "क्या देख रही हैं ?"

कुन्दन ने निगाह हटाई नहीं, "आपकी हेयर-स्टाइल वदलने की ज़रूरत है।"

"ओह !" भीमा झेंपा गया—दूसरी बार।

"कभी किसी ब्यूटीशियन के पास ले जाऊँगी।"

भीमा, झेंप छिपाने के ख़याल से, मुंह फाड़कर हँसा, "आप मुझे सौन्दर्य-विशेषज्ञ की कुर्सी में विठाएँगी ?"

"क्यों ? पुरुषों को आकर्षक दिखाई पड़ना ही नहीं चाहिए, यह आप से किस ने कहा ?"

"मगर उससे भी पहले मेरा नाम वदले जाने की जरूरत है।" भीमा ने मुंह विदकाया, "भीमसेन ! भीमा ! यह भी कोई नाम हुआ ?"

"दोनों काम साथ-साथ करेंगे। नया नाम, नई हेयर-स्टाइल।"

"मगर.. पहले यह बताइए—मुझ से मिले विना लौट क्यों रही थीं ?"

"दरअसल, मिलने नहीं आई थी, एक सन्देश छोड़ने आई थी। टेलिफोन की लाइन में खरावी होने के कारण खुद आना पड़ा।"

भीमा ऐसा कहते-कहते रुक गया, 'खुदा करे, ऐसी ख़रावी रोज आती रहे।' इसकी वजाए उसने कहा, "कमरे में चम्पक से मुलाक़ात हुई होगी। क्या उसने आपसे वैठने के लिए भी न कहा ?"

"अजी, कहा क्यों नहीं। कहा तो उन्होंने वहुत-कुछ...वल्कि, जो उन्होंने कहा, उसी के कारण.. खैर, जाने दीजिए। सन्देश, जिसे छोड़ने के लिए आई थी—आई हूं—यह है कि आपका काम शायद वन जाए।"

भीमा पानी-पानी हो गया। चम्पक ने उस कुन्दन को ढंग से विठाया भी नहीं, जो भीमा का काम वन जाने का समाचार देने के लिए स्वयं चलकर आई। विठाना तो दूर, न जाने क्या कह दिया उसने—न जाने ऐसी कौन-सी वात कि कुन्दन ने वैठकर इन्तजार करना उचित न समझा। इस चम्पकवा की ज़वान वड़ी लम्बी है। हमेशा इसी तरह वक-वक करके खेल विगाड़ता रहता है...।

शर्म से धीरे स्वर में भीमा ने कहा, "सड़क से ही, यों खड़े-खड़े ही वातें

करके आप लौट जाएँ, मेरे लिए यह कितना बड़ा दुर्भाग्य होगा, कैसे बताऊँ ? प्लीज़, कुन्दन जी, थोड़ा रुक जाइए।"

"मुझे देर हो रही है। आप नहीं जानते, ज़रा-सी देर होते ही मेरी माँ की जान कैसे फड़फड़ाने लगती है !"

"दो मिनट में क्या फ़र्क पड़ जाएगा ? इतना तो सब जानते हैं कि बम्बई में आते-जाते देरी हो ही जाती है।"

"नहीं तो !" कुन्दन मुस्करा दी, "बम्बई दिल्ली तो नहीं है।"

"आपको यों जाने नहीं दूँगा। चलिए मेरे साथ।"

"कहाँ ?" कुन्दन ने पूछा, मगर भीमा ने मानो सुना ही नहीं। उसने सामने के रेस्तोराँ की ओर कदम बढ़ाने शुरू कर दिए थे। उसकी पीठ कुन्दन की ओर घूम चुकी थी। भीमा के आदेश का अनादर करना कितना आसान है कुन्दन के लिए ! भीमा की पीठ घूमी हुई है ही, उसे पता ही क्या चलेगा कि कुन्दन पीछे-पीछे, संग-संग आई या नहीं ? कुन्दन न जाए उसके संग—लौटकर यहीं से चलती बने। जब तक भीमा को इस गड़बड़ी का पता चलेगा, तब तक तो दोनों के बीच इतना अन्तर आ चुका होगा कि.. लेकिन भीमा कितने विश्वास के साथ बढ़ा जा रहा है रेस्तोराँ की ओर। कुन्दन उस विश्वास के विरुद्ध—चाहकर भी—न टिक सकी। अनायास उसके क़दम उठ गए। वह भीमा की बगल में चलने लगी।

"मगर एक शर्त है।" कुन्दन ने कहा।

"क्या ?"

"मुझसे मिलने आप आए थे, तब आपने खर्च किया था। आपसे मिलने मैं आई हूँ। खर्च मैं करूँगी। शिष्टाचार वाली पुस्तक की दुहाई नहीं चलने की।"

"हाँ। चम्पक जी तो यहाँ तक आशा रखते हैं कि उनके भले के लिए आपको यदि रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर किसी प्रोग्राम में नाचना पड़े, तब भी आप न हिचकें।"

भीमा मुस्कराया, "रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर नाचना ! बड़ा सटीक उदाहरण दिया उसने।"

"उदाहरण नहीं, उनके पास ऐसा प्रस्ताव सचमुच आ चुका है। यह प्रस्ताव आपके सामने रखे जाने की ही देर है।"

कुन्दन का स्वर इतना तीखा था कि भीमा अविश्वास न कर सका। फिर—उसकी रग-रग में एक ऐसा आवेग उबल आया, जिसका कारण क्रोध था या कुछ-और, भीमा न समझ पाया।

काफ़ी देर बाद वह इतना ही बोल सका, "चम्पक मेरे लिए ऐसा नहीं सोच सकता। वह जानता है, मैं होटल में डिशें धोना स्वीकार कर लूंगा, किन्तु कोई ऐसा काम नहीं करूंगा, जो मेरे आत्म-सम्मान के खिलाफ़ हो।"

"मैं नही जानती कि चम्पक जी के प्रति क्यों आप इतने ज़्यादा...?"

"इस आदमी ने मुझ पर पानी की तरह पैसा बहाया है।"

"दोस्ती के नाते नहीं, व्यापार के नाते। अब उसी पैसे को वह ब्याज-समेत वसूल करना...।"

"कुन्दन जी,मैं चम्पक से निवट लूंगा। आप...कह रही थीं न कि मेरा काम बन गया है ? अब ज़रा विस्तार से बताइए।"

"फिलहाल यह पद अस्थायी है। एक स्कूल को व्यायाम-शिक्षक चाहिए। यदि वे सन्तुष्ट हुए, तो पद स्थायी होने की पूरी गुंजाइश है।" और कुन्दन ने सारी बात विस्तार से सामने रखी।

भीमा के हाथ-पाँव फूल गए, "मैं इस पद के योग्य नहीं।"

"क्यों ?"

"स्कूल यानी शिक्षा का केन्द्र। मैं—अनपढ़ आदमी।"

"तो क्या हुआ ? इसके अलावा...किसने कहा, आप अनपढ़ हैं ?"

"बेकारी के इस जमाने में एम० ए० पास भी अनपढ़ ही है।"

"वह एक दूसरा पहलू है।"

"मुझे नही लगता, इंटरव्यू में वे मुझे पास करेंगे।"

"यह बाद की बात है।"

"मैं प्रिंसिपल के सामने खड़ा ही न हो सकूँगा। कांपने लगूँगा।"

भीमा का आत्म-विश्वास बढ़ाने के लिए कुन्दन उसे बार-बार यों समझाती रही। आखिर भीमा मान गया। "ठीक है," वह बोला, "अब आपका इतना ही आग्रह है, तो इंटरव्यू देने चला जाऊँगा।"

"यदि पास न हुए, तो कुछ और किया जाएगा। मैं आखिर किस लिए हूँ।"

"मुझे नही मालूम, कुन्दन जी, आपका शुक्रिया किस मुँह से अदा करूँ?"

"नही मालूम है, यही अच्छा है। शुक्रिया अदा करने वालों से मैं घबराती हूँ?"

"कुन्दन जी, आप बहुत अच्छी हैं।"

"इसके जवाब में क्या कहूँ? क्या यह कि आप भी बहुत अच्छे हैं?" और कुन्दन खुलकर मुस्करा दी।

"मैं क्या हूँ, मुझे मालूम है।"

"क्या है?"

जिसके आधार पर जाना जा सके कि किसी को अगर 'हाँ' कही तो क्यों और 'ना' कही तो क्यों ?"

"मुझे विवेक की परिभाषा नहीं मालूम, किन्तु...यदि आप में विवेक नहीं है, तो मैं यही कहूँगा कि विवेक कोई ऐसा गुण नहीं, जिसके लिए लालायित रहा जाए।"

"आप बहुत दयालु हैं। इसीलिए ऐसा कह रहे हैं। आप मुझे चोट नहीं पहुँचाना चाहते।"

"कुन्दन जी...शायद आप बहक रही हैं।"

"यह भी एक प्रमाण है कि सचमुच मैं अविवेकी हूँ।"

"यह कौन-सा गुबार है, कुन्दन जी, जो इस तरह फूट रहा है ?" भीमा ने पूछा और कुन्दन के मन की पर्तें खुल गईं। उसने बोलना शुरू किया, तो बोलती चली गई। सुरेश जी...माँ ने बताया था कि सुरेश जी की उम्र कोई ज़्यादा नहीं—लेकिन कुन्दन पहले से माने बैठी थी कि वह लगभग बूढ़े हैं। फिर...सुरेश जी स्वयं आए। मिले। कुन्दन ने देखा, स्वयं अपनी उम्र को ध्यान में रखकर देखा—सुरेश जी वास्तव में इतनी अधिक उम्र के नहीं थे कि...और इसके बावजूद, कुन्दन उन्हें 'हाँ' नहीं कह पा रही थी...क्यों ? कुन्दन नहीं जानती थी। क्यों नहीं जानती थी ? क्योंकि कुन्दन अविवेकी...कुन्दन को पता ही नहीं कि किसी को अगर 'हाँ' कही जाए, तो किस आधार पर...और 'ना' कही जाए, तो किस आधार पर... अपने पूर्वाग्रह के साथ यों चिपकी रहने वाली कुन्दन...!

भीमा ने गम्भीरता से कहा, "सुरेश जी भाग्यशाली होंगे, यदि उन्होंने आपको अपनी जीवनसंगिनी के रूप में पाया...लेकिन...ऐसा न सोचिए कि आप अविवेकी हैं।"

"मुझे बताइए, आखिर क्यों मैं उन्हें 'हाँ' नहीं कह पा रही ?"

"क्या आप 'हाँ' कहना चाहती हैं ?"

"मुझे नहीं मालूम, नहीं मालूम...।"

"यदि 'हाँ' कहना चाहती हैं, तो अवश्य 'हाँ' कह लेंगी।"

"मैं कारण ढूंढ़ रही हूँ। आखिर क्यों उन्हें 'हाँ' कह दूं ? केवल इतना काफ़ी नहीं कि उनमें कोई दोष मैं नहीं ढूंढ़ पा रही। इस दुनिया में

न जाने कितने व्यक्ति ऐसे निकल आएँगे, जिनमें कोई दोष—महत्ता—न ढूँढा जा सके। तो क्या...ऐसे अनेक व्यक्तियों में से किसी को भी चुना जा सकता है ?"

"मैं आपके इस सवाल का जवाब नहीं दे सकता। कहने के लिए मेरे पास, बस, यही है कि सुरेश जी को यदि आप 'हाँ' नहीं कह पा रही तो इसका कारण कभी-न-कभी आपको पता चल ही जाएगा।"

"मैं सोच-सोच कर परेशान हो गई हूँ।"

"कोई हर्ज नहीं।"

कुन्दन ने मुस्कराने का प्रयास किया, "कितनी आसानी से आप ने कह दिया, 'कोई हर्ज नहीं' ! आपको क्या मालूम, मेरी क्या हालत है !"

"चाहे जैसी भी हालत हो, इतना निश्चित जानिए कि आप अविवेकी नहीं हैं। आप दयालु हैं। आधुनिक हैं। हिम्मती हैं। प्रयोगशील हैं।"

"आधुनिक। हिम्मती। प्रयोगशील। दयालु। इतने सारे विशेषण ! इनका आधार ?"

"आधार—आप का मेरे प्रति व्यवहार।"

"क्यों ? आपके प्रति मैंने ऐसा क्या व्यवहार किया है कि जिससे...।"

"जहाँ तक मेरी सामान्य बुद्धि कहती है..." भीमा ने अपना विश्लेषण सामने "रखा, इतने अल्प परिचय में ही आप मेरी सहायता कर रही है, यह आपकी दयालुता का प्रमाण है। आप आधुनिक हैं, वरना दूसरी मुलाकात में ही जब मैंने बताया था कि किस प्रकार आप मेरे मानस पर छाई रहीं—तो अवश्य आप मान जातीं। आप प्रयोगशील और हिम्मती हैं, वरना अभी मेरे साथ इस रेस्तोराँ में बैठ कर चाय न पी रही होतीं।"

"आप जिन्दगी को बहुत सरल रूप में देखते हैं।" कुन्दन ने जब यह कहा, उसके स्वर में सन्तोष और उल्लास प्रकट होने लगा था, "काश, जिन्दगी सचमुच इतनी सरल हुआ करती !"

"मगर जिन्दगी उतनी क्लिष्ट भी नहीं है, जितनी आप सोच रही हैं।"

"जो भी है...अपने मित्र के रूप में पा कर मुझे अच्छा लग रहा है।"

"मुझे भी।"

जिसके आधार पर जाना जा सके कि किसी को अगर 'हाँ' कही तो क्यों और 'ना' कही तो क्यों ?"

"मुझे विवेक की परिभाषा नहीं मालूम, किन्तु...यदि आप में विवेक नहीं है, तो मैं यही कहूँगा कि विवेक कोई ऐसा गुण नहीं, जिसके लिए लालायित रहा जाए।"

"आप बहुत दयालु हैं। इसीलिए ऐसा कह रहे हैं। आप मुझे चोट नहीं पहुँचाना चाहते।"

"कुन्दन जी...शायद आप बहक रही हैं।"

"यह भी एक प्रमाण है कि सचमुच मैं अविवेकी हूँ।"

"यह कौन-सा गुबार है, कुन्दन जी, जो इस तरह फूट रहा है ?" भीमा ने पूछा और कुन्दन के मन की पर्तें खुल गईं। उसने बोलना शुरू किया, तो बोलती चली गई। सुरेश जी...माँ ने बताया था कि सुरेश जी की उम्र कोई ज्यादा नहीं—लेकिन कुन्दन पहले से माने बैठी थी कि वह लगभग बूढ़े हैं। फिर...सुरेश जी स्वयं आए। मिले। कुन्दन ने देखा, स्वयं अपनी उम्र को ध्यान में रखकर देखा—सुरेश जी वास्तव में इतनी अधिक उम्र के नहीं थे कि...और इसके बावजूद, कुन्दन उन्हें 'हाँ' नहीं कह पा रही थी...क्यों ? कुन्दन नहीं जानती थी। क्यों नहीं जानती थी ? क्योंकि कुन्दन अविवेकी...कुन्दन को पता ही नहीं कि किसी को अगर 'हाँ' कही जाए, तो किस आधार पर...और 'ना' कही जाए, तो किस आधार पर... अपने पूर्वाग्रह के साथ यों चिपकी रहने वाली कुन्दन...!

भीमा ने गम्भीरता से कहा, "सुरेश जी भाग्यशाली होंगे, यदि उन्होंने आपको अपनी जीवनसंगिनी के रूप में पाया...लेकिन...ऐसा न सोचिए कि आप अविवेकी हैं।"

"मुझे बताइए, आखिर क्यों मैं उन्हें 'हाँ' नहीं कह पा रही ?"

"क्या आप 'हाँ' कहना चाहती हैं ?"

"मुझे नहीं मालूम, नहीं मालूम...।"

"यदि 'हाँ' कहना चाहती हैं, तो अवश्य 'हाँ' कह लेंगी।"

"मैं कारण ढूंढ़ रही हूँ। आखिर क्यों उन्हें 'हाँ' कह दूँ ? केवल इतना काफ़ी नहीं कि उनमें कोई दोष मैं नहीं ढूंढ़ पा रही। इस दुनिया में

न जाने कितने व्यक्ति ऐसे निकल आएँगे, जिनमें कोई दोष—सहसा—न ढूंढा जा सके। तो क्या...ऐसे अनेक व्यक्तियों में से किसी को भी चुना जा सकता है?"

"मैं आपके इस सवाल का जवाब नहीं दे सकता। कहने के लिए मेरे पास, बस, यही है कि सुरेश जी को यदि आप 'हाँ' नहीं कह पा रही तो इसका कारण कभी-न-कभी आपको पता चल ही जाएगा।"

"मैं सोच-सोच कर परेशान हो गई हूँ।"

"कोई हर्ज नहीं।"

कुन्दन ने मुस्कराने का प्रयास किया, "कितनी आसानी से आप ने कह दिया, 'कोई हर्ज नहीं'! आपको क्या मालूम, मेरी क्या हालत है!"

"चाहे जैसी भी हालत हो, इतना निश्चित जानिए कि आप अविवेकी नहीं है। आप दयालु है। आधुनिक है। हिम्मती हैं। प्रयोगशील है।"

"आधुनिक। हिम्मती। प्रयोगशील। दयालु। इतने सारे विशेषण! इनका आधार?"

"आधार—आप का मेरे प्रति व्यवहार।"

"क्यों? आपके प्रति मैंने ऐसा क्या व्यवहार किया है कि जिससे..।"

"जहाँ तक मेरी सामान्य बुद्धि कहती है..." भीमा ने अपना विश्लेषण सामने रखा, इतने अल्प परिचय में ही आप मेरी सहायता कर रही है, वह आपकी दयालुता का प्रमाण है। आप आधुनिक हैं, वरना दूसरी मुलाकात में ही जब मैंने बताया था कि किस प्रकार आप मेरे मानस पर छाई रही—तो अवश्य आप मान जाती। आप प्रयोगशील और हिम्मती है, वरना अभी मेरे साथ इस रेस्तोरां में बैठ कर चाय न पी रही होती।"

"आप ज़िन्दगी को बहुत सरल रूप में देखते हैं।" कुन्दन ने जब यह कहा, उसके स्वर में सन्तोष और उल्लास प्रकट होने लगा था, "काश, ज़िन्दगी सचमुच इतनी सरल हुआ करती!"

"मगर ज़िन्दगी उतनी क्लिष्ट भी नहीं है, जितनी आप सोच रही है।"

"जो भी है...अपने मित्र के रूप में पा कर मुझे अच्छा लग रहा है।"

"मुझे भी।"

१७

कुन्दन को विदा कर भीमा जब कमरे में वापस आया, तो चम्पक के साथ देशराज भी मौजूद था।

कुन्दन ज्यों ही सामने से हटी थी, भीमा बौखलाने लगा था। जैसे किसी ने उसे धमकाया हो कि तुम्हारा सबसे बड़ा खजाना लुट जाने वाला है। सुरेश जी...कुन्दन को प्राप्त करने का प्रयास कर रहा धनी-मानी पुरुष... लेकिन भीमा को सुरेश जी से नाराज होने की क्या जरूरत ? सुरेश जी को तो भीमा के अस्तित्व तक का पता नहीं...और फिर, भीमा को अधिकार क्या है कुन्दन के सम्भावित पति के प्रति ऐसा उबाल-सा महसूस करने का ?

भीमा बहुत बुरे मूड में था, जब उसने कमरे में क़दम रखे।

चम्पक ने उससे निगाह न मिलाई। सड़क पर भीमा और कुन्दन की मुलाक़ात हो गई है और दोनों ने साथ-साथ रेस्तोरां में प्रवेश किया है, यह अपनी खिड़की से चम्पक ने देख लिया था। रेड-इंडियनों के नृत्य का प्रस्ताव अब भीमा को ज्ञात है, यह समझ चुका था। अपने-आप के सामने वह कम शर्मिन्दा नहीं था, किन्तु...।

भीमा ने इन्तज़ार किया—कि चम्पक उससे नज़र मिलाए।

मन के किसी कोने में भीमा ने अब भी आशा रखी थी कि नृत्य वाला प्रस्ताव केवल एक 'सटीक उदाहरण' ही था—वास्तव में प्रस्ताव नहीं था यह...किन्तु चम्पक ने जब निगाह न मिलाई, तो भीमा जान गया—प्रस्ताव वास्तव में प्रस्ताव था।

और फिर—कुछ ही देर में स्पष्ट हो गया—यह प्रस्ताव तो आदेश था। एक मैनेजर का आदेश। एक ऐसे व्यक्ति का आदेश, जिससे हज़ारों रुपयों का कर्ज़ भीमा ने लिया हुआ था।

शुरू भीमा ने ही किया "क्यों चम्पक, हो गए कुन्दन जी के दर्शन ?"

"तुम बधाई के पात्र हो, भीमा !" चम्पक ने निगाह तो मिलाई, किन्तु उसने जिस ढँग से जवाब दिया, वह खूँख्वार था।

भीमा गम्भीरता से बोला, "तुम शायद उसे मेरी प्रेमिका मान कर ही चल रहे हो!"

"मैंने कब कहा ऐसा?"

"कई बातें बिना कहे कही जाती हैं।" भीमा बोला।

"ख़ैर, छोड़ो।"

"और यह...रेड-इण्डियनों के नृत्य वाले प्रस्ताव का क्या रहस्य है?" भीमा ने सीधा सवाल किया।

चम्पक ने तुरन्त कोई जवाब नहीं दिया।

भीमा ने पाया—उसकी बात ने देशराज को चौंकाया नहीं था। मानो ...देशराज को भी जानकारी है...चम्पक ने उसे ज़रूर यह भी बता दिया है कि कुन्दन का आगमन हुआ था...इसीलिए तो भीमा के मुँह से कुन्दन का नाम सुनने के बावजूद देशराज पर कोई प्रतिक्रिया न हुई।

भीमा को आघात पहुँचा—देशराज ने उसके साथ छिपाव बरता था, इसका आभास-मात्र भी उसके लिए सहनीय नहीं था।

किन्तु उसका संघर्ष—अभी देशराज के साथ नहीं। अभी तो उसे चम्पक के साथ उलझना है।

"बोलोगे नहीं? क्या रहस्य है इस गन्दे प्रस्ताव का?" भीमा ने अकुला कर पूछा।

"प्रस्ताव गन्दा नहीं है।" चम्पक ने जवाब लौटाया।

"तो?"

"यह मेरी मजबूरी है। तुम्हें प्रस्ताव स्वीकार कर लेना चाहिए।"

भीमा, अपना धीरज सँजोता हुआ, कुर्सी पर बैठा, "ज़रा विस्तार से सुनूँ?"

चम्पक ने अब उसकी ओर घूरकर देखा। प्रस्ताव की गम्भीरता स्पष्ट करते हुए उसने लगातार भीमा की आँखों में आँखें डाले रखीं। भीमा ने भी नज़र न चुराई। दो दुश्मन मर्द, एक-दूसरे पर जैसे घात लगाते हैं, लग-भग वैसी ही घात, भीमा और चम्पक, एक-दूसरे पर लगाए हुए थे।

और चम्पक ने अन्ततः स्पष्ट कर दिया—प्रस्ताव केवल प्रस्ताव नहीं था। वह आदेश था। कर्ज़ देने वाले साहूकार का आदेश।

"मैं नाचूं ? अधनंगा होकर कूल्हे मटकाऊँ ? सवाल ही नहीं ।" भीमा ने कहा, "मेरे भविष्य की कोई और ही दिशा तय हो रही है...।"

"मुझे पाँच हज़ार चाहिए ।"

"नहीं हैं ।"

"तुम्हारे भविष्य की नई दिशाओं में मुझे दिलचस्पी नहीं ।"

"यानी—हमारी दोस्ती टूट रही है ?"

"नहीं । दोस्ती की पहचान हो रही है । कसौटी पर कसी जा रही है ।"

"मैं ऐसी कसौटी पर खरा उतरना नहीं चाहूँगा ।" भीमा ने कहा ।

"तुम्हें खरा उतरना ही होगा ।"

"चम्पक !" भीमा दाँत पीस कर चिल्लाया ।

"मैं ऐन इसी वक़्त तुम्हारी 'हाँ' नहीं सुनना चाहता । अभी तुम गुस्से में हो । शान्त हो लो । फिर बात करेंगे ।" और चम्पक उठ कर कमरे से निकल गया ।

भीमा ने निरीह दृष्टि से देशराज की ओर देखा । एक शिष्य अपने गुरु का सहारा माँग रहा था । देशराज ने ऐसे सिर हिलाया, जैसे कहना चाहता हो—मैं क्या करूँ ? मैं क्या कर सकता हूँ ?

देशराज की खामोशी की भाषा ने भीमा को दहला दिया ।

"लेकिन, देशराज जी...!"

"भीमा !" देशराज उठ कर नजदीक़ आया । भीमा के कन्धे पर हाथ रख कर अहा, "सोचो, उपाय भी क्या है ? दूसरा कौन-सा तरीक़ा ऐसा निकल सकता है कि जिससे...?"

भीमा ने थूक निगला ।

देशराज ने समझाने की मुद्रा में कहा, "क्या तुम सोचते हो, मैं ऐसे प्रस्ताव से सहमत हूँ ? क्या मैंने इसका विरोध न किया होगा । लेकिन चम्पक ने मुझ से पूछा, 'दूसरा उपाय क्या है ?' यही सवाल मैं तुमसे पूछता हूँ । है कोई जवाब ?"

भीमा के पास जवाब—उस वक़्त तो—नहीं ही था ।

देशराज ने क्रमशः स्पष्ट किया कि चम्पक पर चाकू से हमला होना, भीमा को धमकी-भरे फोन मिलना, प्रकाश मेहरा की ओर से नकली दंगलों

में भाग लेने का प्रस्ताव रखा जाना...यह सब एक ही केन्द्र से संचालित हुआ था। इस कुचक्र में ली हू और प्रकाश मेहरा, दोनों, बराबरी से हिस्सा ले रहे थे...।

"सवाल अब केवल पाँच हज़ार के इन्तज़ाम का नहीं है।" देवराज ने कहा, "सवाल अब—जहाँ तक मैं समझ सकता हूँ—ली हू जैसे गुण्डे की इच्छा के सामने झुकने या न झुकने का है। क्या तुम सोचते हो, ली हू पाँच हज़ार के लिए मरा जा रहा है? लेकिन वह तुम्हें—एक प्रसिद्ध पहलवान को—नीचा दिखाने के लिए ज़रूर मरा जा रहा है।"

"मुझे नीचा दिखा कर उसे क्या मिलेगा?"

"दूसरों को दुःखी और अपमानित करने का अपना एक अलग आनन्द होता है। उसकी कोई और व्याख्या नहीं हो सकती।"

"नहीं..." भीमा ने सिर हिलाया, "यदि पाँच हज़ार का इन्तज़ाम हो जाए, तो...मेरा ख़याल है कि ली हू का मुँह बन्द किया जा सकता है। यदि सचमुच कहीं से पाँच हज़ार...?"

"कहाँ से आएँगे? आसमान से तो टपकने से रहे।"

रात-भर भीमा करवटें घिसता रहा।

तरह-तरह के विचार...भाँति-भाँति की कल्पनाएँ...क्या करे? कैसे करे? क्या सचमुच प्रस्ताव स्वीकार कर ले। कुन्दन क्या सोचेगी? जिस भीमा को वह इतनी ऊँची निगाह से देखने लगी है, जिसके प्रति व ऐसी सहजता से स्नेह प्रदर्शित कर रही है, जिसे मित्र के रूप में पाकर वह इतनी प्रसन्न है—उसी भीमा को जब वह मंच पर उतर कर भोंडे ढंग से कमर मटकाते देखेगी, तो क्या सोचेगी?

भीमा कुन्दन को हमेशा के लिए खो देगा।

नहीं...नहीं...ऐसा नहीं होना चाहिए...।

तो क्या करे भीमा? जाए कुन्दन के ही पास और हाथ पसार कर कहे, "लाओ, पाँच हज़ार दो उधार। लौटा दूँगा—जब भी लौटा सकूँगा।"

चम्पक का प्रस्ताव मानने से तो बेहतर होगा—कुन्दन के ही सामने हाथ फैला लिया जाए। हद-से हद क्या होगा? कुन्दन इन्कार कर देगी—यही न? तो ठीक है। उसके बाद कुन्दन के सामने नाक कट ही जाएगी

—फिर कम्पनी का प्रस्ताव स्वीकार किया जा सकता है ।

सुबह की किरणें फूटने से पहले भीमा की आँखें आध-पौन घण्टे के लिए झप सकीं । झपकी आने से पहले, अन्तिम विचार, जो फ़ैसले का स्वरूप पा कर, उसके मस्तिष्क में स्थिर होने लगा था, यही था कि वह कुन्दन से माँग कर देखेगा ।

लेकिन झपकी टूटने के बाद ?

स्वयं अपने सामने भीमा इतना शर्मिन्दा हुआ, जिस का हिसाब नहीं । कुन्दन के साथ गिनती की ही मुलाक़ातें हुई हैं । ठीक है, उतनी कम मुलाक़ातों में उतनी ज्यादा दोस्ती पनप गई है, किन्तु इसका अर्थ यह तो नहीं कि...।

ओह, ऐसा ख़राब विचार भीमा के मन में आया ही कैसे ?

कुन्दन भीमा के लिए जो कर रही है, जितना करना चाहती है—यही बहुत है । ऐसे कैसे किसी के सामने रुपए-पैसों के लिए हाथ फैलाया जा सकता है ?

और फिर...इसका ही क्या सम कि कुन्दन के पास रुपए निकल ही आएँ ? शायद उसने अपनी तनख्वाह में से बचा-बचा कर...लेकिन क्या वह भीमा के लिए बचाती रही होगी ?

भीमा ने अपने सिर को झटका दिया ।

सोचने का यह तरीक़ा ही ग़लत है ?

कुन्दन को बीच में लाने की ज़रूरत ही क्या है ?

क्यों न ऐसा मान लिया जाए कि कुन्दन है ही नहीं । फिर आगे सोचा जाए ।

लेकिन नहीं...ऐसे कैसे माना जा सकता है कि कुन्दन है ही नहीं ? भीमा ने गुस्से में भर कर, जोर से मेज पर हाथ पटका ।

मेज एक दम उछल पड़ी । छोटी-सी मेज थी । चाय-नाश्ते के समय इस्तेमाल होने के लिए, गेस्ट-हाउस की ओर से, हर कमरे में वैसी मेजें रखी गई थीं । मेज उछलते ही उस पर पड़ी तश्तरियाँ, कप-सासर आदि फ़र्श पर आ रहे । ख नणनण...चीनी मिट्टी की नाजुक चीजें...उन्हें टूटते क्या देर ?

भीमा ने स्वयं से कहा, "मनुष्य की इज्जत भी चीनी-मिट्टी की चीजों जैसी है। बड़ी मुश्किल से बनती है। जब तक बनी रहती है, निहायत खूबसूरत लगती है। मगर टूटते क्या देर ?"

तो ?

क्या अब कुन्दन से कभी न मिला जाए ?

कभी न मिलना ही वह उपाय है, जिससे यह माना जा सके कि कुन्दन कोई है ही नहीं।

ठीक है, यही किया जाए। नाता एकदम तोड़ दिया जाय। नाता अभी काफी कच्चा है—बहुत कम समय की पैदाइश। अभी इसे, फिर भी, तोड़ा जा सकता है। बाद में तो...।

लेकिन नाता तोड़ने का सारा मनसूबा एकदम कपूर की तरह उड़ गया—जब लगभग ग्यारह बजे कुन्दन का फोन आया।

"ग़नीमत है, आप गेस्ट-हाउस में ही मिल गए।" कुन्दन ने कहा, "मुझे तो शक था, कहीं बाहर निकल गए होंगे, तो ढूँढूँगी कहाँ ? ऐसा है ...आपका इण्टरव्यू एक-दो दिनों बाद होने वाला था, लेकिन ..अभी मैंने प्रिंसिपल महोदय से बात की, तो बोले कि इण्टरव्यू यदि आज ही हो जाए, तो बेहतर, क्योंकि बाद में कुछ दूसरे काम निकल आए हैं और उन्हें शायद शहर से बाहर भी जाना पड़े।"

"आज ही ? इण्टरव्यू ?" भीमा अचकचाया।

"क्यों ? फ़ैसला जल्दी हो जाएगा। बल्कि ..फ़ैसला, तो यों समझिए, हो चुका है। आपकी इतनी तारीफ मैंने कर रखी है कि इण्टरव्यू को तो केवल खानापूरी जैसा मामला समझिए।" कुन्दन ने उत्साहित स्वर में कहा।

भीमा के मस्तक पर नमी उभरने लगी, "लेकिन..."

"क्यों ? हिचक क्या है ?"

"कुछ नहीं, लेकिन मैं सोच रहा था..."

"कुछ मत सोचिए। सोचने जैसा कुछ है ही नहीं। दे डालिए इण्टरव्यू।" कुन्दन ने तपाक से कहा, "मैं जान गई। आप नरवस हो रहे हैं। सुनिए। नरवस मत होइए। बात आई समझ में ? और हाँ .जब आपका

इण्टरव्यू लिया जाएगा, तब मैं भी मौजूद रहूँगी। बोलिए, अब तो मन पक्का हुआ न ? मेरी मौजूदगी में आप बिलकुल नरवस नहीं होंगे।"

"ओह, कुन्दन जी...!"

"मेरे नाम के आगे 'जी' मत लगाया करिए। आप मुझसे बड़े हैं। हर तरह से।"

"ज़बान पर 'जी' ऐसा चढ़ गया है कि...ख़ैर...कोशिश करूँगा... इण्टरव्यू के लिए कब कहाँ पहुँचना होगा ?"

कुन्दन ने पता नोट कराया। समय बताया—शाम के पाँच बजे।

१८

बारह बज चुके थे। इण्टरव्यू की उत्तेजना के कारण, दोपहर का भोजन, ज़रा-सा ही लिया था भीमा ने।

"चम्पक...!" वह बोला था, "तुम्हारे प्रस्ताव के लिए मैं इन्कार तो नहीं कर रहा, किन्तु अभी 'हाँ' कहने की स्थित में भी नहीं हूँ। पहले यह इण्टरव्यू हो जाए।"

चम्पक उत्साहित नहीं था, "यह नौकरी यदि मिल गई, तब भी... पाँच हज़ार का इन्तज़ाम—एकमुश्त—कैसे...?"

"उस पर फिर सोचेंगे। एक-साथ सभी दिशाओं में कैसे सोचा जाए ?"

एक बजा। दो बजने को आए।

चम्पक के दिमाग़ में कोई और खिचड़ी पक रही थी

ढाई बजते-बजते भीमा की हालत ख़स्ता होने लगी। इण्टरव्यू के लिए आत्म-विश्वास वह सँजो ही नहीं पा रहा था।

चम्पक बोला, "थोड़ी-सी पी लो।"

"उससे क्या होगा ?" भीमा ने पूछा।

दंगलों के सिलसिले में जब उन्होंने ठण्डे मुल्कों के दौरे किए थे, तब वहाँ भीमा थोड़ी-बहुत पीना सीख गया था। उन मुल्कों की ठण्ड का मुक़ा-बला इसके बिना भला कैसे किया जाता ? किन्तु भीमा को शराब की लत

कभी नहीं पड़ी। शराब को उसने जब भी ग्रहण किया, दवा की तरह ही किया।

"पीने से आत्म-विश्वास बढ़ता है।' चम्पक ने उत्तर दिया।

"लेकिन मुझे इण्टरव्यू देने जाना है।"

"इसीलिए तो कह रहा हूँ कि थोड़ी-सी पी लो।" चम्पक ने उकसाया, "तुम घबरा रहे हो। पीने से यह नरवसनेस दूर हो जाएगी।"

"लेकिन यदि उन्हें आभास मिल गया कि मैं पी कर आया हूँ, तो... सोचो, क्या इम्प्रेशन पड़ेगा। मुझे उस स्कूल में व्यायाम-शिक्षक बनना है। स्कूल का कोई भी कर्मचारी यदि शराब पीता हो, तो...बच्चों पर क्या असर पड़ेगा।"

चम्पक खिलखिला उठा, "कमाल करते हो, यार, तुम भी!"

"क्यों?"

"मैंने कब कहा कि तुम इतनी पी डालो कि उन्हें पता चल जाए।"

"शराब की गन्ध इतनी तेज़ होती है। थोड़ी-सी पीने के बावजूद...।"

"तुम तो सोचते हो, इन्टरव्यू लेते समय वे तुम्हारे मुंह-में-मुंह डाल देंगे।" चम्पक ने यह कहते हुए, जेब से, शराब की बोतल निकाली और मेज़ पर रख दी, "देखो, यह गोआ की खास शराब है—'फैनी'। तुमने कभी नहीं चखी। चखोगे तो होंठ चाटोगे। इसमें एक और खूबी है। इस की गन्ध तेज़ नहीं है। यदि किसी को पता चल भी जाए, तो एकाएक ऐसा नहीं लगेगा कि शराब की गन्ध है।"

"नहीं, चम्पक, मैं ख़तरा मोल ले नहीं सकता।"

"लेकिन पी कर नहीं जाओगे, तब तो और ज़्यादा ख़तरा है। तुम इतने ज़्यादा नरवस हो कि तुम्हारे चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही हैं।" चम्पक बोला, "क्या तुम सोचते हो, मैं तुम्हारा बुरा चाहने वालों में से हूँ? भले के लिए ही कह रहा हूँ—थोड़ी-सी पी कर जाओ।"

"लेकिन...?"

"प्रिंसिपल की मेज़ के सामने रखी किसी कुर्सी में ही बैठोगे न जा कर? क्या सोचते हो, मेज़ की पूरी चौड़ाई पार करके तुम्हारे मुंह की गन्ध प्रिंसिपल तक पहुँच जाएगी? सवाल ही नहीं। 'फैनी' की गन्ध तो

पहुँच ही नहीं सकती।"

भीमा ने खुली हुई बोतल को सूँघ कर देखा, "यार, इसकी गन्ध कोई कम तेज़ तो नहीं है।"

"तुम 'फैनी' के गुणों से परिचित नहीं हो, इसीलिए ऐसा लगता है। पीने के बाद यह शराब बहुत ही आनन्ददायक, हल्का-हल्का नशा देती है; जिससे आत्म-विश्वास बढ़ता है। गन्ध लगभग नहीं आती। पियो भी यार, तुम भी क्या लड़कियों की तरह डर रहे हो?"

भीमा झाँसे में आ गया।

'फैनी' के 'गुणों' से वह परिचित नहीं था। पीते समय उसे सचमुच ऐसा लगा, जैसे उसका आत्म-विश्वास दृढ़ होता जा रहा है। बातों में उलझाकर चम्पक ने उसे कितनी पिला दी, वह सहसा न भाँप सका।

'फैनी' तो तीर की तरह दिमाग़ पर चढ़ती है।

चम्पक ने घड़ी की तरफ़ देखा, "अरे, खासा वक्त हो गया। समय पर पहुँचने के लिए तुम्हें टैक्सी करनी होगी। आओ, मैं पहुँचा देता हूँ। यह लो इलायची। प्रिंसिपल के कमरे में घुसने के पहले मुंह में इलायची रख लोगे, तो असलियत भाँप ली जाए, इसका खतरा बिलकुल नहीं रहेगा।"

•

व्यायाम-शिक्षक का काम भीमा को न मिल सका। चम्पक की मुराद पूरी हुई। बात केवल इतनी नहीं थी कि काम न मिला। उससे भी बुरा—भीमा को प्रिंसिपल के सामने अपमानित होना पड़ा।

केवल भीमा को नहीं—कुन्दन को भी अपमानित होना पड़ा।

प्रिंसिपल के कमरे की चिक उठाकर भीमा ने जब प्रवेश किया, तो पहली नज़र उसकी कुन्दन पर ही पड़ी, जो प्रिंसिपल की बग़ल वाली कुर्सी में बैठी उसी की प्रतीक्षा कर रही थी। भीमा के प्रवेश के साथ कुन्दन और प्रिंसिपल, दोनों के होंठों पर मुस्कान उभर आई।

प्रिंसिपल ने कहा, "आइए, भीमसेन जी, बैठिए।"

कुन्दन मन्द-मन्द मुस्कराए जा रही थी।

और भीमा के दिमाग़ पर नशे की धुन्ध सवार हो रही थी।

प्रिंसिपल ने बैठने के लिए जिस कुर्सी की ओर इशारा किया था, उस

कुर्सी में भीमा बैठ ही न सका। 'फेनी' का नशा दिमाग में अचानक ऐसा कुलबुलाया कि भीमा के पाँव लड़खड़ा गए। कुर्सी तक पहुँचने से पहले ही वह एक स्टूल में बैठ गया—स्टूल बिलकुल नज़दीक ही था।

प्रिंसिपल और कुन्दन उसकी तरफ़ आश्चर्य से देखने लगे। भीमा ने आखिर क्यों कुर्सी की बजाए स्टूल पर बैठ जाना पसन्द किया? कारण वे समझ सकें, इससे पहले भीमा का चेहरा सफ़ेद पड़ना शुरू हो चुका था। गोल-गोल घूमता कमरा...लुज होते जा रहे हाथ-पैर...।

भीमा ने उठने का प्रयास किया, "क्षमा कीजिएगा..." वह बुदबुदाया। उसने उठकर कुर्सी की ओर बढ़ना शुरू किया। कुर्सी की पीठ का सहारा लेने के लिए उसने हाथ बढ़ाया। नशे और आशंका ने मिलकर भीमा पर ऐसा असर डाला कि उसका बढ़ा हुआ हाथ बुरी तरह काँप गया।

उसने कुर्सी अपनी ओर खींची।

उसे यही लगा कि कुर्सी के पास पहुँचना कठिन है, किन्तु कुर्सी को अपनी ओर खींच लेना आसान रहेगा।

कुर्सी न जाने किस तरह खींची गई कि वह एकदम ही उलट गई। कुर्सी के साथ ही भीमा भी गिरा। क्षण-मात्र में कुछ-का-कुछ हो गया। कितनी बड़ी भूल हो गई है, इसके दारुण अहसास ने भीमा का मस्तिष्क जैसे चीर कर रख दिया।

उसने हड़बड़ाकर उठना चाहा, लेकिन उठने के प्रयास में वह दूसरी बार गिरा।

"क्षमा कीजिएगा...," उसने चीत्कार-सा किया, "मैं नालायक़ हूँ। मैंने पी रखी है।"

किसी चोर के सामने जब रंगे-हाथों पकड़े जाने का खतरा पैदा हो, तो घबराकर वह पकड़े जाने से पहले ही, स्वयं ही चिल्लाना शुरू कर दे, "मैं चोर! मैं चोर!"—कुछ-कुछ ऐसा ही भीमा ने किया।

एक ज़बर्दस्त प्रयास के साथ वह उठ खड़ा हुआ। वह झूम रहा था। किसी चीज़ पर उसकी आँखों का फोकस नहीं मिल रहा था। उसे नहीं मालूम था—वह प्रिंसिपल की ओर देख रहा है या कुन्दन की ओर।

—और वह कह रहा था, "आपने एक नालायक़ आदमी को बुलाया।

आपकी उदारता अद्भुत है...हिक्...लेकिन माफ़ कीजिए...इ-इ-इंटरव्यू देने मैं नहीं आया हूँ। मैं तो...हिक्...माफ़ी माँगने आया हूँ। माफ़ कर सकें, तो कर दीजिएगा...।"

प्रिंसिपल श्री के० के० महाजन, कुन्दन पर, एकदम ही बरस पड़े, "कुन्दन जी, यह कैसा आदमी आपने चुना ? आपसे ऐसी आशा न थी।"

कुन्दन को काटो तो खून नहीं।

कुन्दन की आँखों में आँसू आने लगे थे। किसके लिए थे वे आँसू ? स्वयं अपने लिए ? या भीमा के लिए ? भीमा के दुर्भाग्य के लिए ?

उसे लगा, भीमा शायद दूसरी बार लड़खड़ाकर गिरने वाला है। आगे बढ़कर भीमा को संभाले या न संभाले, वह न समझ पाई।

भीमा अचानक ही पलट गया। चिक उठाकर वह प्रिंसिपल के कमरे से निकल गया। वह दौड़ रहा था। चिक के आर-पार कुन्दन ने देखा—बेतहाशा भागा जा रहा था वह। स्कूल का अहाता पार करने से पहले वह एक बार फिर गिरा—बहुत ज़ोर से। बिलकुल किसी खिलौने की तरह कलाबाज़ी खा गया वह। उठा। भागा। धूल झाड़ने तक का होश नहीं था उसे...।

कुन्दन ने दोनों हथेलियों से अपना चेहरा ढाँक लिया।

"वह शराबी है।" प्रिंसिपल के शब्द, गर्म सीसे की तरह, कुन्दन के कानों में प्रवेश कर रहे थे, "आपने एक शराबी की सिफ़ारिश की...हद है !...भविष्य में कभी आप पर भरोसा नहीं करूँगा। आप जा सकती हैं, कुन्दन जी। यहाँ तक आने का कष्ट आपने किया। धन्यवाद...?"

कुन्दन, थरथराती हुई, प्रिंसिपल के कमरे से निकल गई।

बिना कुछ भी बोले...।

बोलने के लिए रहा ही क्या था ? प्रिंसिपल के पूरे कमरे में शराब की गन्ध उबल-सी गई थी। कमरे से निकलने के बाद भी वह गन्ध मानो कुन्दन का पीछा नहीं छोड़ रही थी। भीमा ने क्यों किया ऐसा ?

कुन्दन ने लंबे डग भरते हुए स्कूल का अहाता पार किया। कहाँ है भीमा ? उसने खोजपूर्ण दृष्टि चारों ओर दौड़ाई। भीमा कहीं नज़र न आया।

नज़र आ जाता, तो कुन्दन क्या करती ?

कुन्दन ने पर्स खोला। रूमाल निकाला। आँसू पोंछे। स्वयं वह समझ नहीं पा रही थी, भीमा यदि दिखाई पड़ जाता, तो क्या करती वह... भीमा ने चीख-चीखकर जो कहा, सच ही कहा। नालायक ! स्वयं के लिए बार-बार उसने नालायक शब्द इस्तेमाल किया। झूठ नहीं बोला वह।

ऐसे अवसर पर भी झूठ नहीं बोल सका वह।

वह एक सच्चा इंसान है।

लेकिन बचकाना...!

कैसी बचकानी भूल ! इंटरव्यू देने से पहले क्या कोई इतनी अधिक पी लेता है कि...कुन्दन ने उसे पहचानने में कितनी बड़ी ग़लती की.. ठीक है, भीमा की सचाई से इंकार नहीं—ऐसे अवसर पर भी वह सच बोला—उसने माफी माँगी—लेकिन एक नालायक को ज़बरन लायक सिद्ध करने की कोशिश किसने की ? कुन्दन ने ही न ? ऐसी ऊटपटांग कोशिश करने वाली कुन्दन को क्या कहा जाए ?

भीमा और कुन्दन की मुलाक़ातें, इससे पहले, जिस तरह होती थीं—उसी तरह क्या अब कभी भी हो सकेंगी ?

कुन्दन एक आत्मघाती पश्चाताप से भर उठी। ऐसे बचकाने व्यक्ति के सामने कुन्दन ने अपने मन की पर्तें खोली थीं...छी !

फिर से उसकी आँखें छलछलाने लगीं।

क्रोध और पश्चाताप के बावजूद एक आशंका-सी उसके मन को बींधती जा रही थी। नशे में झूमता भीमा यदि किसी दौड़ते वाहन से टकरा गया, तो ?

'ऊँह, बला से !' छलकते आ रहे आँसुओं को पोंछते हुए कुन्दन ने सोचा, 'रोज़ न जाने कितने लोग दुर्घटनाओं के शिकार होते हैं। मर जाए भीमा, बला से ! मुझे क्या ?'

किन्तु आधे घंटे के भीतर ही कुन्दन ने पाया, वह गेस्ट-हाउस में प्रवेश कर रही है, जिसमें भीमा रहता था।

आज किसी से पूछने की ज़रूरत नहीं थी कि भीमसेन जी का कमरा कहाँ है। पिछली बार जब आई थी, नौकर ने साथ चलकर दिखाया ही

था। यंत्र की तरह चलती हुई कुन्दन उस कमरे तक पहुँच गई। दरवाज़ा बन्द था। उसने खटखटाया। धीमे से...।

भीतर से कोई जवाब नहीं।

कुन्दन ने ठेलकर देखा। दरवाज़ा केवल उढ़काया हुआ था। खुलने लगा।

कुन्दन ने प्रवेश किया।

कमरे में यदि भीमा न हुआ, तो ? यदि चम्पक से मुलाक़ात हुई, तो ?

चम्पक का चेहरा नोच लेगी कुन्दन। वह समझ चुकी थी—भीमा को इस सीमा तक पिला देना, यह सिर्फ़ चम्पक की हरकत ही हो सकती थी। भीमा की नालायक़ी केवल इतनी रही कि वह चम्पक के झाँसे में आ गया... मूल दोष चम्पक का है।

लेकिन क्या सचमुच चम्पक का चेहरा नोच सकेगी कुन्दन ? उस सीमा तक 'जंगली' हो सकेगी ? कुन्दन के पास जवाब नहीं था। जो होगा, जैसा होगा—देखा जाएगा। खेल तो बिगड़ ही चुका। अब थोड़ा और बिगड़ जाए, कोई हर्ज नहीं।

उसे राहत मिली, जब उसने पाया—कमरे में चम्पक नहीं था।

भीमा था।

बिस्तर पर औंधे मुँह गिरकर, लाश की तरह स्थिर पड़ा था वह।

नहीं, नहीं, लाश की तरह नहीं...कुन्दन को क्या हो गया है ? क्यों 'लाश' जैसा शब्द उसके दिमाग़ में आया ?

निश्चय ही यह उस सारी बौखलाहट का परिणाम है, जो कुन्दन ने अचानक झेली। 'लाश' जैसा शब्द—भीमा के लिए ? ओह, नहीं...ऐस शब्द सोचने के लिए कुन्दन अपने-आप पर हज़ार लानतें भेजने लगी।

प्रवेश करते समय उसने दरवाज़ा खुला छोड़ दिया था। मन हुआ बन्द कर दें। नहीं-नहीं...

उसने हौले से पुकारा, "भीमा जी...!"

भीमा ऐसे उछल गया, जैसे आसमान से कोई साँप गिरा हो उस पर घोर अविश्वास से वह कुन्दन की तरफ़ देखने लगा। उसका दयनीय चेह

कुन्दन से देखा न गया, किन्तु निगाह चुराने का क्या अर्थ ? ज़िन्दगी की वास्तविकताओं से आखिर तक कब निगाहें चुराई जा सकती हैं ?

कुन्दन के होंठ कांप गए, "अचानक यह क्या हुआ, भीमा जी ?"

शराब का नशा, भीमा की आँखों में, अब भी जोश लपलपा रहा था। भीमा उठकर खड़ा हो गया—जैसे कोई गिरी हुई इमारत अचानक उठकर तन जाए।

"कुन्दन जी !" उसने दृढ़ता से कहा, "यहाँ से चली जाइए।"

"मैं आपके पीछे-पीछे आई थी, लेकिन आप इतनी तेज़ी से भागे कि..." कुन्दन आगे बढ़ी।

भीमा पीछे हटा, "मैं कहता हूँ, कुन्दन जी, चली जाइए यहाँ से, वरना..."

"वरना क्या होगा ? जो होना था, हो चुका।" कुन्दन ने कहा। वह ज़रा और पास आ गई। फिर थमी।

"कुछ नहीं हुआ है। अभी तो कुछ भी नहीं हुआ है। चली जाइए।"

"क्यों ? अब क्या होना शेष है ?"

"मैं बता नहीं सकता। आप जाइए। जाती हैं या नहीं ?"

"नहीं।"

"तो मैं...तो मैं..."

"तो आप क्या करेंगे ?" कुन्दन ने गंभीरता से पूछा।

"नहीं मालूम, मुझे नहीं मालूम—लेकिन मैं कुछ ज़रूर करूँगा, कर बैठूँगा। चली जाइए, कुन्दन जी !"

"जाने के लिए नहीं आई हूँ। आने के लिए आई हूँ।"

"आने के लिए आई हैं, या जवाब माँगने ?"

"जवाब मुझे मालूम है।"

"नहीं मालूम। आपको कुछ नहीं मालूम। जवाब अभी मैंने दिया ही नहीं।"

"मैंने माँगा कब ?"

"लेकिन मैं जवाब अवश्य दूँगा। जानती हैं—मेरा जवाब क्या होगा ?"

कुन्दन चुपचाप उसकी तरफ़ देखती रही।

"मेरा जवाब होगा—मैंने अपनी औक़ात पहचान ली है। जान गया हूँ कि क्या हूँ और क्या हो सकता हूँ।"

"भीमा जी...!"

"चम्पक अभी-अभी इस कमरे से गया है। अपना जवाब मैंने उसे दे दिया है।" भीमा ने स्वर चबाते हुए कहा, "चम्पक के कल्याण के लिए मैं रेड-इंडियन की पोशाक पहनकर भोंड़ा नृत्य करने को तैयार हूँ।"

"नहीं...," कुन्दन का चेहरा फक पड़ गया।

"यही है मेरा जवाब।"

"नहीं, भीमा जी, नहीं..."

"क्यों न नाचूँ ? मेरा क्या बिगड़ेगा ? अधनंगा होकर जनता के सामने उतरना, यह तो मेरे पेशे में शुरू से रहा है। पहले दंगलों में उतरता था, अब मंच पर उतरूँगा, थोड़ा-सा मटक लूँगा। बिगड़ क्या जाएगा ?"

"यह जवाब आपका नहीं, आपकी निराशा का है।"

"निराशा !" भीमा हँसा, "कैसी निराशा ? निराश होना भी सब के बूते में नहीं हुआ करता। निराश होने के लिए भी एक मानसिक धरातल चाहिए। मुझ में कोई ऐसी योग्यता नहीं। पत्थर न निराश होते हैं, न उत्साहित। पत्थर कुछ नहीं होते। पत्थर केवल पत्थर होते हैं।"

"पत्थर ही जब तराशे जाते है, तो देवताओं की मूर्तियाँ तैयार होती हैं।"

सुनते ही भीमा एकदम चिढ़ गया, "आपने मुझे तराशने की कोशिश की। क्या मिला आपको ? देवता ? या बबुआ ? बदसूरत, बुद्धिहीन बबुआ ?"

"तराशने का मौक़ा ही कहाँ मिला मुझे।"

"छोड़िए।"

"भीमा जी...!"

"मुझे अकेला छोड़ दीजिए। मैं आपका दोस्त बनने के भी लायक़ नहीं। मैं किसी का कुछ बनने के लायक़ नहीं। जो मैं बन सकता हूँ, उसकी हामी मैंने भर दी है—भोंड़ा नाच दिखाकर लोगों को हँसाने वाला

विदूषक !"

"आप बेहद दु:खी हैं। इसीलिए ऐसा कह रहे हैं।"

"कौन कहता है, मैं दु:खी हूँ ? मैं तो बहुत ही खुश हूँ। इतना खुश मैं जीवन में पहले कभी नहीं हुआ। मैंने आत्म-दर्शन कर लिया है। अपने-आप को पहचान लेना—इससे बड़ा खुशी की बात भला क्या हो सकती है ?"

"याद है, भीमा जी, एक दिन आपने मुझ से कहा था कि मैं आपका नया नाम सोच रखूं ?"

"नहीं, मुझे कुछ याद नहीं।"

"आपके लिए एक अच्छा-सा नाम मेरे मन में है।"

"उसे अपने पास ही रखिए। प्लीज.. जाइए। मैं कहता हूँ, चली जाइए।"

"ठीक है। जाती हूँ। अभी आप आपे में नहीं हैं। फिलहाल यही कह सकती हूँ—मैं हमेशा आपकी सहायता के लिए तैयार रहूँगी।"

"—बशर्ते मैं आऊँ और सहायता माँगूं।" भीमा व्यंग्य से मुस्कराया, "क्या आप सोचती हैं, आइंदा कभी भी मैं आपके पास स्वयं आ सकूँगा ? हमारा रिश्ता अभी बहुत कच्चा है। हम बहुत सही वक्त पर टूट रहे हैं। टूटना अभी संभव है और कम दुखदायी है, इस टूटने की याद ज्यादा दिनों तक दिमाग पर छाने वाली नहीं। मुझे मेरे भाग्य पर छोड़िए। जाइए। सोच लीजिए, हम कभी मिले ही नहीं थे।"

"यदि आप इसी में प्रसन्न है, तो...ठीक है...सोच लेने का प्रयास करूँगी कि हम कभी मिले ही नहीं थे...।" और कुन्दन गहरी उदासी के साथ, हौले-हौले, बाहर निकल आई।

१९

"नमस्कार !" सुनते ही कुन्दन ने अपनी फाइलों पर से निगाह उठाकर देखा। सामने चम्पक खड़ा था। चम-चम मुस्कराता हुआ। जीत जानेवाले खलनायकों जैसी मुद्रा में।

"कहिए ?" कुन्दन का तमाम व्यक्तित्व काठ जैसा हो आया।

"बैठ सकता हूँ ?" चम्पक ने ढिठाई से पूछा।

"कहिए, क्या काम है ? यह दफ़्तर है।"

"हाँ, हाँ, मुझे मालूम है कि यह दफ़्तर है—और मैं यह भी जानता हूँ कि इसी दफ़्तर से एक ऐसी कहानी शुरू हुई थी, जिसकी नायिका का रोल आपको नहीं मिल सका।"

"देखिए, मिस्टर...!"

"घबराइए नहीं, मैं गड़े मुरदे उखाड़ने नहीं आया हूँ। मैं तो आया हूँ...आपको आमन्त्रित करने।" और उसने एक लिफ़ाफ़ा उसकी मेज़ पर उछाल दिया, "इस कार्यक्रम में केवल आमन्त्रित लोग ही आ सकेंगे। मैंने सोचा, आप क्यों वंचित रह जाएँ। न, न, यह न सोचिएगा कि आमन्त्रण भीमा ने भिजवाया है। सवाल ही नहीं। आपका नाम भी उसकी जबान पर नहीं आता...आपको बिलकुल भुला दिया है उसने...किन्तु मैं नहीं भूल पाया। सोचा, आमन्त्रित होने का पूरा अधिकार आपको है। क्यों न इस अधिकार की रक्षा...?"

"अगर आपने ज़रा भी ग़लत ढंग से बात की, तो याद रखिए...।"

"आप इस आमन्त्रण को हमेशा याद रखेंगी। हो सके, तो आइएगा। बल्कि...कहना चाहिए कि—हिम्मत हो सके; तो आइएगा। आपका स्वागत कर मुझे अवश्य खुशी होगी।"

और चम्पक पलटकर दरवाजे से बाहर निकल गया।

कुन्दन की निगाह उस लिफ़ाफ़े पर स्थिर हो गई, जो उसे चिढ़ाता हुआ मेज़ पर पड़ा था। कुन्दन को बताने की जरूरत नहीं थी कि वह आमन्त्रण किस कार्यक्रम का था। लिफ़ाफ़े में से सहसा एक मूर्ति प्रकट होने लगी...कुन्दन ने कहा था, पत्थरों को तराशने से देवताओं की मूर्तियाँ तैयार होती हैं...लेकिन वह मूर्ति किसी देवता की नहीं थी...वह एक मनुष्य की मूर्ति थी। रेड-इंडियन की पोशाक पहन कर वह अधनंगी मूर्ति मटक-मटक कर नाच रही थी...चेहरे पर अजीबो-गरीब रंगों की धारियाँ। सिर पर विकि पंखों की कलंगी। अजब-सी ढाल। अजब-सी तलवार। संगीत...ही-ही...यू-हू...हिकु-हिकु...!

कुन्दन ने आँखें बन्द कर लीं।

आँखें खोल कर उसने उस लिफ़ाफ़े को जब फिर से देखा, वह मानव-मूर्ति ग़ायब हो चुकी थी। काँपती उँगलियों से उसने लिफ़ाफ़ा उठाया। खोला। अत्यन्त ख़र्चीले ढंग से छापा गया आमन्त्रण-पत्र...उस पूँजीपति का नाम, जिसके स्वस्थ हो जाने की ख़ुशी में यह कार्यक्रम आयोजित हो रहा था। भाग लेने वाले कलाकार—अनेक फ़िल्मी हस्तियाँ। अनेक ग़ैर-फ़िल्मी किन्तु सुप्रसिद्ध हस्तियाँ भी...सबको ऐसे-ऐसे रूपों में प्रस्तुत करने का आश्वासन, जिनकी कल्पना भी पहले से न की जा सके...इन अनेक नामों के बीच फँसा हुआ यह नाम भी भीमा! दगतों का राजा...!

कुन्दन का दिल धक-धक करने लगा।

एक ऐसा विचार उसके दिमाग़ में आया था, जिसके आने की पूर्व-सूचना उसके अज्ञात मन को न जाने कब से मिली हुई थी। प्रकट मन में वह विचार पहली बार प्रवेश कर रहा था...

और कुन्दन जानती थी—उसे इस विचार के सामने हारना नहीं है।

विचार—कि...

सारी उलझन पाँच हज़ार रुपयों की है न? कुन्दन ने रुपये जोड़ रखे हैं। सातेक हज़ार होंगे। जाए और चम्पक के मुँह पर नोटों की गड्डियाँ फेंक कर मारे। कहे "ले, कमीने, उठा—और छोड़ भीमा का पिंड!"

लेकिन नहीं ..।

ऐसा करना घोर भावुकता होगी। आज के आर्थिक युग में, पाँच हज़ार की रकम, कुन्दन जैसी स्थिति युवती के लिए, कोई छोटी तो नहीं। भीमा के साथ कुल कितनी मुलाक़ातें हुई हैं? सिर्फ़ इतनी कि उँगलियों पर गिनी जा सकें।

कुन्दन अपनी बचत के रुपयों से हाथ धो बैठेगी।

मिलेगा क्या?

जो वह चाहती है, वह क्या मिल सकेगा?

क्या चाहती है वह? सिर्फ़ इतना कि भीमा रेड-इंडियनों का नृत्य करने से बच जाए? क्या इतनी-सी बात के लिए कुन्दन अपनी बचत न्यौछावर कर दे? माँ को जब इसका पता चलेगा, क्या गुज़रेगी उस

पर ? भावुकता का आज की दुनिया में कोई मोल नहीं—यह उपदेश स्वयं कुन्दन ने भीमा को कितनी वार पिलाया है ? क्या उसी भावुकता के शिकंजे में कुन्दन फँस जाए ? सवाल ही नहीं...।

कुन्दन को इस कार्यक्रम में नहीं जाना चाहिए। चम्पक आमन्त्रित करने नहीं, व्यंग्य करने आया था उस पर—

और यदि आमन्त्रित ही करने आया हो, तब भी—अर्थ क्या है वहाँ जाने का ? भीमा ने कभी न सोचा होगा, कुन्दन आएगी। नाचते-नाचते, दर्शकों के वीच वैठी कुन्दन पर नमक नहीं पड़ जाएगा ?

न।

कुन्दन नहीं जाएगी।

आमन्त्रण-पत्र फाड़ कर रद्दी की टोकरी में डाल देना चाहिए।

आमन्त्रण-पत्र उसने अपने पर्स में रख लिया। क्यों फाड़ न सकी वह ? कुन्दन न जान सकी...न समझ सकी...भीमा नाचेगा...यदि कुन्दन पाँ हज़ार न्यौछावर करे, तो भीमा के इस पतन को रोका जा सके...लेकि नहीं, कुन्दन यों भावुकता के शिकंजे में फँसने वाली नहीं...जो होने रहा है, वह होकर रहेगा...लेकिन उस 'होने' को देखना क्यों चाह कुन्दन ? देखे विना कुन्दन का काम नहीं चलेगा, ऐसा तो नहीं... आमन्त्रण-पत्र क्यों उसने सँजो कर रख लिया ?

कुन्दन अपने-आप पर झुंझला गई।

कुन्दन अविवेकी ! भीमा नालायक़ और कुन्दन अविवेकी। को मालूम ही नहीं कि किसी को 'हाँ' कहे तो किस आधार पर अ कहे तो किस आधार पर। कुन्दन इतना भी तय नहीं कर सकती कार्यक्रम में यदि वह जाए, तो किस आधार पर—न जाए आधार पर...आँखें होते हुए भी अंधी कुन्दन...ऐसी कुन्दन यदि न कहलाए, क्या कहलाए ?

'फाड़ दे, कुन्दन !' उसका मन उसे ललकार रहा था, 'फ न्त्रण-पत्र !'

लेकिन घर जाने के लिए जव वह वस में वैठी, पर्स में व पूर्णतया सुरक्षित था...।

रात भर सो नहीं सकी वह। आज वह तय कर लेना चाहती थी—भीमा के साथ उसका आखिर क्या रिश्ता है? आखिर क्या नाम है इस रिश्ते का? क्या केवल दोस्ती? लेकिन क्या दोस्ती में—केवल दोस्ती में—इतनी कशिश होती है कि...?

और यदि केवल दोस्ती नहीं, तो?

अजब था वह रिश्ता। तोड़-फोड़ कर भी टूटने में नहीं आ रहा था। उस रिश्ते को कोई नाम नहीं दे पा रही थी वह—कोई संज्ञा नहीं ढूंढ पा रही थी उसके लिए...।

एक वीभत्स फैसला उसके मन में जड़ें जमाने लगा था।

कुछ घंटों पहले सोचा था—कार्यक्रम देखने नहीं जाएगी। अब सोच रही थी—जरूर जाएगी। कुन्दन की कायरता उसके सामने नंगी होकर नाच रही थी। पांच हजार न्योछावर करने की हिम्मत कुन्दन में नहीं। व्यावहारिकता और दुनियादारी के नाम पर वह उन रुपयों पर सर्प की भांति कुंडली मार कर बैठी रहना चाहती है। दूसरी ओर, इतना आत्म-विश्वास भी कुन्दन में नहीं कि कार्यक्रम में कतई न जाने का फैसला कर डाले। अपने रुपयों की रक्षा करके वह एक वीभत्स स्थिति पैदा कर रही है—और उस वीभत्सता के आमने-सामने भी होना चाहती है। क्या आमने-सामने होने की यह इच्छा—यह फैसला—स्वयं भी वीभत्स नहीं?

लेकिन उस वीभत्स फैसले को पलटने की शक्ति उसमें नहीं थी।

वह गई।

गई उस कार्यक्रम में।

पूरी तरह सज-धज कर गई।

अपने शृंगार से कुन्दन उस तमाम वीभत्सता को और भी पैना कर लेना चाहती थी। अपने आप को सजा दे रही थी वह। यही थी न उसकी मुद्रा? आत्म-पीड़न की मुद्रा? अपने अविवेक का प्रायश्चित्त वह इसी तरह करना चाहती थी। अविवेक नहीं तो क्या? पांच हजार की रकम पर इतना मोह? क्या इस रकम को वह साथ लेकर जाएगी? दूसरे लोक में? उसी रकम की रक्षा के लिए वह एक निर्दोष व्यक्ति की हत्या कर रही

थी...कैसा डरावना अविवेक ! सही समय पर सही निर्णय कभी न ले पाने की कैसी घिनौनी, ज़हरीली मजबूरी ! जहर से ज़हर नहीं कटता क्या ? जो ज़हर उसने पैदा किया था, उसी के आमने-सामने होकर वह उसी को काट देना चाहती थी।

चम्पक चकित रह गया।

कुन्दन के चमचमाते सौन्दर्य से नहीं, कुन्दन के आगमन से।

सचमुच चम्पक आमन्त्रित करने आया था उस दिन। व्यंग्य करने ही आया था इसीलिए, सोचा नहीं था उसने—कि कुन्दन आमन्त्रण स्वीकार करेगी।

किन्तु कुन्दन न केवल आई थी, अपने पूरे बनाव-शृंगार में आई थी।

क्षण-भर को चम्पक का चेहरा आश्चर्य, अविश्वास से फक-सा पड़ गया। अगले ही क्षण उसने स्वयं को सम्भाला और भाव-भीना स्वागत किया। "इधर आइए, कुन्दन जी, इस तरफ़...," उसने अगली पंक्तियों की ओर कुन्दन को ले जाते हुए कहा।

ठीक है...कुन्दन को अगली पंक्तियों में ही बैठना चाहिए, ताकि भीमा की नज़र यदि न पड़ रही हो, तब भी पड़ जाए। कैसी गुज़रेगी भीमा पर ? ऊंह, इस तरह भी क्या सोचना ! भीमा उसका लगता ही क्या है ? वे दोनों, एक-दूसरे के कुछ भी नहीं लगते। कितने-कितने दर्शक आए हुए हैं; आ रहे हैं ! कुन्दन भी उन्हीं में से एक है। भीमा तो कुन्दन के प्रति तटस्थ हो जाना चाहता है न ? कुन्दन को देख कर भी नहीं देखेगा वह...इन अनेकानेक दर्शकों को वह केवल एक समूह के रूप में पहचानेगा। इसी समूह में कुन्दन खोई हुई रहेगी।

कुन्दन को लगा, वह किसी इम्तहान में बैठने आई है। भीमा को वैसा भोंडा नृत्य करते देख कर भी यदि कुन्दन विचलित न हुई, तो इस इम्तहान में पास हो जाएगी वह। सिद्ध हो जाएगा—कुन्दन हमेशा के लिए भीमा से टूट गई, अलग हो गई।

भीमा जब नाच रहा होगा, लोग जरूर सीटियां बजाएँगे। एकाध सीटी कुन्दन भी दे मारेगी।

कुन्दन को बिठाकर चम्पक लौट गया है। अवश्य वह भीमा को सूचना

देने गया होगा—व्यंग्य-भरी सूचना, कि कुन्दन आई है।

भीमा पर कैसी प्रतिक्रिया होगी?

ऊंह, प्रतिक्रिया भला क्या होगी! कोई प्रतिक्रिया न होगी।

'बल्कि ..मेरा तो ख्याल है,' कुन्दन ने अपने-आप से कहा, 'चम्पक भीमा को सूचना शायद दे ही नहीं। ऐसी सूचना पा कर भीमा को दुःख होगा, यह सोच कर चम्पक शायद चुप रह जाए। कार्यक्रम के ऐन पहले यह भीमा को भला क्यों दुःखी करना चाहेगा?'

कार्यक्रम शुरू हुआ। वास्तव में अनोखा कार्यक्रम। अनेक फिल्मी और ग़ैर-फिल्मी हस्तियाँ, जिनकी केवल तसवीरें ही कुन्दन ने देखी थीं, आज न केवल उसकी आँखों के सामने थीं—बल्कि ऐसे-ऐसे विचित्र रूपों में सामने थीं कि किसी को भी दाँतों-तले उँगली दबा लेनी पड़े।

और फिर—

ऐलान—

भीमा के मंच पर अवतरण का।

भीमा आया। झुक-झुक कर उसने दर्शकों को सलाम किया। पूरा रैड-इण्डियन लग रहा था वह...डरावना किन्तु हास्यास्पद। जरा-जरा से कपड़े। अटपटे अस्त्र-शस्त्र। विचित्र हाव-भाव। आँखें मटकाना। कूल्हे हिलाना। कमर को निहायत भोंडे ढंग से झटके देना। कुन्दन के रोम काँप गए। नहीं...इस इम्तहान में पास होना कुन्दन के लिए मम्भव नहीं। वह विचलित होने लगी थी। आँखें मूँद लेना चाहती थी वह, मगर—

चाहा हुआ सब-कुछ हो जाता हो, तब कहना ही क्या! मनुष्य का जीवन इतना दुखदायी बने ही कैसे!

न चाहकर भी वह आँखें खोले हुए थी। देख रही थी—भीमा का इठलाना, उछलना, किलकारी मारना।

संगीत कुन्दन के कानों में चुभता आ रहा था...

झन-झन...झप्पाक...हीं-हीं ..यू-यू...ऊं-हूं...

भीमा ने कुन्दन को देख तो नहीं लिया न?

कुन्दन चाहती थी, धरती फट जाए और वह उसमें समा जाए।

नाचता भीमा, सम्पूर्ण दर्शक-समूह पर, मुस्करा-मुस्करा कर नज़र

र रहा था। क्या कुन्दन इस दर्शक-समूह में खोई हुई रह सकेगी? क्या
ीमा उसे अलग से नहीं पहचानेगा? क्या कुन्दन के आगमन की सूचना
चम्पक ने भीमा से छिपा कर ही रखी है? कुन्दन का दिमाग़ साँय-साँय
करने लगा था।

और तब—

भीमा की नज़र, कुन्दन पर, अचानक पड़ी।

वह क्षण भयंकर था। भीमा की तमाम थिरकन वर्फ़ की तरह जमी
रह गई। उसकी आँखों में जो पथरीलापन अकस्मात् पैदा हुआ, क्या वह
विस्मय के कारण था? या अविश्वास के कारण? दुःख के कारण?

कारण चाहे जो रहा हो, उसकी आँखें कुन्दन पर ऐसी ठहर गईं कि
कुन्दन को लगा, उन निगाहों की अग्नि अभी उसे पिघला कर वहा देगी।
इसी कुर्सी में वैठी-वैठी, इतने-इतने दर्शकों के ऐन सामने, कुन्दन किसी
मोम की गुड़िया की तरह पिघल कर वहना शुरू कर देगी...साँसें थमी रह
गईं थीं कुन्दन की।

नाचते भीमा की उस क्षणिक स्थिरता को दर्शकों ने नृत्य की ही ए
मुद्रा समझ लिया था। लोगों ने उस मुद्रा को वेतहाशा पसन्द किया। सीटि
वजने लगीं। कुन्दन की वग़ल में वैठी हुई एक औरत वुदवुदा उठी, 'ग़ज
है! न जाने कितनी वार रिहर्सल किया होगा...!"

न केवल सीटियाँ वज रही थीं, लोग 'हाय, हाय', 'मार डाला', '
रे' आदि आवाज़ें भी कस रहे थे।

उन आवाज़ों ने भीमा को जैसे अचानक चैतन्य कर दिया।

उसने नए जोश से नाचना शुरू किया।

अव वह दर्शकों के सामने नहीं, दर्शकों की व्यक्तित्वहीन भीड़ के
नहीं, वल्कि कुन्दन के सामने नाच रहा था। कुन्दन क्या देखने आई
का नृत्य अथवा भीमा की औक़ात? यह नृत्य, भीमा की औक़ा
प्रतीक वन गया है न? ठीक है। भीमा झूम-झूम कर नाचेगा, त
की औक़ात की वावत कुन्दन को किसी तरह का सन्देह न रहे।

वह ऐसा नाचा, ऐसा नाचा कि दर्शक तौवा कर गए।

भीमा हाँफने लगा था।

उसके नृत्य का समय पूरा हो चुका था, लेकिन वह मंच से हटने का नाम नहीं ले रहा था। ज्यों-ज्यों समय बीता उसका नृत्य और-और ऊँचे चरम की ओर बढ़ता गया। हर क्षण लगता, भीमा ने मंच पर जो तूफान बरपा कर दिया है, वह इतना तेज है कि उससे ज्यादा तेज तूफान और भला हो ही क्या सकता है, किन्तु अगले ही क्षण भीमा उस तूफान को और भी तेज कर देता...लगा, जैसे भीमा का एक-एक अंग टूट कर अलग हो जाना चाहता है। एक भीमा अनेक भीमाओं में बिखर जाना चाहता है, ताकि जो दर्शक केवल एक भीमा का नृत्य देखकर इतने गद्‌गद् हो रहे हैं, अनेक भीमाओं का नृत्य देखकर पागलपन की सीमा तक गद्‌गद् हो जाएँ...।

कार्यक्रम के आयोजकों ने आखिर परदा गिरा ही दिया। गिरे हुए पर्दे के पीछे भी भीमा नाचता ही रहा होगा, जब तक कर्मचारियों ने दौड़कर थाम नहीं लिया होगा।

तालियाँ...तालियाँ...'वन्सभोर' की आवाजें...गड़गड़ाहट...!

कुन्दन होश में आई।

सब तालियाँ बजा रहे हैं—सारे दर्शक। कुन्दन ने स्वयं को दर्शकों में से ही एक समझा है न? जो दर्शक कर रहे हैं, वही कुन्दन को भी करना चाहिए। खूब तालियाँ बजाए कुन्दन। वाह-वाह करे। हँस-हँसकर लोट-पोट हो जाए। किन्तु वह हिल भी नहीं पा रही थी...।

कार्यक्रम अब थोड़ा-सा ही शेष था। कुन्दन बैठी रही—जड़वत्। शेष में क्या-क्या दिखाया गया, किन-किन हस्तियों को पेश किया गया—कुन्दन की समझ में कुछ न आया। देखकर भी वह कुछ नहीं देख रही थी। समझ कर भी कुछ नहीं समझ रही थी, उसे नहीं मालूम था, वह साँसें भी ले रही है या नहीं।

२०

बम्बई में जितने भी प्रमुख अखबार थे, सब के नगर-प्रतिनिधि उस

कार्यक्रम में आमन्त्रित थे। अगली सुबह हर अखबार में कार्यक्रम की भूरि-भूरि प्रशंसा छपी। भीमा के नृत्य को सर्वाधिक पसन्द किया गया था।

कुन्दन ने ये समाचार पढ़े। दहल गई वह। भीमा की सर्वाधिक प्रशंसा? अथवा भीमा के पतन का सर्वाधिक प्रचार? ज़िम्मेदारी किसकी? क्या कुन्दन की नहीं? यदि उसने अपना धन प्रस्तुत किया होता...देर-सवेर, भीमा की नौकरी कहीं-न-कहीं लग ही जाती। थोड़े-थोड़े कर उन रुपयों की वापसी हो जाती। भीमा जैसा आदमी उस रक़म को दबाकर बैठ थोड़े जाता। कुन्दन ही साहस न कर सकी। साहस करने का निर्णय न ले सकी कुन्दन...।

अगले दिन एक ऐसा समाचार छपा, जिसने कुन्दन की दशा और बुरी कर दी। वह अद्‌भुत कार्यक्रम—वही कार्यक्रम—फिर से आयोजित हो रहा था!

उक्त पूंजीपति के लिए, सम्पूर्ण कार्यक्रम का आयोजन, जिस संस्था की ओर से किया गया था, उसे नाम दिया गया था—'रंगायन'। अखबारों के नगर-प्रतिनिधियों ने 'रंगायन' से आग्रह किया था कि उतने अद्‌भुत कार्यक्रम से आम जनता को वंचित न रखा जाए। पहला आयोजन भले ही केवल आमन्त्रित व्यक्तियों के लिए था, किन्तु जनता को क्यों वंचित रखा जाए? पहला आयोजन टिकट खरीद कर देखा नहीं जा सकता था। जिन्होंने भी देखा, आमन्त्रण पाकर, नि:शुल्क देखा—किन्तु उसी कार्यक्रम को दूसरी-तीसरी बार, ज़रूरत हो तो अनेक बार, आयोजित किया जाना चाहिए। इस बार टिकट खरीद कर देखने की सुविधा हो, ताकि जनता भी खुश हो सके।

यानी—भीमा फिर नाचेगा।

बार-बार नाचेगा।

'रंगायन' ने कार्यक्रम को आम जनता के लिए भी उपलब्ध करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया था। तिथि की घोषणा शीघ्र होने वाली थी...।

कुन्दन भीमा को रोकेगी।

एक बार जो हुआ, सो हुआ। बार-बार वही होता जाए, कुन्दन कैसे सहन कर सकती है? भीमा के जीवन को एक ग़लत दिशा में मुड़ने नहीं

देगी वह। भीमा की नियति क्या यही है कि वह केवल विदूषक बन कर रह जाए? नहीं, नहीं, कुन्दन के रहते ऐसा नहीं हो सकता।

अब तो.. पाँच हजार की रकम वाला बन्धन भी नहीं। भीमा को रकम मिल चुकी होगी। भीमा से चम्पक को और चम्पक से मौसी को मिल चुकी होगी।

लेकिन भीमा फिर से नाचेगा। कुन्दन अनुमान लगा सकती थी—जरूर वह फिर से नाचेगा। धन के लिए...धन कमाना जाएगा वह...कुछ ऐसे वहशीपन के साथ, गोया दुनिया में धन ही सब-कुछ हो।

क्या दुनिया में धन ही सब-कुछ होता है?

कुन्दन ने अपने संचित धन पर कुहनी इसी तरह मारी थी, मानो दुनिया की सबसे बड़ी शक्ति धन में ही समाई हो।

फिर से कुन्दन घोर पश्चाताप से भर उठी।

क्या करे कुन्दन? इस पश्चाताप की अग्नि से कैसे छूटे?

'समय बड़ा बलवान होता है,' वह स्वयं को समझाने का प्रयास कर रही थी, 'घाव अभी हरा है न! इसीलिए इतनी तड़पन महसूस हो रही है। समय बीतेगा। घाव भर जाएगा। भीमा अपनी राह। कुन्दन अपनी राह। भीमा की याद भी नहीं आएगी। क्यों, कुन्दन, यही होगा न? यही होना चाहिए न?'

लेकिन बलवान समय भी, बीतने के लिए, कितना अधिक समय लिया करता है! ठीक है, कभी-कभी समय ऐसा जादू की तरह बीत जाता है कि पता ही न चले; लेकिन वही समय जब बीतने में नहीं आता? कैसा एक-एक पल पहाड़ की तरह गुजरता है।

क्षण-क्षण पहाड़ की तरह नहीं, युग की तरह बीत रहा था।

नहीं, समय के बीतने का इंतज़ार इस तरह नहीं किया जा सकता। इस तरह तो यह कभी बीतेगा ही नहीं। कुन्दन दीवानी हो जाएगी। कुन्दन को कुछ करना चाहिए। अभी भी देर नहीं हुई...लेकिन यदि कुन्दन ने अब भी कुछ न किया, तो फिर...तब तो...निश्चित ही हमेशा-हमेशा के लिए देरी हो चुकी होगी।

कुन्दन की झुंझलाहट की सीमा नहीं थी। आखिर क्यों वह कोई निर्णय

सही समय पर नहीं ले पाती ? क्यों हमेशा देर हो जाती है उससे ?

भीमा ने अपनी 'औक़ात' सिद्ध करने के लिए वैसा नृत्य किया। भीमा ने कुछ किया तो सही ! सही या ग़लत, कुछ तो किया...मगर कुन्दन कुछ भी नहीं कर रही। हाथ पर हाथ धरे बैठी है। सब-कुछ भाग्य के भरोसे छोड़ दिया है उसने। जो होता है, होता जाए। कुन्दन का काम है केवल देखते जाना...लेकिन क्या यही सच्चा मानव-धर्म है ?

भीमा ने मानव-धर्म निवाहा। अपने दोस्त के—चम्पक के—उद्धार के लिए वह नाचा।

कुन्दन ने क्या निबाहा ? जो और जितना कुन्दन ने निबाहा, क्या वही और केवल उतना ही मानव-धर्म था ?

'कहाँ मैं धर्म-अधर्म पर सोचने लगी !' कुन्दन ने अपने सिर को झटका दिया, 'मैं तो धर्म और ईश्वर पर विश्वास नहीं रखती...केवल प्रयास पर, मनुष्य के प्रयास पर विश्वास रखती हूँ।'

लेकिन यह विचार, स्वयं कुन्दन को ही चिढ़ाने लगा। प्रयास ! कुन्दन ने क्या प्रयास किया ?

न किया न सही...लेकिन क्या अब भी न करे ?

उसी शाम कुन्दन ने पाया, वह भीमा के गेस्ट-हाउस के सामने खड़ी है। प्रवेश करने से पहले उसने भयंकर संकोच अनुभव किया, लेकिन अब वापस मुड़ने का सवाल नहीं था। वह भीतर गई। पहुँची भीमा के दरवाज़े के सामने। खटखटाया। भीमा मौजूद था।

दरवाज़ा खुलते ही दोनों की निगाहें मिलीं।

और वे देखते रह गए। कुछ ऐसे, मानो एक-दूसरे को पहली बार देख रहे हों।

एक पल...दो पल...उन्हें नमस्कार करने का भी होश नहीं था।

होश नहीं ? या ज़रूरत नहीं ? नमस्कार करना क्या केवल औपचारिकता नहीं है ? जो बहुत अपने होते हैं, क्या वे हर मुलाक़ात में एक-दूसरे को नमस्कार किया करते हैं ?

"भीतर आने के लिए भी नहीं कहेंगे ?" मौन आखिर कुन्दन ने तोड़ा।

भीमा बोला कुछ नहीं। दरवाज़े के सामने से हट गया। कुन्दन भीतर आई। जो कुर्सी सामने दिखाई पड़ी, उसी पर बैठ गई। भीमा वहीं न बैठा। खड़ा रहा।

"बैठिए न, वरना मैं भी खड़ी हो जाऊँगी। तब उसका अर्थ होगा कि आप मुझे तुरन्त चली जाने के लिए कह रहे हैं।" कुन्दन गंभीरता से बोली।

भीमा, सावधान मुद्रा में, पलंग के किनारे बैठा, "क्यों आई हैं आप ?"

"मिलने।"

"पिछली बार आपने कहा था, 'जाने के लिए नहीं आई हूँ। आने के लिए आई हूँ।' लेकिन आप चली गई। चली गई या नहीं ?"

"लेकिन फिर से आई हूँ या नहीं ?"

"फिर से पूछ रहा हूँ—क्यों आई हैं ?"

"आप बताइए, आपको क्या लगता है, क्यों आई हूँ ?" कुन्दन मुस्कराई नहीं।

"नहीं मालूम।"

"मैं रोकने आई हूँ।"

"किसे ?"

"आपको।"

"क्यों ?"

"क्यों न रोकूँ ? एक बार न रोक पाई, न सही—उसी भूल को इस बार दोहराऊँगी नहीं।"

"रोकने आई हैं ? किस सिलसिले में ?" भीमा ने इस तरह कहा, गोया उसे कुछ मालूम ही न हो।

"आप दूसरी बार रेड-इंडियन बनेंगे ?"

"क्या हर्ज है ? आपको क्या फर्क पड़ेगा ?"

"कुछ-न-कुछ तो पड़ेगा ही। कितना पड़ेगा, अभी से हिसाब नहीं लगा सकती।"

भीमा का स्वर अचानक ही तीखा हो आया, "आपको फ़र्क पड़ता है या नहीं, इससे मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता।"

"वाक़ई ?"

"हाँ ।"

"आपको झूठ बोलना नहीं आता, भीमा जी !"

भीमा चुप रहा ।

फिर से उनकी आँखों में एक ललक, एक खोज पैदा हो गई थी । एक-दूसरे की आँखों में एक-दूसरे को खोजने लगे थे, लेकिन उन्हीं को नहीं मालूम था—साफ़-साफ़ नहीं मालूम था—वे किसे खोज रहे हैं, क्यों खोज रहे हैं ।

भीमा ने गहरी साँस ली, "अखबारों में आपने पढ़ा होगा, वह कार्यक्रम फिर से आयोजित हो रहा है । शायद कई बार आयोजित हो । अब तो सारा मामला टिकटों की बिक्री पर आधारित है । यदि 'शो' जनता ने पसन्द किया, तो..."

"आप बार-बार नाचेंगे ?"

"हाँ ।"

"मैं ऐसा नहीं होने दूंगी ।"

"लेकिन मुझे धन चाहिए ।"

"धन किसे नहीं चाहिए ? इसका मतलब यह तो नहीं कि दुनिया का हर आदमी बिक जाए ?"

"बिका हुआ कौन नहीं है ?"

"मैं आपको नहीं बिकने दूंगी ।"

"गुलामों की बिक्री केवल एक बार होती है । बाद की बिक्रियाँ उस पहली बिक्री का ही दोहराव...।"

"सौ बात की एक बात । मैं आपको उस कार्यक्रम में नहीं जाने दूँगी ।"

कुन्दन ने जल्दी से कहा, "चम्पक जी को आपने मुसीबत से उबार है । इतना बहुत है । फिर से क्यों उसी शिकंजे में...?"

"हर इंसान को अपना-अपना धन्धा चुनने का हक़ होता है ।"

"लेकिन दूसरों के हक़ छीनने का हक़ किसी को नहीं होता ।"

"मैं समझा नहीं ।"

"मुझे आपको रोकने का हक़ है ।"

भीमा फिर से चुप रह गया। कैसे कह दे कि नहीं, कुन्दन, तुम्हें ऐसा कोई हक नहीं ?

"मैं अपने इस हक की रक्षा करूँगी।"

"लेकिन तुम मुझे कैसे रोकोगी ? आखिर कैसे ?" भीमा को पता न चला, भावावेश में कब वह 'आप' से 'तुम' पर आ गया। 'तुम' एक अत्यन्त सहज सम्बोधन था, जिसके अचानक उदित होने का पता कुन्दन को भी न चला।

"कैसे रोकूँगी ?" कुन्दन मुस्कराई, "हाथ जोड़ूँगी, गिड़गिड़ाऊँगी, मनाऊँगी। इससे भी अगर न माने, तो रास्ते में लेट जाऊँगी।"

भीमा को जोर से हँसी आ गई, "तुम जैसी नाजुक युवती मुझ जैसे पहाड़ को रोकने की सोचे...वाह भई वाह !"

"जो होगा, सब देखेंगे।"

"अच्छा, ठीक है, मैं जाऊँगा। तुम रोकना।"

"मर जाऊँगी। जाने न दूँगी।" कुन्दन ने अचानक ही उठ पड़ते हुए कहा। ये शब्द ऐसे थे, जो उसके मुँह से अनायास फूटे थे। उन्हें बोलने की कोई पूर्व-निश्चित योजना नहीं थी। उन शब्दों ने स्वयं कुन्दन को ही चकित-सा किया। भीमा भी अचकचा गया, किन्तु...क्षण-दो-क्षण में ही कुन्दन के उस भावावेश को, उन दोनों ने ही, सहजता से स्वीकार कर लिया।

भीमा बोला, "कुन्दन...तुम से रिश्ता टूट जाएगा, इसका भय अब नहीं रहा। रिश्ता तो, मेरी ओर से, टूट ही चुका है। तुम जोड़ने आई हो। कह नहीं सकता, तुम क्यों ऐसा चाहती हो, लेकिन...जानती हो, इसका. . ऐसी बातों का...अर्थ क्या होता है ?"

भीमा के स्वर में जो अकुलाहट थी, जो सिहरन थी, उसका अर्थ कोई भी समझ सकता था।

कुन्दन थर्राकर बोली, "हर बात कहने के लिए नहीं होती। कह न दीजिएगा, वह न दीजिएगा...।"

और वह कमरे से बाहर निकल चुकी थी।

भीमा ने उसे रोकने का प्रयास न किया।

•

कुन्दन ने वही किया, जो उसने कहा था।

कार्यक्रम के दूसरी बार आयोजित होने की तिथि घोषित हो चुकी थी। 'रंगायन' की कार भीमा को लेने आई हुई थी। कुन्दन रास्ता रोककर खड़ी थी। भावनाओं और घटनाओं का वह तमाम संघर्ष, जो कभी बन्द दीवारों के बीच क़ैद रहा था, उस क्षण खुली सड़क पर आ गया था।

चम्पक और देशराज कार में बैठ चुके थे। ड्राइवर ने इंजन चालू कर रखा था। सामने कुन्दन अड़ी हुई थी। सूटेड-बूटेड भीमा, कार के खुले दरवाज़े के पास, सड़क पर खड़ा घूर रहा था उसे।

"हटो, कुन्दन !" भीमा ने काँपते स्वर में कहा।

"ड्राइवर से कहो, कुचलता हुआ निकल जाए।" कुन्दन की आँखों में ऐसी चमक थी कि भीमा को लगा, ऐसी चमक तो केवल उन्मादित लोगों की आँखों में ही हो सकती है। कुन्दन उसे रोकने के लिए सचमुच उन्मादित हो उठी थी।

"मुझे जाना है, कुन्दन ! मुझे ड्रेस बदलनी है, मेकअप करना है। जाने दो। मेरे लिए तुमने अब तक जो किया, वह ज़रूरत-से-ज़्यादा ही है। उतनी अनुकम्पा के योग्य मैं नहीं। अब और शर्मिन्दा न करो।"

"मैं नहीं जाने दूँगी," कुन्दन ने दोहराया।

"मैं तुम्हें उठाकर फेंक दूँगा," भीमा हँसकर बोला—कुछ ऐसे, मानो किसी बच्चे को धमका कर समझाना चाहता हो।

"फेंक सकोगे ?" कुन्दन ने चुनौती दी।

—और विस्फोट हो गया।

किसी शक्तिशाली पशु की तरह भीमा आगे बढ़ आया। "मुझे नहीं चाहिए यह नाता...मैं इसके लायक़ नहीं।" इन शब्दों के साथ उसने कुन्दन का हाथ पकड़ लिया और इतने ज़ोर से झटका दिया कि कुन्दन किसी खिलौने की तरह सड़क पर लुढ़क गई।

भीमा मुड़कर 'रंगायन' की कार में बैठने ही वाला था कि—

सड़क पर ज़ोर से ब्रेक लगने और टायरों के रिरियाने की आवाज़ ने उसे चौंका दिया। पलट कर देखा उसने—और जो उसने देखा, उस पर

विश्राम ही न हुआ।

लुढ़कती कुन्दन एक झपटती कार के नीचे दबने ही वाली थी।

कार वाला, दुर्घटना को बचाने के लिए, पूरी कोशिश में था। पूरी शक्ति से ब्रेक लगाया था उसने, किन्तु...।

भीमा ने अपनी आँखों से देखा—

कार कुन्दन से टकरा चुकी थी। कुन्दन दूसरी ओर उछल गई। सड़क पर वह ऐसी गिरी कि हिल भी न सकी।

"कुन्दन. .!" भीमा ने हृदय-विदारक चीत्कार किया। सब-कुछ भूल कर वह कुन्दन की ओर दौड़ पड़ा।

कुन्दन कराह रही थी। उसका सर फट गया था...खून...खून...

"कुन्दन...कुन्दन...!" भीमा ने उसे अपनी गोद में खींच लिया।

कुन्दन ने कराह कर आँखें खोलीं।

टक्कर मारने वाली कार रुक चुकी थी। उसका ड्राइवर बाहर निकल कर, दौड़ता हुआ करीब आ रहा था। 'रंगमहल' की कार का ड्राइवर भी बाहर निकला और दौड़ा।

कुन्दन की खुली हुई आँखें फिर से बन्द हो जाने लगीं। अपनी बेहोशी में वह किसी तरह चैन नहीं पा रही थी।

फिर भी, किसी तरह, भीमा की आँखों में आँखें डाल कर बोली, 'मेरे साथ अस्पताल नहीं चलोगे, तो ..तो मैं..."

वाक्य वह पूरा न कर सकी। बेहोशी ने उसे अपने आलिंगन में खींच लिया था।

कुन्दन के सर से बहते खून ने भीमा के हाथ रंग दिए थे।

भीमा थरथर काँप रहा था। "यह क्या हो गया ..?" उसके मुँह से यही बुदबुदाहट फूट सकी।

•

अस्पताल में कुन्दन ने जब आँखें खोलीं, सबसे पहले उसे भीमा का ही चेहरा दिखाई दिया। वह मुस्कराई, "तुम...तुम मेरे पास हो न? मुझे मालूम था...मुझे मालूम था ..!"

भीमा ने उसके होंठों पर हथेली रख दी, "बोलो नहीं...!"

होठों पर रखी हथेली को कुन्दन ने पकड़ लिया; अपने होठों पर और ज़्यादा दबा दिया। परम-सन्तोष से कुन्दन की आँखें मुंद गईं।

कोशिश करके उसने आँखें खोलीं। चारों ओर देखा। अस्पताल का साफ़-सुथरा कमरा...सफ़ेद...।

कमरे में उस वक़्त वे दो ही थे। कुन्दन और भीमा। नर्स नहीं। डाक्टर नहीं। केवल वे दो।

भीमा ने कुन्दन के हाथों में थमी अपनी हथेली धीमे से खींच लेते हुए कहा, "नर्स को बुला लाऊँ।"

"नहीं। उससे पहले...।" कुन्दन आगे न बोल सकी। सर पर बँधी पट्टियों के नीचे अचानक ऐसी टीस उठी कि शब्द घुट गए। उसने पट्टियों पर हाथ फेर कर देखा। भीमा शर्म से नीचे देखने लगा। भीमा के कारण ही तो वह दुर्घटना...लेकिन भीमा क्या करे? उसने सोचा थोड़े था कि...

"मुझे...माफ़ कर दोगी न?" भीमा ने सिहर कर पूछा।

"नहीं।" कुन्दन हँसी

भीमा ने चौंक कर देखा उसकी ओर। किसी तरह पूछा, "क्यों?"

"माफ़ी माँग कर ही तुमने इतना बड़ा अपराध किया है कि..."

"कुन्दन...!" भीमा का गला भर आया।

"सुनो, ज़रा नज़दीक आओ...।"

"क्या, कुन्दन?"

"कब से बैठे हो मेरे पास?" कुन्दन ने पूछा।

भीमा तड़प गया, "तुम क्या सोचती हो? क्या मैं उस कार्यक्रम में नाचने के बाद वापस आया हूँ? यहाँ मैं शुरू से ही बैठा हूँ।"

"शुरू से यानी?" कुन्दन ने पूछा।

भीमा ने कहा, "जब से दुनिया शुरू हुई।"

वे चुप हो गए। उनकी नई दुनिया शुरू हो रही थी। दुनिया शुरू होते समय हमेशा ख़ामोशी ही छाई रहती होगी—उस शुरूआत की पवित्रता की रक्षा के लिए।

"कुन्दन...!" भीमा ने लरज़ते स्वर में कहा, "मुझे अभी भी निश्चित

रूप से नहीं मालूम, तुम्हारे दिल में क्या है, लेकिन...जो मेरे दिल में है, बताए बिना आज न रह सकूँगा। मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकूँगा, कुन्दन ! तुम्हारे साथ अपने रिश्ते को नकारने का मैंने भरसक प्रयास किया है। तुम्हें धक्का देकर रास्ते से हटा देना—यह भी इसी प्रयास का हिस्सा था...लेकिन लगता नहीं कि ऐसे प्रयास में मैं कभी सफल हो सकूँगा। सच कहता हूँ, कुन्दन, तुम्हारे बिना मैं नहीं जी सकूँगा। तुम इतनी अच्छी हो, इतनी अच्छी हो कि...।"

शब्द रुँध गए।

कुन्दन ने सिहर कर आँखें मूँद लीं, "मैंने जवाब पा लिया।"

"जवाब ?"

"हाँ, एक ऐसा जवाब, जिसकी तलाश में मैं बेहद परेशान थी।"

"और, तब, अचानक कुन्दन को अपनी माँ की याद आई। झट से बोली, "माँ को खबर करनी होगी। मैं अस्पताल में हूँ और उन्हें पता ही नहीं। मेरी राह देख-देख कर वह. .।"

"तुम्हारे पर्स में से तुम्हारे घर का पता हमें मिल गया था।" भीमा ने कहा, "चम्पक रवाना हो चुका है। माँ को साथ लेकर ही आएगा। पहुँचता होगा।"

माँ जब आईं, वह अकेली नहीं थीं। सुरेश जी भी साथ थे।

कमरे में प्रवेश के साथ ही माँ के आँसू फूट पड़े, "यह क्या हुआ, बेटी ? कैसे हुआ ?"

"घबराओ नहीं, मामूली चोट है। ठीक हो जाएगी।" कुन्दन प्रकट में बोली। फिर मन-ही-मन कहा, 'इस चोट के ही कारण मुझे वह मिल सका है, जो वैसे मिल ही नहीं सकता था।'

कुन्दन की आँखें सुरेश जी की ओर घूमीं। नज़र मिलते ही वह बोले, "दुर्घटना की खबर जब आई, तो संयोगवश मैं आपके घर पर ही था।"

कुन्दन मुस्कराई, "लेकिन आपको अस्पताल आना पड़ा।"

"तो क्या हुआ ! अब आप जल्दी से ठीक हो जाइए।" सुरेश जी ने उत्तर दिया।

"आपका व्यवहार, मेरे प्रति, बहुत ही सन्तुलित और शालीन रहा

होठों पर रखी हथेली को कुन्दन ने पकड़ लिया; अपने होठों पर और ज़्यादा दबा दिया। परम सन्तोष से कुन्दन की आँखें मुंद गई।

कोशिश करके उसने आँखें खोलीं। चारों ओर देखा। अस्पताल व साफ़-सुथरा कमरा...सफ़ेद...।

कमरे में उस वक़्त वे दो ही थे। कुन्दन और भीमा। नर्स नहीं। डाक्टर नहीं। केवल वे दो।

भीमा ने कुन्दन के हाथों में थमी अपनी हथेली धीमे से खींच लेते हुए कहा, "नर्स को बुला लाऊँ।"

"नहीं। उससे पहले...।" कुन्दन आगे न बोल सकी। सर पर बँधी पट्टियों के नीचे अचानक ऐसी टीस उठी कि शब्द घुट गए। उसने पट्टियों पर हाथ फेर कर देखा। भीमा शर्म से नीचे देखने लगा। भीमा के कारण ही तो वह दुर्घटना...लेकिन भीमा क्या करे? उसने सोचा थोड़ा था कि...

"मुझे...माफ़ कर दोगी न?" भीमा ने सिहर कर पूछा।

"नहीं।" कुन्दन हँसी

भीमा ने चौंक कर देखा उसकी ओर। किसी तरह पूछा, "क्यों?"

"माफ़ी माँग कर ही तुमने इतना बड़ा अपराध किया है कि..."

"कुन्दन...!" भीमा का गला भर आया।

"सुनो, ज़रा नज़दीक आओ...।"

"क्या, कुन्दन?"

"कब से बैठे हो मेरे पास?" कुन्दन ने पूछा।

भीमा तड़प गया, "तुम क्या सोचती हो? क्या मैं उस काय नाचने के बाद वापस आया हूँ? यहाँ मैं शुरू से ही बैठा हूँ।"

"शुरू से यानी?" कुन्दन ने पूछा।

भीमा ने कहा, "जब से दुनिया शुरू हुई।"

वे चुप हो गए। उनकी नई दुनिया शुरू हो रही थी। दु होते समय हमेशा खामोशी ही छाई रहती होगी—उस शुरुआत तता की रक्षा के लिए।

"कुन्दन...!" भीमा ने लरज़ते स्वर में कहा, "मुझे अभी

रूप में नहीं मालूम, तुम्हारे दिल में क्या है, लेकिन...जो मेरे दिल में है, बताए बिना आज न रह सकूंगा। मैं तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकूंगा, कुन्दन ! तुम्हारे साथ अपने रिश्ते को नकारने का मैंने भरसक प्रयास किया है। तुम्हें धक्का देकर रास्ते से हटा देना—यह भी उसी प्रयास का हिस्सा था...लेकिन लगता नहीं कि ऐसे प्रयास में मैं कभी सफल हो सकूंगा। सच कहता हूँ, कुन्दन, तुम्हारे बिना मैं नहीं जी सकूंगा। तुम इतनी अच्छी हो, इतनी अच्छी हो कि...।"

शब्द रुँध गए।

कुन्दन ने सिहर कर आँखें मूंद लीं, "मैंने जवाब पा लिया।"

"जवाब ?"

"हाँ, एक ऐसा जवाब, जिसकी तलाश में मैं बेहद परेशान थी।"

"और, तब, अचानक कुन्दन को अपनी माँ की याद आई। झट से बोली, "माँ को खबर करनी होगी। मैं अस्पताल में हूँ और उन्हें पता ही नहीं। मेरी राह देख-देख कर वह...।"

"तुम्हारे पर्स में से तुम्हारे घर का पता हमें मिल गया था।" भीमा ने कहा, "चम्पक रवाना हो चुका है। माँ को साथ लेकर ही आएगा। पहुँचना होगा।"

माँ जब आई, वह अकेली नहीं थी। सुरेश जी भी साथ थे।

कमरे में प्रवेश के साथ ही माँ के आँसू फूट पड़े, "यह क्या हुआ, बेटी ? कैसे हुआ ?"

"घबराओ नहीं, मामूली चोट है। ठीक हो जाएगी।" कुन्दन प्रकट में बोली। फिर मन-ही-मन कहा, 'इस चोट के ही कारण मुझे वह मिल सका है, जो वैसे मिल ही नहीं सकता था।'

कुन्दन की आँखें सुरेश जी की ओर घूमीं। नजर मिलते ही वह बोले, "दुर्घटना की खबर जब आई, तो संयोगवश मैं आपके घर पर ही था।"

कुन्दन मुस्कराई, "लेकिन आपको अस्पताल आना पड़ा।"

"तो क्या हुआ ! अब आप जल्दी से ठीक हो जाइए।" सुरेश जी ने उत्तर दिया।

"आपका व्यवहार, मेरे प्रति, बहुत ही सन्तुलित और शालीन रहा

है।" कुन्दन बोली, "आप...मेरा जवाब पाने को उत्सुक होंगे। है न ?"

"जवाब इसी वक़्त देना ज़रूरी नहीं।" सुरेश जी असहज होते हुए जल्दी से बोले, "मैं जवाब पाने के लिए आपके घर नहीं गया था। मैं तो... मैं तो...।"

"जो भी है...जवाब पाने के लिए मेरे घर आने का अधिकार आपको था ही," कुन्दन गम्भीरता से बोली, "जवाब अब तक तो नहीं था मेरे पास, लेकिन अब है।"

"आप आराम करिए। बातें बाद में।" सुरेश जी उतने सारे लोगों की मौजूदगी में 'उस चर्चा' को छेड़ना नहीं चाहते थे।

किन्तु कुन्दन न रुकी। बोली, "सुरेश जी...आपने कहा था, यदि मैं इन्कार करती हूँ तो मुझे इन्कार का कारण भी बताना होगा। यही कहा था न आपने ?"

"प्लीज़, कुन्दन जी...!"

"इन्कार का कारण अब तक तो मेरी समझ में—ख़ुद मेरी समझ में—नहीं आया था, लेकिन...अब आ गया है। आप मुझे क्यों पाना चाहते हैं ? चुनौती में जीतने के लिए ही न ? लेकिन यदि मैं न मिलूँ ? क्या आप ज़िन्दा नहीं रहेंगे ? आप बड़ी आसानी से ज़िन्दा रह लेंगे। आप किसी और युवती को 'हाँ' कह देंगे। यही होगा न ? मेरा महत्त्व आपके लिए एक चुनौती जीतने जैसा ही है, लेकिन...इस दुनिया में ऐसा भी कोई है, जो...मेरे बिना ज़िन्दा नहीं रह सकेगा...मैं उसे ही ज़िन्दा रखना चाहूँगी...आप मुझे क्षमा करें। कर देंगे न ?"

"कुन्दन जी...क्षमा न मांगें। शर्मिन्दा न करें। मैं...मैं सदैव..." सुरेश जी को समझ में न आया, वाक्य किस तरह आगे बढ़ाएँ। इतने-इतने लोगों के सामने यों इन्कार हो जाना...उनकी अकुलाहट की सीमा नहीं थी। सहसा वह चल पड़ने को तत्पर हो गए। हड़बड़ाते हुए-से बोले, "मैं चलूँ ? आप ठीक हो जाइए। मैं आपको देखने के लिए फिर आऊँगा...।"

और...इससे पहले कि उन्हें रोका जा सकता, हाथ जोड़कर वह चल दिए थे। कुन्दन जानती थी, वह फिर नहीं आएँगे। आ नहीं सकेंगे।

"बेटी...!" माँ नजदीक आईं, "आखिर यह कैसे हुआ? मैं...जो सज्जन मुझे बुलाने के लिए आए, उनसे पूछ-पूछ कर थक गई। उन्होंने कुछ न बताया।"

सम्यक चुपके से खिसक चुका था। माँ को बुलाने गया था वह। माँ को दुर्घटना का पूरा ब्योरा देने थोड़े ही गया था।

"कुछ नहीं, माँ।" कुन्दन ने कहा, "सड़क पार कर रही थी। ध्यान नहीं रहा कि एक कार आ रही है..."

माँ बौखलाईं, "पागल हो। सुरेश जी को तुमने सबके सामने जो कह दिया...।"

"छोड़ो, माँ! कुछ मामले जितनी जल्दी निबट जाएँ, उतना अच्छा...।"

"लेकिन तुम ..लेकिन तुमने...आखिर किस व्यक्ति को चुन लिया है?" माँ ने नाराजगी से पूछा, "यह सब क्या समेला है?...कौन है, जो तुम्हारे बिना जिन्दा नहीं रह सकता? या तुमने ..केवल सुरेश जी को टालने के लिए...?"

"सुरेश जी को तो एक बार टाल भी सकती थी, लेकिन अपने-आपको कब तक टालती रहती, माँ?" कुन्दन ने कहा। उसका अर्थ पूरी तरह माँ की समझ में न आया, लेकिन माँ ने भाँप लिया—कुन्दन की निगाह, किस अर्थ के साथ, किस व्यक्ति पर, बार-बार टिक जाती है।

माँ ने पलट कर भीमा को देखा—सिर से पाँव तक।

कुन्दन ने भीमा से कहा, "यह मेरी माँ है .."—हालाँकि परिचय कराने की जरूरत नहीं थी।

भीमा ने शालीनता से हाथ जोड़ दिए।

भीमा का परिचय कुन्दन ने न दिया।

देना आवश्यक था भी तो नहीं।

माँ ने समझ लिया। बूझ लिया। भीमा को सिर से पाँव तक दूसरी बार देखा उसने। माँ के मुँह से, बस, यही निकला, "ओह...!"

लेकिन, वास्तव में, माँ कहना चाहती थी, "अरे!"

भीमा झेंप गया। नीचे देखने लगा। कुछ कहा नहीं गया था। —

ही से वह एक लम्बा-तड़ंगा आदमी था। मारे खुशी के जब वह फूला न समाया, तो यही लगा कि अस्पताल के कमरे में केवल भीमा समाया हुआ है—फूलकर, गद्‌गद होकर केवल वही भरा हुआ है। हर तरफ़...लेकिन नहीं—केवल वही क्यों ? उस तमाम कमरे में, भीमा के साथ-साथ ही एक और भी व्यक्ति समाया हुआ था—कुन्दन...!

